ISSN No. 2582-9548

nbt.india
एकः सूते सकलम्

साहित्य और संस्कृति की द्विमासिकी

पुस्तक संस्कृति

वर्ष-11 ◆ अंक-2 ◆ मार्च-अप्रैल 2026 ◆ मूल्य ₹40.00

राम संस्कृति के निहितार्थ और रामनवमी • विश्व रंगमंच, हिंदी रंगमंच तथा भारतीय रंगमंच

किताबों का जादू • विश्व-विरासत का संरक्षण पूरी मानवता का दायित्व

संबलपुर पुस्तक मेले का आयोजन

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत और जिला प्रशासन, संबलपुर के सहयोग से 24 जनवरी से 01 फरवरी, 2026 तक संबलपुर पुस्तक मेले का आयोजन किया गया, जिसका उद्घाटन माननीय केंद्रीय शिक्षा मंत्री श्री धर्मेंद्र प्रधान द्वारा किया गया। उन्होंने मेले को विचारों और चिंतनशील चर्चा का उत्सव बताया और इस बात पर जोर दिया कि पुस्तकें डिजिटल जानकारी से कहीं अधिक गहन ज्ञान प्रदान करती हैं। उन्होंने छात्रों को पढ़ने की आदत विकसित करने के लिए प्रोत्साहित किया और संबलपुर की ऐतिहासिक

विरासत को उजागर करते हुए युवा आगंतुकों से स्थानीय स्वतंत्रता संग्राम स्थलों से जुड़ने का आग्रह किया। उन्होंने कई भाषाओं में क्षेत्रीय इतिहास प्रकाशित करने के लिए एनबीटी के प्रयासों की भी सराहना की। अपने संबोधन में एनबीटी के अध्यक्ष प्रो. मिलिंद सुधाकर मराठे ने 'कुदोपली की वीरगाथा' के बहुभाषी प्रकाशन के बारे में बात की, जो ओड़िया और स्पेनिश सहित 12 भारतीय भाषाओं में उपलब्ध है। इस अवसर पर 'आनंदमठ' (ओड़िया), 'संबलपुर का इतिहास' (अंग्रेजी), 'वीर सुरेंद्र साई', 'माँ समलेश्वरी', 'संबलपुर के सबमरजाद मंदिर' (अंग्रेजी), 'सत्य नारायण भटदार ग्रंथुरा' और 'घनश्याम ग्रंथुरा' पुस्तकों का लोकार्पण किया गया। इस अवसर पर उपस्थित गणमान्य व्यक्तियों में श्री रवि नारायण नाइक, श्री सूर्यवंशी सूरज, श्री युवराज मलिक, निदेशक, एनबीटी और डॉ. मिनकेतन रक्षी, अध्यक्ष, SETU शामिल थे।

इसके पश्चात्, श्री धर्मेंद्र प्रधान ने बाल मंडप का दौरा किया और बच्चों को सम्मानित किया। बाल मंडप मेले के सबसे जीवंत स्थानों में से एक रहा, जहाँ कई दिनों तक हजारों विद्यार्थियों ने रचनात्मक और शैक्षिक

गतिविधियों में भाग लिया। यहाँ चित्रकला प्रतियोगिता, योग कार्यशालाएँ, संगीत कथा पाठ, कला एवं शिल्प कार्यशालाएँ, थिएटर कार्यशालाएँ, कठपुतली कला, प्रश्नोत्तरी एवं कथावाचन पाठ इत्यादि का आयोजन किया गया। विद्यार्थियों ने राष्ट्रीय ई-पुस्तकालय (आरईपी) पर एक संवादात्मक परिचय सत्र में भाग लिया, इसके बहुभाषी डिजिटल संग्रह का अवलोकन किया और सत्रों में भी हिस्सा लिया। साथ ही, अनेक साहित्यिक सत्र भी आयोजित किये गए, जिसमें साहित्य, इतिहास और सामाजिक चिंतन पर विचार-विमर्श किया गया। इसके अतिरिक्त, 'लेखक के साथ साक्षात्कार' शृंखला में साहित्य जगत की विख्यात हस्तियों ने रचनात्मकता, समाज में लेखक की भूमिका और सामाजिक परिवर्तन पर साहित्य के प्रभाव पर अपने विचार व्यक्त किए।

इस मेले की शामों में विविध सांस्कृतिक प्रस्तुतियाँ भी देखने को मिलीं, जिससे मेले में एक सशक्त सांस्कृतिक आयाम जुड़ गया। इस मेले में राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय प्रकाशकों के 250 से अधिक स्टॉल लगे, जिनमें बच्चों के साहित्य और कथाओं से लेकर अकादमिक, संदर्भ और प्रतियोगी परीक्षाओं की पुस्तकों तक की व्यापक श्रेणी की पुस्तकें शामिल थीं।

संबलपुर पुस्तक मेला साहित्य और समुदाय का संगम स्थल रहा, जिसमें क्षेत्रीय और देशभर के कलाकारों ने प्रस्तुतियाँ दीं। यह मेला सभी आयु वर्ग के हजारों लोगों के लिए एक उत्सव बनकर उभरा।

प्रधान संपादक

प्रो. मिलिंद सुधाकर मराठे

संपादक

दीपक कुमार गुप्ता

संपादकीय सहयोग

अल्पना भसीन, विजयलक्ष्मी पाण्डेय

विज्ञापन एवं प्रसार

जनसंपर्क अनुभाग

उत्पादन

अनुज कुमार भारती, पवन दुबे

चित्रांकन

पार्थ सेनगुप्ता

सज्जा/डिजाइन

ऋतुराज शर्मा, समरेश चटर्जी

सदस्यता शुल्क

व्यक्तियों के लिए

एक प्रति : ₹ 40.00

वार्षिक : ₹ 225.00

(शुल्क भारत के लिए मान्य)

संपादकीय पत्र-व्यवहार

संपादक

पुस्तक संस्कृति

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत

पता : 5 इंस्टीट्यूशनल एरिया,

वसंत कुंज, नई दिल्ली-110070

फोन : 011-26707876

ई-मेल: editorpustaksanskriti@gmail.com

प्रकाशक व मुद्रक अनुज कुमार भारती द्वारा नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया (राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत) 5 इंस्टीट्यूशनल एरिया, वसंत कुंज, नई दिल्ली-110070 के लिए प्रकाशित और सालासर इमेजिंग सिस्टम्स, ए-97, सेक्टर-58, नोएडा-201301 (उत्तर प्रदेश) से मुद्रित।

संपादक

दीपक कुमार गुप्ता

सर्वाधिकार सुरक्षित : प्रकाशित सामग्री के उपयोग के लिए लेखक और प्रकाशक की अनुमति आवश्यक है। प्रकाशित रचनाओं के विचार से प्रकाशक का सहमत होना आवश्यक नहीं है। राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत से संबंधित सभी विवादास्पद मामले केवल दिल्ली न्यायालय के अधीन होंगे।

ISSN NO. 2582–9548

पुस्तक संस्कृति

साहित्य एवं संस्कृति की द्विमासिकी

वर्ष-11; अंक-2; मार्च-अप्रैल, 2026

इस अंक में

संपादकीय — *प्रो. मिलिंद सुधाकर मराठे* — 2

संस्कृति — **राम संस्कृति के निहितार्थ और रामनवमी महोत्सव** *—डॉ. राजरानी शर्मा* — 3

रंगमंच — **विश्व रंगमंच, हिंदी रंगमंच तथा भारतीय रंगमंच का अर्थ** *—प्रताप सहगल* — 6

पुस्तक — **किताबों का जादू**—*डॉ. आर.डी. सैनी* — 9

कविता — **एक विस्मय की तरह खुलती है कविता**—*डॉ. ओम निश्चल* — 12

नृत्य — **देश से सात समंदर तक कथक की यात्रा**—*शशिप्रभा तिवारी* — 15

खेलकूद — **विश्व खेल-पटल पर भारत कहाँ?**—*सुशील दोशी* — 19

पर्यावरण — **जल : समग्र सृष्टि का आधार**—*डॉ. कृष्ण कुमार मिश्र* — 22

व्यक्तित्व — **राष्ट्रनायक डॉ. भीमराव आंबेडकर की सार्वकालिक प्रासंगिकता**—*प्रो. जय कौशल* — 25

विरासत — **विश्व-विरासत का संरक्षण पूरी मानवता का दायित्व** *—दीपाली वशिष्ठ* — 28

झलकियाँ — **नई दिल्ली विश्व पुस्तक मेला 2026 : चित्रों की नजर से** — 32

कला — **विश्व कला के संदर्भ में भारतीय चित्रकला : एक विहंगावलोकन**—*अनिल गोयल* — 34

विहंगावलोकन — **भारतीय रेल : भाप इंजन से बुलेट ट्रेन तक का सफर** *—विमलेश चंद्र* — 38

स्त्री-विमर्श — **विज्ञान में महिलाएँ और बालिकाएँ : समान अवसर से समृद्ध भविष्य की ओर**—*डॉ. शैलेश शुक्ला* — 42

पुस्तक समीक्षा — 45

साहित्यिक गतिविधियाँ — 57

सभ्यता के मार्ग को आलोकित करने वाली दीपमालिका होती हैं पुस्तकें

ज्ञान की अविच्छिन्न परंपरा तथा विरासत पर जिस कारण से हमें गर्व होता है उस अक्षर और शब्द का उत्सव मनाने का दिन होता है विश्व पुस्तक दिवस। हर वर्ष की तरह इस वर्ष भी 23 अप्रैल आएगा और चला जाएगा, किंतु पुस्तक पढ़ने वाले और ज्ञान की विरासत का सम्मान करने वाले समाज के लिए यह दिवस विशेष हो जाता है और यह समाज पुस्तकों एवं ज्ञान के इस संसार को और अधिक विस्तृत करने का संकल्प लेता है। वस्तुतः, यह दिवस हमें शब्दों के उस असीम संसार की याद दिलाता है, जहाँ भौगोलिक सीमाएँ धुँधली पड़ जाती हैं और विचार अमर हो जाते हैं। 'यूनेस्को' द्वारा चयनित एवं निर्धारित यह दिवस पुस्तकीय समाज को अपने ज्ञान की विरासत की सततता, अविच्छिन्नता एवं निरंतरता के लिए आवाहन करता एवं प्रेरित तथा प्रोत्साहित करता है। सभ्यता के मार्ग को आलोकित करने वाली दीपमालिका होती हैं पुस्तकें। यह वह खिड़की भी होती है, जिससे हम केवल बाह्य ही नहीं, अपने अंतर्मन को भी बेहतर रूप में देख पाते हैं। अज्ञानता के तिमिर को भेदने वाली उपकरण भी होती है पुस्तक। हम आज बेशक विज्ञान के पहिये पर सवार होकर डिजिटल युग में प्रवेश कर गए हैं और ई-पुस्तकों की दुनिया में आ गए हैं, किंतु फिर भी मुद्रित पुस्तकों का महत्व कम नहीं हुआ है। आइए, हम इस विश्व पुस्तक दिवस पर लेखक-प्रकाशक-पाठक के उस त्रि-समूह के प्रति अपना आभार प्रकट करें, जिनके कारण ही पुस्तकें हैं, पुस्तक संस्कृति है और पुस्तक समाज भी।

इस वर्ष, मार्च माह यानी चैत्र मास के शुक्ल पक्ष की नवमी तिथि को मर्यादा और चेतना का महापर्व, रामनवमी भी मनाया जा रहा है। भगवान राम भारत राष्ट्र के लिए धार्मिक से अधिक एक सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक प्रतीक हैं, व्यक्तित्व हैं, जिनका जीवन मनुष्यमात्र को धैर्य, त्याग और सत्यनिष्ठ आचरण की शिक्षा देता है। श्रीराम के बाल स्वरूप के पूजन का यह दिवस देशभर में धूमधाम से मनाया जाता है। मर्यादा पुरुषोत्तम राम आज हम सब के लिए इसलिए पूज्य एवं प्रेरक बने हुए हैं, क्योंकि उनमें मानवीय संवेदनाओं का चरम उत्कर्ष है।

अप्रैल माह में आधुनिक भारत के शिल्पकारों में से एक, महान विचारक, समाज सुधारक और संविधानविद् डॉ. भीमराव रामजी आंबेडकर का भी जन्मोत्सव मनाया जाता है। उनका संपूर्ण जीवन संघर्ष एवं संकल्प की एक अद्वितीय गाथा रहा, क्योंकि वंचित समुदाय में जन्म लेने के कारण उन्हें गंभीर सामाजिक भेदभाव का सामना पड़ा था। शायद यही कारण रहा कि जब उन्हें भारतीय संविधान के प्रारूप समिति का अध्यक्ष बनाया गया तो उन्होंने नए स्वाधीन भारत के लिए 'समता, स्वतंत्रता और बंधुत्व' के सिद्धांतों पर आधारित समाज की नींव रखी। उन्होंने दलितों, पिछड़ों और महिलाओं के अधिकारों के लिए अपना जीवन समर्पित कर दिया, ऐसा कहने में कोई अतिशयोक्ति नहीं है। उनका मानना था कि सामाजिक और आर्थिक लोकतंत्र के बिना राजनीतिक लोकतंत्र अधूरा और अर्थहीन है। उनके प्रति कृतज्ञ राष्ट्र ने यदि वर्ष 1990 में उन्हें देश के सर्वोच्च नागरिक सम्मान, 'भारत रत्न' से सम्मानित किया तो यह स्वाभाविक ही था।

'नारी, तुम केवल श्रद्धा हो,
विश्वास-रजत-नग पगतल में,
पीयूष-स्रोत-सी बहा करो,
जीवन के सुंदर समतल में।'

बेशक, जयशंकर प्रसाद की इन पंक्तियों में स्त्री के सौम्य रूप का विवरण है, किंतु आज की भारतीय नारी साहित्य, कला और संस्कृति जैसे 'सुकोमल' विषयों से इतर, विज्ञान और युद्ध क्षेत्र की भी नायिका बनकर अपनी 'कोमलांगी' के रूढ़ स्वरूप को तोड़कर पुरुष के साथ कदम-से-कदम मिलाकर अग्रिम पंक्ति में चल रही है। 08 मार्च को अंतरराष्ट्रीय महिला दिवस के रूप में मनाने की आधुनिक परंपरा बेशक संयुक्त राष्ट्र द्वारा वर्ष 1975 से प्रारंभ हुई हो, किंतु इसकी आधारशिला इस वर्ष से लगभग सात दशक पूर्व, वर्ष 1909 में, अमेरिका के न्यूयॉर्क शहर में एक समाजवादी राजनीतिक कार्यक्रम के आयोजन के रूप में रख दी गई थी। स्त्री-पुरुष समानता के अधिकार की इस लड़ाई का ही यह सुखद परिणाम है कि आज इक्कीसवीं सदी के तीसरे दशक तक हम देखते हैं कि दुनियाभर के देशों में महिलाओं ने न केवल मताधिकार प्राप्त किया, वरन् विश्व के कई देशों की वह शासनाध्यक्ष भी बनीं, एवरेस्ट की चोटी पर चढ़ीं, अंतरिक्ष में गईं, सेना के उच्चतम पदों को सुशोभित किया और न जाने कैसे-कैसे असंभव मुकाम हासिल किए। यह दिवस विश्व के विभिन्न क्षेत्रों में कार्यरत महिलाओं के प्रति सम्मान, प्रशंसा और प्रेम प्रकट करने एवं उनके प्रति आभार प्रकट करने का भी दिवस है।

(प्रो. मिलिंद सुधाकर मराठे)
प्रधान संपादक, **पुस्तक संस्कृति**

राम संस्कृति के निहितार्थ और रामनवमी महोत्सव

उत्सवप्रिय हम सनातनी जब रामनवमी का उत्सव मनाते हैं, तो मानो युगों पहले के अपने सत्य को प्रति वर्ष उसी चेतना से जीते हैं। अपने रोम-रोम में बसे राम को जगत् में एक बार पुनः प्रकट होते देख अभिभूत हो जाते हैं, भावों में बह जाते हैं, पुलक से भर जाते हैं और जीवन को अनुष्ठान-सा बनाकर उस तिथि को सत्य सनातन की साक्षी बना लेते हैं। इस धरा धाम पर सच्चिदानंद राम जब परम आह्लाद का रूप धरकर प्रकट होते हैं, तो धरा को और धरावासियों को समझ ही नहीं आता कि भावों के सात्विक पारावार को कैसे रोकें? कैसे मापें? अपनी अनुभूतियों को कैसे व्यक्त करें? संपूर्ण लोक में अखंड आलोक व्याप्त हो जाता है, कण-कण में पुलक भर जाती है। चित्त चेतना को लगता है कि आज रोमांच भी है, संतोष भी है, आश्वासन भी है और विश्वास भी है, हर्ष भी है और विमर्श भी है। सात्विक रसानुभूतियों की पावन-पावन बयार-सी बह उठी है और ये कैसा चैत्र है, जिसने चित्त को चैतन्य कर दिया है, अनुभूतियों को आनंद लोक मिला है। जन-जन में अपार आनंद की सरिता बह उठी है। जन-मन-रंजन, लोकाभिराम, रणरंगधीर, गंभीर और शक्ति, शील, सौंदर्य के आगार नील महासिंधु करुणासागर श्रीराम प्रकट हो ही गए हैं, तो अब दैहिक, दैविक और भौतिक तापों से क्या डरना! और ऐसा भी नहीं है कि ये आज ही कोई नवीन घटना घटी है... नवीन नवमी आई है, जो 'रामनवमी' है! ये तो वर्षों से चली आ रही विश्वास की वो अखंड परंपरा है, जो हर चैत्र मास के शुक्ल पक्ष की नवमी के अभिजित मुहूर्त में दिनमान के प्रखरतम होते ही दिनकरवंश के उस दिवाकर को एक बार फिर महि, महिसुर, गो और देवत्व को अभयदान देने को आश्वस्त करती है। कितना अद्भुत है ये! भाव लोक की उस क्षण की ऊर्जा को हम आज भी उसी चैतन्य भाव से अनुभव करते हैं, जैसे रघुकुलशिरोमणि श्री राम आज ही प्रकटे हैं। उत्सवप्रिय हम भारतीय अपने सनातनी सूर्य का स्वागत व्रत संकल्प, योग, यज्ञ, जप-तप और दान से करते हैं और कीर्तन-भजन, मानस पारायण तथा सोहर गायन के आनुष्ठानिक आयोजनों में खो जाते हैं। मधुमास से पुलकित धरती पावन पुलक से ऊभ-चूभ होकर मीलों लंबे सरसों के खेतों में पीतांबरी पीत चुनरिया-सी ओढ़े श्रीराम के आगमन की पलक पाँवड़े बिछाकर प्रतीक्षा कर रही है, स्वागत कर रही है। अपने युगंधर के स्वागत में जन-मन आह्लाद विभोर है। उत्सव है, महोत्सव और आनंद-सिंधु में डूबता-उतराता जनमानस है। बधाइयाँ गाई जा रही हैं, संकीर्तन हो रहे हैं। सोहर गीत गुंजायमान हो रहे हैं। मन-मंदिर

डॉ. राजरानी शर्मा

- मध्य प्रदेश में 36 वर्षों तक प्राध्यापिकीय सेवा देने के बाद लेखन कार्य में सक्रिय।
- प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में कविता, समीक्षा एवं ललित निबंधों का प्रकाशन।
- आकाशवाणी व दूरदर्शन से साक्षात्कार एवं वार्ताएँ प्रसारित।
- अनेक साहित्यिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक संस्थाओं में सक्रिय भागीदारी।
- दो काव्य-संग्रह प्रकाशित।

संपर्क : ई-मेल– rajranis@gmail.com

से लेकर राम मंदिरों के प्रांगण तक जिस अखंड उत्साह में नहा उठे हैं, वह लौकिक होते हुए भी अलौकिक है। युग-युग से रचा जाता ये जादुई आलोक हमारी चेतना को उस अनुभव, उस दिव्य ऊर्जा में सराबोर कर देता है, जो साल-दर-साल इसी तरह की संजीवनी बूटी देने का रहस्य लुटाता आया है।

रामनवमी आते ही घर-घर, आँगन-आँगन चौक पुरने लगते हैं और बंदनवारें बँधने लगती हैं। 'नौमी तिथि मधुमास पुनीता। सुकुल पच्छ अभिजित हरिप्रीता' के आते ही 'जोग लगन ग्रह बार तिथि सकल भये अनुकूल', क्योंकि राम जन्म साधारण नहीं, असाधारण सुख का मूल है, अजस्र आनंद-स्रोत है। राम हमारे जीवन-यंत्र हैं, सुख के मंत्र हैं और आनंद के तंत्र हैं। 'राम-राम' हमारे कुशल-क्षेम पूछने का अंदाज है, तो 'राम-राम' कह देने भर से हम आत्मीयता का मंत्रोच्चार करके मानवीय संबंधों को, कुल, परिवार, देश और समाज के अनुबंधों को निभाते हुए परम आनंद और आश्वस्ति का अनुभव करते हैं। सच पूछो तो राम हमारी संस्कृति के अथ भी हैं और अर्थ भी; लक्ष्य भी हैं और लक्षित भी, पथ भी हैं और पाथेय भी, गति भी हैं और गंतव्य भी। इस अनोखी 'राम संस्कृति' में दीक्षित हम राम सभ्यता को निरंतरता में अपनाते हुए जीवन के बहुआयामी निहित अर्थों को सहज प्राप्त कर लेते हैं। रामनवमी हमारे लिए पूजन, व्रत, उपवास या मात्र त्योहार नहीं, हमारे संकल्पों को पुनर्नवा कर लेने की तिथि भी है, कि हम जीवन में राम की तरह जीते हुए जगत् के संबंधों को राम की तरह ही शील, सदाचार, विनय और त्याग के मंत्रों से अभिमंत्रित करके निभाएँ। 'राम-संस्कृति' को अपनाते हुए विषम परिस्थिति में भी राम की तरह ही सोचने और कहने के अभ्यासी बन पाएँ।

'मुनिगन मिलहिं बिसेष बन सम्मत जननी तोर। तेहि मँह पितु आयसु बहुरि सबहि भाँति हित मोर' राज्याभिषेक को तैयार होते राम अकस्मात् वनगमन के समय वन के इतने लाभ एक साँस में माँ कैकेयी को बता गए, यही तो सीखना है अपने राम जी से कि कैसे नकारात्मक परिस्थितियों को सकारात्मक पहलुओं से न केवल मंडित कर दो, वरन् फलित करके भी दिखा दो। राम ने ही तो हमें त्याग की ये अनोखी रीति सिखाई है। तभी तो हम राजा राम से अधिक वनवासी राम को अपने हृदय में बसाते हैं। कैसे राम माता कैकेयी को कभी अटपटा नहीं लगने देते? कैसे एक-एक चितवन से एक-एक मुस्कान से सबके अंतस् पर संतोष के फाहे रखते चले जाते हैं? कैसे इतनी भीषण परिस्थिति में भी प्रजाजनों को वर्षभर का अन्न प्रदान करना नहीं भूलते? कैसे राजकुमार राम केवट से बड़े ही संकोच से नाव माँगते हैं? कैसे सहजता से सिया उन्हें बिना माँगे अपनी मणिजड़ित मुंदरी उतराई हेतु दे देती हैं? कैसे वनवास के पहले दिन ही राम बरगद का दूध मँगाकर अपने जटाजूट बाँध लेते हैं, क्योंकि वन में न तो केश प्रसाधन का अवसर होगा, न समय-साधन? राम की इन्हीं बातों पर तो कलेजा निकलकर हाथ में आ जाता है और आँसुओं की मुक्तामाल हर कथा-प्रसंग को भिगो जाती है। उसे हम अपने ही राम को राम के भावों को चढ़ाते जाते हैं। कैसे राम कथा गाते-गाते सहिष्णुता, विनम्रता, वीतरागता और त्याग-तपस्या और बिना साधन के जीने का आनंद प्राप्त करना हम सदियों से सीखते जाते हैं? राम को रग-रग में बसाते जाते हैं? राम के रंग में मन को रँगते जाते हैं, ये चैतन्यपूर्वक अनुभव और विश्वास करते हुए कि राम सदा हमारे अंग-संग हैं?

लोकरक्षक हैं श्री राम। जब ऋषि विश्वामित्र के साथ वे जाते हैं, तब भी ताड़का, सुबाहु आदि को समाधान देते हैं और ऋषि के यज्ञ की रक्षा करते हैं। जब 14 वर्षों के लिए सहर्ष वनगमन करते हैं, तब भी 'निसिचरहीन करौं मही भुज उठाय पन कीन्ह' करके हमें आश्वस्त करते हैं, 'मैं हूँ न! सदा तुम्हारे अंदर और बाहर के निशाचरों का अंत करता रहूँगा, तुम्हें अभय प्रदान करना ही तो मेरे अवतार का महत्वपूर्ण कार्य है।' रावण-वध तो मात्र बहाना था, वास्तव में तो राम को हमें ये सिखाना था कि कैसे बिना संसाधन के विराट सैन्य-शक्ति तैयार की जाती है, ऐसी कि शंकर जी को कहना पड़े 'राम कटक उमा मैं देखा। सो मूरख जो करन चह लेखा।' ऐसी विशाल सेना, जिसमें अठारह पद्म तो वानर सेनापति ही थे। मार्मिक और विलक्षण बात ये नहीं कि विशाल सेना है, आश्चर्य की बात तो ये है कि ये सेना आत्मीयता और मित्रता के बल पर खड़ी की है। राम एक-एक वानर रीछ की कुशल पूछते हैं, 'नाथ कटक मँह सो कपि नाहीं। राम कुसल पूछा जेहि नाहीं।' ये है हमारी अभीष्ट, हमारी प्राणों

से प्रिय 'राम संस्कृति'। राम हमें कृतज्ञता का पाठ पढ़ाते हैं। लंका-विजय के बाद इंद्र से समर में वीरगति पाए वानरों के लिए ही अमृत वर्षा कराते हैं और जब अवध लौटते हैं तो एक-एक वानर का

"अखिल लोक के नायक त्रिभुवनपति होने के उपरांत भी सीताजी को युद्ध जीतकर पुनः प्राप्त करने में पर्याप्त समय लगा और ये समय राम ने धैर्य से, सहनशीलता से व्यतीत किया। कितनी बड़ी सीख दी राम ने अपने व्यवहार से! लक्ष्मण को वर्षा ऋतु के माध्यम से नीति उपदेश देते हुए राम बारंबार कहते हैं, 'छुद्र नदी भरि चली तोराईं। जिमि थोरहि धन खल इतराईं' या 'बूँद अघात सहहिं गिरि कैसे। खल के वचन संत सहें जैसे ॥' राम कथा में अनेक मार्मिक प्रसंग हैं, जो मानव-जीवन की दैनंदिन गीता हैं।"

परिचय सबसे कराते हैं। मुनि वशिष्ठ से परिचय कराते हुए कहते हैं कि इन सब वानर, भालू वीरों के कारण समर में राक्षसों का विनाश कर सका। आभार की आत्मीयता भरी ये संस्कृति को पुनः स्मरण करके जीवन का अंग बना लेने जैसा, पुनर्पाठ करने जैसा अभ्यास ही तो हम हर वर्ष रामनवमी के उत्सव मनाकर करते आए हैं!

वनवासी राम हमारे शास्त्रों को लोक रीतियों में अनुवाद करने ही तो आए हैं! शास्त्रीयता को, निगम-आगम के ज्ञान को जीवन रसायन बनाकर विविध मार्मिक प्रसंगों में ढालकर हमें जिजीविषा के मंत्र देने वाले राम को हम पूजते भी हैं, स्नेह भी करते हैं। मन में बसाते भी हैं और साँसों की सुगंध भी बनाते हैं। राम कथा का यही पल-पल का घटना-प्रसंग रामनवमी के दिन विशेष आवृत्तियों के साथ जागृत हो जाता है। राम हमारी जीवन की भाषा के आवश्यक मुहावरे हैं, राम हमारे जीवन के प्रसंग भी हैं, संदर्भ भी। विवाह गीतों में आज भी 'रघुनन्दन फूले न समाय' कहकर घर-घर में हर दूल्हे को राम और दुल्हन को जानकी ही माना जाता है। साथ ही, कन्या सिया कहलाती है और कन्या का पिता राजा जनक। हमारे भोजन में ही देख लीजिए कि परसते समय हर पकवान के आगे राम लगता है, जैसे—पूड़ी राम, लड्डू राम और नमक को आज भी हम रामरस ही कहते हैं, क्योंकि राम ही तो हमारे आस्वाद हैं और राम ही आह्लाद! सहज वार्तालाप में हर व्यक्ति कह उठता है, 'अपने राम तो ऐसे ही हैं, क्योंकि साँस-साँस में राम हैं, आस में राम, विश्वास में भी राम ही तो हैं!' काकु वक्रोक्ति में राम हैं। 'अपनी तो राम-राम हो गई।' या 'हमने तो राम-राम कर ली।' अंत तो राम की गति है ही, सो कहा ही जाता है, 'राम नाम सत्य है।' यानी, हानि-लाभ, जीवन-मरण, जस-अपजस यों ही विधि के हाथ नहीं है। सचमुच, हमारे भाव में, भाषा में, भोजन में, भेष में, उत्सव में, त्योहार में, आन-बान-शान में ये विधि विधाता ही तो राम हैं! सर्वत्र राम-ही-राम की झाँकी सजी रहती है। हमारी चेतना के ओर-छोर रामरस में ही तो भीगे रहते हैं और जब तक ये भीगे रहेंगे तभी तक राम है यानी, प्राण है, प्राणों का उजास है, वरना तो अंतस-बाहर सब अँधियार-ही-अँधियार है। तुलसी कह गए हैं न—'राम नाम मणि दीप धर, जीह देहरी द्वार। तुलसी भीतर बाहरेहु, जो चाहेसि उजियार ॥'

राम ने हमें सृष्टि ही नहीं दी है, दृष्टि भी दी है। दर्शन ही नहीं दिया है, अनंत दृश्य भी दिए हैं। राम ने ही आश्वस्त किया है, 'मिलत कृपा तुम पर प्रभु करहीं। उर अपराध न एकहु धरहीं ॥' ये राम के शत्रु का दूत राम की ओर से आश्वासन दे रहा है! अद्भुत हैं श्री राम, जो सिखा गए, पथ दिखा गए कि सर्वसमर्थ परात्पर ब्रह्म होकर भी मनुजता को, मानवीय करुणा को, मानवीय श्रद्धा, विश्वास, पितृ आज्ञा सर्वोपरि करने को, मैत्री को, भ्रातृ धर्म को कैसे निभाया जा सकता है। अखिल लोक के नायक त्रिभुवनपति होने के उपरांत भी सीता जी को युद्ध जीतकर पुनः प्राप्त करने में पर्याप्त समय लगा और ये समय राम ने धैर्य से, सहनशीलता से व्यतीत किया। कितनी बड़ी सीख दी राम ने अपने व्यवहार से! लक्ष्मण को वर्षा ऋतु के माध्यम से नीति उपदेश देते हुए राम बारंबार कहते हैं, 'छुद्र नदी भरि चली तोराईं। जिमि थोरहि धन खल इतराईं' या 'बूँद अघात सहहिं गिरि कैसे। खल के वचन संत सहें जैसे ॥' राम कथा में अनेक मार्मिक प्रसंग हैं, जो मानव-जीवन की दैनंदिन गीता हैं। यत्र-तत्र राम ने सत और असतों के लक्षण स्पष्ट किए हैं। लोकरक्षक राम ने अपने चरित से उदाहरण देकर जीवन का मर्म समझाया है। भोग नहीं, त्याग हमारी संस्कृति में इसीलिए पूज्य माना गया कि राम ने अपने जीवन की श्रेष्ठता त्याग के आदर्शों से सिद्ध करके हमारे सामने जीने की कला का व्यावहारिक व अनुकरणीय स्वरूप प्रस्तुत किया।

हमारी सनातन संस्कृति के प्राणतत्व हैं राम। दक्षिण से लेकर उत्तर तक, पूर्व से लेकर पश्चिम तक, भारत के चारों कोने, दसों दिशाएँ राम नाम संकीर्तन से गुँजायमान रहती हैं। पग-पग पर आई विषम परिस्थितियों के बावजूद, राम ने जीवन में कभी अपने भाव को बिगड़ने न दिया। मन, वचन और कर्म से शक्ति के साथ शील का निर्वाह कर सुंदर जीवन-सत्य का निरूपण किया।

राम हमारी संस्कृति के विश्वकोष हैं, राम हमारी वैदिक परंपराओं के केंद्र हैं। राम का काम हमारे लिए अनुकरणीय ही नहीं, ध्येय बनाकर आत्मसात् कर लेने जैसा है, राम का धाम हमारे सदियों के स्वप्न को साकार करता हुआ जननी जन्मभूमि के प्रति राम की स्वर्ग से बढ़कर निष्ठा को व्यक्त करता है और धर्मध्वजा को लहराता हुआ हमें जीने का संबल देता है। आज की अयोध्या उस अयोध्या की प्रतीक है, जहाँ कोई युद्ध नहीं, न बाह्य, न आंतरिक। राम का नाम मानो अमृत का वह कलश है, जिसे स्मरण करके बूँद-बूँद कंठ में धारण करके हम सनातनी युगों से जीते आए हैं और युगों तक अपनी राम संस्कृति के अनुयायी बने विश्व में निराले बन जीते रहेंगे, सनातन संस्कृति की धर्मध्वजा लहराते रहेंगे।

विश्व रंगमंच, हिंदी रंगमंच तथा भारतीय रंगमंच का अर्थ

27 मार्च को विश्व रंगमंच दिवस है और तीन अप्रैल को हिंदी रंगमंच दिवस। दोनों ही आस-पास। विश्व रंगमंच दिवस पूरे विश्व में मनाया जाता है और हिंदी रंगमंच दिवस प्रायः हिंदी प्रदेशों तक सीमित है। भारतीय रंगमंच दिवस की कल्पना अभी किसी ने नहीं की है। जैसे भारतीय रंगमंच का कोई एक चेहरा अभी तक नहीं बन पाया, उसी तरह भारतीय रंगमंच दिवस का चेहरा भी तराशा जाना अभी शेष है। यह बात दीगर है कि कतिपय लोग तीन अप्रैल को ही भारतीय रंगमंच दिवस के रूप में मनाने की बात करते हैं। यह उचित भी है। पहले हम विश्व रंगमंच दिवस की बात करते हैं।

प्रताप सहगल

- सुपरिचित कवि, नाटककार, कथाकार, उपन्यासकार और आलोचक
- प्रताप सहगल की डायरी लेखन, यात्रा-वृत्तांत तथा आलोचना आदि विधाओं पर समान पकड़ रही है; अनुवाद और संपादन कर्म से जुड़े रहे हैं।
- जाकिर हुसैन कॉलेज में प्रोफेसर रहे सहगल साहब ने बाल साहित्य में भी प्रभूत और उल्लेखनीय योगदान दिया है। लेखक की 50 से अधिक कृतियाँ प्रकाशित। तीन मूल तथा एक अनूदित कृति न्यास से प्रकाशित है। अनेक रचनाओं के देश-विदेश की भाषाओं में अनुवाद प्रकाशित। रचनाएँ पाठ्यक्रम में शामिल।
- हिंदी अकादमी के साहित्यकार सम्मान, संगीत नाटक अकादमी आदि सम्मानों से विभूषित। वर्तमान में स्वतंत्र लेखन में संलग्न।

विश्व रंगमंच दिवस क्यों?

रंगमंच का मुख्य उद्देश्य है क्या? रंगमंच न केवल रंगकर्म से जुड़े लोगों में उत्साह, अनुशासन और त्याग की भावना जागृत करता है, बल्कि अपने साथ-साथ दर्शकों की अभिरुचियों को भी संस्कारित करता है। विश्व रंगमंच दिवस का उद्देश्य यही रहा है कि कलाकारों के बीच मानवीय अभिव्यक्ति और सांस्कृतिक आदान-प्रदान संभव हो सके। यह दिवस शांति और संस्कृति का हर बार नया पुनर्पाठ प्रस्तुत करता है।

पहला विश्व रंगमंच दिवस 1961 में इंटरनेशनल थियेटर इंस्टीट्यूट, पेरिस (फ्रांस) द्वारा घोषित हुआ और पहला संदेश 1962 में फ्रांस की लेखक जीन काक्टे ने दिया था। इस संदेश के मुख्य बिंदु थे—रंगमंच के माध्यम से वैश्विक शांति, वैश्विक जुड़ाव, शांति का आह्वान। उन्होंने कहा कि रंगमंच केवल मनोरंजन का माध्यम नहीं है, बल्कि इसका उपयोग वैश्विक शांति और एकता के लिए किया जाना चाहिए। भारत से यह गौरव कन्नड़ नाटककार, थियेटर तथा फिल्म कलाकार गिरीश कर्नाड को प्राप्त हुआ। 2002 में उन्होंने विश्व रंगमंच दिवस पर अपना संदेश देते हुए कहा कि रंगमंच की शक्ति टीवी, फिल्म या अन्य कैमरा माध्यमों से बिलकुल अलग है। यह एक जीवित अनुभव है, जो हर प्रस्तुति के साथ बदलता रहता है। इसमें दर्शक, अभिनेता और नाटककार की भूमिका बराबर बनी रहती है। यह एक ऐसा माध्यम है, जहाँ दर्शकों की प्रतिक्रिया रंग-प्रस्तुति को बदल सकती है। रंगमंच में ही इतनी शक्ति है कि वह अपनी प्रकृति में निरंतर बदलते हुए भी विचारोत्तेजक बना रहता है।

भारतीय विचारधारा के अनुसार ब्रह्मा ने रंगमंच की कल्पना की और उन्हीं के

निर्देश पर भरत मुनि ने 'नाट्यशास्त्र' की रचना की। भारतीय संदर्भ में ही पहली प्रस्तुति का संदर्भ देते हुए उन्होंने कहा कि रंगमंच एक ऐसा मानवीय अनुभव है, जहाँ असफलता या किसी रुकावट का डर हमेशा बना रहता है। इसलिए यह अपनी मूल प्रकृति में ही अनिश्चित (अनसरटेन) है। रंगमंच एक पवित्र स्थान है, जहाँ मनुष्य के अनुभवों को मानवीय स्तर पर अभिव्यक्त किया जाता है। इसलिए यह मास मीडिया से बिलकुल अलग माध्यम है। इतना ही नहीं, जब हम वैश्विक रंगमंच की बात करते हैं तो उसमें केवल प्रोसिनियम थियेटर ही शामिल नहीं है, बल्कि मूक एवं बधिरों द्वारा किया गया रंगकर्म, मानसिक या शारीरिक रूप से बाधित व्यक्तियों द्वारा किया जाने वाला रंगमंच आदि भी शामिल है।

हालाँकि, विश्व रंगमंच दिवस को संयुक्त राष्ट्र संघ की मान्यता नहीं है। अगर ऐसा हो तो अनुदान आदि से वैश्विक रंगमंच के कई आयाम और खुल सकते हैं। इससे वैश्विक स्तर पर रंगमंच का विस्तार होगा और आपसी आदान-प्रदान और बढ़ेगा।

हिंदी रंगमंच दिवस

अब बात करता हूँ हिंदी रंगमंच दिवस की, जो हर वर्ष तीन अप्रैल को मनाया जाता है। इसी दिन वाराणसी में शीतलाप्रसाद त्रिपाठी विरचित हिंदी के पहले नाटक 'जानकी मंगल' का मंचन हुआ था और इसमें भारतेंदु ने लक्ष्मण की भूमिका निभाई थी।

हिंदी रंगमंच का कोई एक निश्चित स्वरूप नहीं है। हिंदी, हिंदी की उपभाषाएँ, यथा बुंदेलखंडी, छत्तीसगढ़ी, राजस्थानी, भोजपुरी और अनेक बोलियाँ मिलकर हिंदी रंगमंच का निर्माण करती हैं। हिंदी के नाटक या हिंदी में नाटक। हिंदी नाटक, यानी वे नाटक, जो हिंदी अथवा उसकी उपभाषाओं या बोलियों में लिखे गए हैं और हिंदी में नाटक, यानी वे सब नाटक, जो हैं तो विदेशी भाषाओं के नाटक, लेकिन हिंदी में उनका अनुवाद अथवा रूपांतर किया गया है। यह सब मिलाकर ही हम हिंदी रंगमंच की कल्पना कर सकते हैं।

जब हम मराठी रंगमंच की बात करते हैं तो वह महाराष्ट्र तक ही सीमित है और वहीं की संस्कृति के अनुरूप रंग-प्रस्तुतियाँ होती हैं। इसी तरह से बाँग्ला रंगमंच, मलयालम या तमिल रंगमंच के बारे में भी कहा जा सकता है, लेकिन हिंदी रंगमंच भारतभर में होता है, हिंदी प्रदेशों में कुछ और ज्यादा। बिहार में होता हुआ हिंदी रंगमंच, उत्तर प्रदेश में हो रहे हिंदी रंगमंच से कुछ अलग हो जाता है। भाषा एक होने पर भी प्रदेश विशेष की संस्कृति, उसका खान-पान, हलन-चलन, मुहावरें, लोकोक्तियाँ, पहनावा और रंग-संगीत आदि में बदलाव दिखाई देता है।

लेकिन यह एक ऐसी अंतर्धारा है, जो सभी राज्यों को एक सूत्र में बाँध देती है और वह है भरत मुनि का 'नाट्यशास्त्र'। वस्तुतः, दो तरह की रंग-कल्पना हमारे यहाँ प्रचलित है। शास्त्रसम्मत रंगमंच और लोकसम्मत रंगमंच। लोकसम्मत रंगमंच का अस्तित्व शास्त्रसम्मत रंगमंच से भी पहले आ चुका था और उसके अनेक स्वरूप थे। आज जिस रूप में हम भारत के स्वरूप को देख रहे हैं, उस रूप में वह हमेशा नहीं रहा। कबीलायी संस्कृति से यात्रा करते हुए रंगमंच की यात्रा भी लोक और आभिजात्य रंगमंच में ढलती चली गई। लोक रंगमंच को ही हिंदी के प्रसिद्ध नाटककार जगदीश चंद्र माथुर ने परंपराशील नाट्य कहा है। ऐसा कहने के पीछे उनके पास मजबूत

तर्क हैं। उनका मानना है कि हमने पश्चिमी देशों की नकल करते हुए हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषाओं की नाट्य-परंपराओं को 'लोक नाटक' कह दिया। यह फोक थियेटर का अनुवाद है। जैसे फोक टेल का अनुवाद 'लोक कहानियाँ' कर दिया गया। वस्तुतः, इसे परंपराशील कथा या परंपराशील नाटक कहना चाहिए। इस बहस में अगर न भी जाएँ तो भी सच्चाई तो यही है कि हिंदी रंगमंच दिवस परंपराशील, लोक और शास्त्रसम्मत रंगमंच—इन सबका प्रतिनिधित्व करता है।

वैश्विक रंगमंच दिवस अपनी प्रकृति में ही विस्तृत और विशाल है। उसके आयाम हर देश के साथ बदल जाते हैं, लेकिन अंतर्धारा केवल एक। रंगमंच का उपयोग विश्व शांति, अनुशासन और मनुष्य की कलात्मक भूख को तृप्त करने वाले दिन का उत्सव। यह एक तरह से उत्सव है, जो न केवल विश्व के रंगकर्मियों को उनके दायित्वों की याद दिलाता है, वृहद् स्तर पर विभिन्न देशों की सरकारों और लोगों को भी रंगमंच से जुड़े कलाकारों के संघर्षों को रेखांकित करता है। यही काम हिंदी रंगमंच दिवस भारतीय स्तर पर करता है।

यह भी एक विचारणीय प्रश्न है कि भारतीय रंगमंच दिवस पूरे देश में क्यों नहीं मनाया जाता? भारतीय रंगमंच दिवस की कल्पना होना अभी शेष है। जिस तरह से भारतीय रंगमंच का कोई एक चेहरा अभी भी नहीं बन सका, उसी तरह से भारतीय रंगमंच दिवस का आयोजन होना भी अभी शेष है। क्या ऐसा संभव नहीं कि हर भाषा का रंगमंच अपनी मूल प्रकृति को बनाए रखते हुए भी एक सामूहिक रंगमंच का निर्माण कर सके? विदेशों में अगर भारत का कोई रंग-दल जाता है तो भाषायी अंतर के बावजूद वह भारतीय नाटक या भारतीय रंगमंच ही कहलाता है, लेकिन भारत में हर भाषा के रंगमंच का चेहरा अलग हो जाता है। अगर सांस्कृतिक दृष्टि से बाहरी अंतर दिखते हुए भी भारतीय साहित्य और रंगमंच की अंतर्धारा एक ही है, तो भारतीय रंगमंच दिवस मनाने की भी कल्पना क्यों नहीं की जा सकती?

कतिपय रंगकर्मियों ने कोशिश की कि भारतीय रंगमंच का कोई चेहरा बने, लेकिन हम आज भी मराठी रंगमंच, बाँग्ला रंगमंच, गुजराती रंगमंच या मलयालम रंगमंच आदि की बात करते हैं।

वैश्विक और भारतीय स्तर पर आज रंगमंच को आधुनिक तकनीक और एआई भी प्रभावित करने लगी है। पिछले दिनों मकाऊ में इस लेखक ने वाटर थियेटर देखा। बिना एक भी शब्द के, केवल और केवल थियेटर। वहाँ वैज्ञानिक तकनीकों का अद्भुत इस्तेमाल किया गया था। वह चकित तो करता है, लेकिन पूरे थियेटर का आधार एक पुरानी प्रेम कथा ही था।

वैश्विक रंगमंच और भारतीय रंगमंच की तुलना की जाए तो भले ही यूरोपीय रंगमंच के पास भरपूर संसाधन हैं, लेकिन कंटेंट की दृष्टि से भारतीय रंगमंच का अभी भी कोई सानी नहीं है। भारत जैसा वैविध्य और कहीं मिलना संभवतः संभव भी नहीं है।

इधर, प्रोसिनियम थियेटर में लोक कलाओं और फिल्मी संगीत का इस्तेमाल भी बढ़ा है। एआई के आने से यह और भी बढ़ेगा। आज जरूरत है कि भारतीय रंगमंच दिवस को साकार रूप दिया जाए। इस संबंध में राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय पहल कर सकता है। इसके लिए भारतीय स्तर पर एक सांस्कृतिक नीति की जरूरत है। यह सांस्कृतिक नीति किसी भी राजनीतिक विचारधारा से प्रेरित न होकर समावेशी हो। भारत जैसे विविधताओं से भरे हुए देश में यही संभव है। क्यों न इसके लिए राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय पूरे देश के स्तर पर अनुभवी रंगकर्मियों की एक कमेटी गठित करे। एक नीति तैयार हो और भारतीय रंगमंच दिवस को मनाने की पहल हो। राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय हर साल 'भारत रंग महोत्सव' यानी 'भारंगम' का आयोजन करता है। भारतीय रंगमंच दिवस को 'भारंगम' के साथ ही जोड़ा जा सकता है। इस महोत्सव में भारत की सभी भाषाओं की रंग-प्रस्तुतियाँ की जाती हैं और अब तो इस महोत्सव का विकेंद्रीकरण भी हो चुका है। फिलहाल विश्व रंगमंच दिवस और हिंदी रंगमंच दिवस की अनेकानेक शुभकामनाएँ और आशाएँ कि अगले वर्ष हम भारतीय रंगमंच दिवस भी मना सकें।

किताबों का जादू

बचपन खुले आसमान की तरह होता है। बालक हो चाहे बालिका, वे इस आसमान में उड़ते हैं और यही वक्त होता है, जब वे पाठ्यपुस्तकों के संपर्क में आते हैं। ये पुस्तकें उन्हें ज्ञानवान बनाने के लिए थमाई जाती हैं। यह इसलिए आवश्यक समझा जाता है कि बच्चों को शिक्षित किया जाना है और ऐसी कोई शिक्षा-पद्धति विकसित नहीं हुई, जिसमें पाठ्यपुस्तकों का कोई विकल्प हो। आज के शैक्षिक परिदृश्य में पाठ्यपुस्तकें ही प्रमुख ज्ञान प्रदाता हैं। इसके बावजूद, भारत में इन पुस्तकों के मानकीकरण का काम पूरा नहीं हुआ है।

यहाँ सवाल है कि बच्चों के संपूर्ण बौद्धिक विकास के लिए क्या पाठ्यपुस्तकें ही काफी हैं, या फिर इनके साथ-साथ पाठ्येतर पुस्तकों को भी महत्व दिया जाना चाहिए?

प्रचलन में यही है कि पाठ्यपुस्तकें अत्यावश्यक हैं, क्योंकि उनको पढ़कर ही बच्चा परीक्षा पास करता है, डिग्रियाँ प्राप्त करता है और डिग्रियों से ही नौकरी मिलती है। बस, यही धारणा बच्चे के बौद्धिक विकास में सबसे बड़ी बाधक है। क्योंकि डिग्रियाँ मिलने से नौकरी की गारंटी नहीं है। आज बेरोजगार युवाओं की संख्या दिनोंदिन बढ़ती ही चली जा रही है और इस समस्या का समाधान आसान नहीं है। उनकी हताशा-निराशा व कुंठा भी चिंता का विषय है।

कारण स्पष्ट है कि सामान्यतः पाठ्यपुस्तकों को बच्चा पचा नहीं पाता, क्योंकि उनसे शुष्क व बासी जानकारियाँ मिलती हैं, जिनसे संज्ञानात्मक क्षमता विकसित नहीं होती। बच्चे रटंत तोते बन जाते हैं और परीक्षा पास कर लेते हैं, लेकिन अर्जित जानकारियों से कामयाबी की फसल उगाने में असफल हो जाते हैं। देखा गया है कि जिन बच्चों ने पाठ्यपुस्तकों के साथ-साथ पाठ्येतर पुस्तकें भी पढ़ी हैं, उनमें संज्ञानात्मक क्षमता विकसित हुई और वे जीवन में कामयाब भी हुए। इससे पाठ्येतर पुस्तकों के महत्त्व को समझा जा सकता है।

आखिर क्या है इन पाठ्येतर पुस्तकों का जादू, जो न सिर्फ बौद्धिक विकास का मार्ग प्रशस्त करता है, बल्कि बालक-बालिका को कामयाबी के शिखरों पर ले जाता है? यदि विचार करें तो पाएँगे कि एक बच्चा स्वेच्छा से जब कोई कहानी, उपन्यास, यात्रा वृत्तांत, संस्मरण या कविता की पुस्तक पढ़ता है तो वह हर प्रकार के तनाव या दबाव से मुक्त रहता है। चूँकि वह मन से ऐसी पुस्तक पढ़ता है, इसलिए उस पुस्तक के साथ उसका लगाव स्वाभाविक है। बालक का पुस्तक से एक रिश्ता बनता है। यह रिश्ता जैसे-जैसे गहराता है, तो किताबों से दोस्ती हो जाती है और यह दोस्ती ताजिंदगी कायम रहती है। जबकि पाठ्यपुस्तकों के मामले में उल्टा है। परीक्षा देने के बाद विद्यार्थी उन्हें भुला देना चाहते हैं।

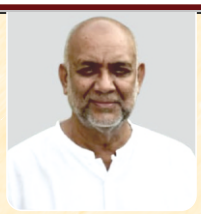

डॉ. आर.डी. सैनी

प्रतिष्ठित साहित्यकार एवं शिक्षाविद् डॉ. सैनी राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी के निदेशक रह चुके हैं। उन्होंने हिंदी माध्यम से उच्च शिक्षा प्राप्त करने वाले विद्यार्थियों के लिए विभिन्न विषयों के दो सौ से अधिक संदर्भ ग्रंथ तैयार करवाए, जो भारत के अनेक विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रमों में अनुशंसित हैं। तदंतर वे राजस्थान लोक सेवा आयोग के सदस्य एवं अध्यक्ष नियुक्त हुए।

प्रकाशन : एनबीटी से 'कुछ यूँ रचती हैं हमें किताबें' के अतिरिक्त, अन्य प्रकाशन से उनके चार उपन्यास व दो कविता-संग्रह प्रकाशित हैं।

सम्मान : उनके उपन्यास 'प्रिय ओलिव' को राजस्थान साहित्य अकादमी का सर्वोच्च साहित्यिक पुरस्कार मीरा अवार्ड से नवाजा गया। इस कृति का अंग्रेजी अनुवाद भी प्रकाशित है।

संप्रति : स्वतंत्र लेखन

संपर्क : मोबाइल– 7357753956

पुस्तकें पाठक को कल्पनालोक में ले जाती हैं और उसे कल्पनाशील बनाती हैं। हम जानते हैं कि जहाँ विज्ञान का सफर खत्म होता है वहाँ से कल्पना का सफर शुरू होता है। कल्पना पाठक को उड़ान देती है और वह वहाँ पहुँच जाता है जहाँ लेखक या कवि उसे ले जाना चाहता है। और यहीं से सूत्रपात होता है भावात्मक विकास का। पुस्तक के विभिन्न पात्रों से पाठक भावात्मक संबंध बनाने लगता है। दया, करुणा, सहानुभूति व प्रेम जैसे भाव उसके मानस में जगह बनाने लगते हैं। इससे संवेदना का विस्तार होता है और प्रकृति से तादात्म्य स्थापित होता है। इस तरह, जैसे-जैसे स्वाध्याय बढ़ता जाता है, एक ऊर्वर जमीन तैयार होती जाती है।

पाठ्येतर पुस्तकें एक दृष्टि प्रदान करती हैं। विभिन्न पात्रों व घटनाओं को पाठक अपने दृष्टिकोण से देखता-परखता है। किसी को पसंद करता है, किसी को नापसंद। यह सब सहज रूप से अनायास होता रहता है। यह दृष्टि आगे चलकर जीवन के लक्ष्य निर्धारित करती है।

कहा जा सकता है कि पाठक की आलोचनात्मक सोच विकसित होती है। इससे पहले उसका नजरिया उधार का था। वह बातों, चीजों व घटनाओं के बारे में अभिभावकों व अन्य स्रोतों के कहे अनुसार देखता-जानता था, किंतु किताबों की दुनिया उसकी अलग दुनिया होती है। वह किताबों में वर्णित चीजों, चरित्रों व घटनाओं का विश्लेषण अपने ढंग से करने लगता है।

इसे पुस्तकों का वरदान मानना चाहिए, क्योंकि यहाँ से स्वतंत्र चिंतन की बुनियाद तैयार होती है। मन-ही-मन वह सवाल करने लगता है और उनके जवाब खोजता है। यहीं पर वह तार्किकता की तरफ कदम बढ़ाता है, जो उसके बौद्धिक विकास के लिए आवश्यक खुराक है। जब तर्क उसकी जिंदगी में आएगा तो जीवन की सच्चाई को समझने लगता है। बौद्धिकता व भावुकता का संतुलन भी इसी प्रक्रिया में आता जाता है।

पाठ्येतर पुस्तकों की सबसे बड़ी देन शब्दावली व भाषा में सुधार है। इसको यूँ समझना चाहिए कि कविता, कहानी, उपन्यास व संस्मरण जैसी रचनाओं को पढ़ते हुए नए-नए शब्दों से परिचय होता है। पाठक का शब्द-भंडार भरने लगता है। यह करते-करते एक समय आता है जब वह शब्दों के खजाने का मालिक बन जाता है।

उसके खजाने के ये शब्द सटीक, सारगर्भित व प्रभावी संप्रेषण के लिए उपयोगी सिद्ध होते हैं। संक्षेप में लिखने, पढ़ने व बोलने के लिए उसके पास एक समृद्ध शब्दावली होती है, जो व्याकरण या भाषा विज्ञान पढ़ने से विकसित नहीं होती। इस मामले में पाठ्यपुस्तकें भी पीछे छूट जाती हैं। माना गया है कि यदि किसी की एक भाषा पर मजबूत पकड़ होती है तो वह दूसरी भाषाएँ भी आसानी से सीख जाता है। समझा जा सकता है कि पाठ्येतर पुस्तकें बहुत-सी भाषाओं को सीखने का दरवाजा खोल देती हैं।

इस प्रकिया से गुजरते हुए बच्चे का व्यक्तित्व विकसित होता जाता है। वह अपनी रुचि को जान लेता है। जान लेता है कि उसका लक्ष्य क्या है? यह मामूली घटना नहीं है, क्योंकि लोग ताजिंदगी नहीं जान पाते कि वे चाहते क्या हैं? वे व्यवस्था के प्यादे बनकर एक दिन मर जाते हैं। जबकि किताबें इनसान में एक जुनून पैदा करती हैं कि वह अपने लक्ष्य को प्राप्त करे। दूसरे शब्दों में, किताबें एक मर्तबा हाथ पकड़ लेती हैं तो इनसान को उसकी मंजिल तक पहुँचाकर ही दम लेती हैं।

दरअसल, मौलिक दृष्टि, रचनात्मकता, विश्लेषणात्मक क्षमता, भाषा-कौशल, आत्मबोध, गहन रुचि और कुछ बनने का जज्बा पाठ्येतर पुस्तकों से ही उत्पन्न हो सकता है। यह कब-कैसे होता है, जानना मुश्किल है, क्योंकि सब कुछ जादुई है। एआई के इस जमाने में कहा जा रहा है कि नई पीढ़ी ई-बुक्स को ज्यादा पसंद करने लगी है। यह नवाचार अच्छा है, लेकिन पारंपरिक पुस्तकों का विकल्प नहीं है। ई-बुक्स या अन्य इलेक्ट्रॉनिक पाठ्य-सामग्री की अपनी उपयोगिता है, बल्कि कहा जाना चाहिए कि ज्ञान-विज्ञान के ये नए माध्यम पुस्तकों के लिए एक सकारात्मक भूमिका तैयार करते हैं।

इसको यूँ समझना चाहिए कि आज स्क्रीन पर ढेरों चीजें देखने के लिए हैं, लेकिन देखने व पढ़ने में फर्क होता है। दोनों की तासीर अलग है। किसी सिनेमा हॉल में देखी गई एक फीचर फिल्म का प्रभाव देर तक कायम नहीं रहता, जबकि पढ़ी गई किताब ताजिंदगी हमारे मानस में रची-बसी रहती है। आभासी दुनिया कौंध पैदा करती है, जबकि किताब रस-निष्पत्ति से पाठक में घुलमिल जाती है और उसे संस्कारित करती है।

“भाँति-भाँति के नवाचारों के बावजूद शिक्षक आज भी शिक्षा के केंद्र में है। जैसे शिक्षण के लिए शिक्षक का विकल्प नहीं, वैसे ही पुस्तक का भी विकल्प नहीं है। एक पहलू यह भी है कि पारंपरिक पुस्तकें मानव द्वारा अर्जित ज्ञान व अनुभव को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तांतरित करती आई हैं। उनसे हमारा भावात्मक लगाव रहा है। यह लगाव ई-बुक के साथ विकसित नहीं होता। पुस्तकों को सुविधानुसार पढ़ा जा सकता है। यह सुविधा, सहजता व सुलभता ई-बुक्स को पढ़ने में नहीं है। इसलिए पारंपरिक पुस्तकें कभी भी अप्रासंगिक नही होंगी। वे पहले भी उपयोगी थीं, आज भी हैं और कल भी बनी रहेंगी।”

ई-बुक व ऑनलाइन सामग्री के फायदों को भी समझना होगा। इनसे पुस्तकों व पाठ्य-सामग्री तक पहुँच आसान हो गई है। इसके अलावा, जहाँ एक तरफ कागज की बचत होती है तो दूसरी तरफ स्थान एवं रखरखाव आसान हो जाता है। दुनियाभर का ज्ञान सुलभ हुआ है और इसको कहीं भी पढ़ा जा सकता है। निश्चित ही कम लागत में वांछित सामग्री उपलब्ध होती है।

लेकिन सवाल है कि इंटरनेट या दूरस्थ शिक्षा से क्या शिक्षक का महत्व समाप्त हो गया? भाँति-भाँति के नवाचारों के बावजूद शिक्षक आज भी शिक्षा के केंद्र में है। जैसे शिक्षण के लिए शिक्षक का विकल्प नहीं, वैसे ही पुस्तक का भी विकल्प नहीं है। एक पहलू यह भी है कि पारंपरिक पुस्तकें मानव द्वारा अर्जित ज्ञान व अनुभव को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तांतरित करती आई हैं। उनसे हमारा भावात्मक लगाव रहा है। यह लगाव ई-बुक के साथ विकसित नहीं होता। पुस्तकों को सुविधानुसार पढ़ा जा सकता है। यह सुविधा, सहजता व सुलभता ई-बुक्स को पढ़ने में नहीं है। इसलिए पारंपरिक पुस्तकें कभी भी अप्रासंगिक नहीं होंगी। वे पहले भी उपयोगी थीं, आज भी हैं और कल भी बनी रहेंगी।

आवश्यकता पाठ्येतर पुस्तकों के बारे में जागरूकता पैदा करने की है। हमें समझना-समझाना होगा कि संज्ञानात्मक क्षमता विकसित करने के लिए कहानी, उपन्यास, कविता, नाटक, जीवनी व आत्मकथाओं की पुस्तकों को बढ़ावा कैसे दिया जाए? इस धारणा को बदलना होगा कि पाठ्यपुस्तकें ही तारणहार हैं।

यह शुभ संकेत है कि नई शिक्षा नीति में सृजनात्मक शिक्षा को महत्व दिया गया है। सृजनात्मक शिक्षा के लिए पाठ्येतर पुस्तकें महत्वपूर्ण उपकरण हैं। इसलिए सरकार ने विद्यालयों में पुस्तकालयों को समृद्ध करने के लिए अनुदान की व्यवस्था भी की है। लेकिन देखा जा रहा है कि पुस्तकों के नाम पर ऐसी पुस्तकों की खरीद हो रही है, जो उपयोगी नहीं हैं। बाजार की इस जोड़तोड़ व साँठगाँठ को सख्ती से रोकना होगा। इसके साथ-साथ, सरकारी प्रकाशनगृहों को भी साधन-संपन्न बनाना होगा, ताकि वे त्वरित गति से अधिक पुस्तकों का प्रकाशन-विपणन कर सकें।

भारत में अनुमानतः 15 लाख विद्यालय हैं। इनमें लगभग दस लाख विद्यालय सरकार द्वारा संचालित हैं। इन विद्यालयों के पुस्तकालयों के लिए उपयोगी पुस्तकें उपलब्ध करवाना एक बड़ी चुनौती है। लेकिन एक विकसित भारत के निर्माण के लिए यह अत्यावश्यक है। साहित्यकारों को भी समझना होगा कि विदेशी शगुफों व लफ्फाजी से बचकर सार्थक लेखन करें। यह एक राष्ट्रीय व मानवीय सेवा है, जिससे वे विमुख नहीं हो सकते। यह सोचने का विषय है कि हिंदी साहित्य में ‘तोत्तोचान’ व ‘ऐलकेमिस्ट’ जैसी कितनी कृतियाँ हैं? देश-प्रदेश की अकादमियों को भी ऐसी कृतियों को बढ़ावा देना चाहिए।

अंत में इतना ही कि मेरे जीवन में पाठ्येतर पुस्तकें नहीं होतीं तो पता नहीं आज कहाँ होता? शायद रिक्शा चला रहा होता या किसी ढाबे पर बर्तन धो रहा होता। हो सकता है कि आत्महत्या कर लेता! कुछ भी हो सकता था। क्योंकि मेरे स्कूली जीवन में हताशा, निराशा, कुंठा, भय और असुरक्षा का एक ऐसा अँधेरा था, जो कभी छँटता नहीं था। कहानी, उपन्यास, आत्मकथा, जीवनी व संस्मरण की किताबों से दोस्ती हुई तो ये अँधेरा छँटता गया। अंतस प्रकाश से भर गया। सफलता की सीढ़ियाँ चढ़ता गया और अंत में एक लेखक के रूप में जीवन सार्थक हुआ।

एक विस्मय की तरह खुलती है कविता

कविता का सदैव एक स्वायत्त और वृहत्तर संसार रहा है। एक साथ रच रहे विश्व की अनेक भाषाओं के कवि मानवीय जीवन और समाज, देश और काल की जो उपस्थितियाँ संभव कर रहे हैं, वह इस आधुनिक और जटिल होते समय में नाकाफी है। किंतु यह कवियों का ही सदन है, जहाँ इस संसार की संकीर्णताओं की धज्जियाँ उड़ाई जाती हैं तथा यह कवि ही है, जो किसी भी अमानवीय घटना को प्रश्नांकित करता है एवं अपने स्थापत्य में उन बारीकियों को सामने लाता है तथा वैश्विक स्थितियों के आर-पार जाकर उन कोमल भावनाओं की भी रक्षा करता है, जो इस पूँजीवादी, युद्धोन्मादी और निष्करुण होते समय में दिनोंदिन छीज रहा है। कविता यही कुछ बचाती है, जो लगता है कि एक निरुद्यमी व्यसन है, लेकिन यह कविता ही है, जो अंतःकरण के तलघर की भी सिसकियाँ और आवाजें सुन सकती है। कोई मशीन मनुष्य के सुख-दुख की सच्ची आहट भी नहीं पा सकती। विश्व के काव्य-पटल पर शेक्सपियर, वाल्ट ह्विटमैन, कीट्स, बायरन, पी.बी. शैले, राबर्ट फ्रास्ट, ब्राउनिंग, ब्रेख्त, कवाफी, रिल्के, एज़रा पाउंड, बोर्हेस, पाब्लो नेरुदा, उंगारेत्ती, यूजेन्यो मोंताले, वोल सोयिंका, टी.एस. इलियट, बर्नाद बी दादेय, ऑक्तेवियो पॉज, तादेऊष रूज़ेविच, तथा भारतीय भाषाओं के कवियों में वाल्मीकि, कालिदास, रवींद्रनाथ टैगोर, अय्यप्प पाणिक्कर, के सच्चिदानंदन, कुँवर नारायण, कैलाश वाजपेयी, विनोद कुमार शुक्ल इत्यादि का कविता-संसार इस बात का साक्षी है कि कैसे इनकी कविताएँ अपने देश-काल की उपज होकर भी वैश्विक अंतःसंवेदन की अंतर्वस्तु का भी उत्तरदायित्वपूर्वक वहन करती रही हैं। जब ब्रेख्त नई पीढ़ी के नाम कविता लिखते हुए अंत में कहते हैं कि मैंने जितने ज्यादा जूते नहीं बदले, उससे ज्यादा मुल्क बदले तो वे विस्थापन और देशनिकाले से गुजरते हुए हर कवि की पीड़ा का निर्वचन कर रहे होते हैं। कविता की आवाज सदियों से उस मनुष्य की पीड़ा और 'सफ़रिंग्स' की आवाज बनकर उभरी है, जो अपनी पीड़ा खुद नहीं बयान कर सकता।

आज का समय अत्यंत पूँजीवादी, साम्राज्यवादी और युद्धोन्मादी समय है, जहाँ 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की धज्जियाँ उड़ती ही रहती हैं। कवियों के अनुसार, हर समय कविता के लिए चुनौतीपूर्ण होता है। लेकिन यह कविता ही है, जिसे सदैव विपक्ष के आसन पर आसीन माना जाता रहा है। इसी से यह उम्मीद की जाती है कि यह जो भी कहेगी, सच कहेगी। सच कहने के तमाम जोखिमों से गुजरते हुए आज भी यह कविता ही है, जो दुस्साहस की सीमा तक जाकर व्यवस्था की बखिया उधेड़ सकती है। वही है तो सत्तावानों की आँखों में आँखें डालकर सवाल कर सकती है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने कहा ही था कि जैसे-जैसे हम पर सभ्यता के आवरण चढ़ते जाएँगे, कविता करना कठिन होता जाएगा। लेकिन आज यह लगता है कि आधुनिकता, तकनालाजी और विकास के चरम पर पहुँचकर भी कविता के लिए हृदय में जगह बनाई जा सकती है। हमें यह मालूम है कि मुक्तिबोध ने कहा था कि पूँजी से जुड़ा हृदय बदल नहीं सकता, लेकिन आज पूँजी के घटाटोप के बावजूद कविता अपने तेवर को यथासंभव बचाये हुए है, तो यह कवियों के निरंकुश होने का ही परिचायक है तथा यह भी कि आज के मनोरंजनवादी समय और समाज में भी कविता की जरूरत बनी हुई है।

एक वक्त था, विश्व-कविता के कुछ कवियों की कविताओं के अनुवाद का चस्का लगा। लखनऊ में रहते हुए अनेक कवियों को पढ़ने का सौभाग्य हासिल हुआ तथा उनमें कुछ की कविताओं के अनुवाद का स्वतःप्रेरित जुनून भी चढ़ा। लिहाजा, अनुवाद करते समय

डॉ. ओम निश्चल

सुपरिचित कवि, आलोचक और भाषाविद्। कविता एवं आलोचना के क्षेत्र में सक्रिय।

जन्म : 15 दिसंबर, 1958 को उत्तर प्रदेश के प्रतापगढ़ जनपद के हर्षपुर ग्राम में।

शिक्षा : हिंदी व संस्कृत में एम.ए., पत्रकारिता में स्नातकोत्तर डिप्लोमा और हिंदी साहित्य में पीएच-डी. की उपाधि।

प्रकाशन : 'शब्द सक्रिय हैं', 'मेरा दुख सिरहाने रख दो', 'ये जीवन खिलखिलाएगा किसी दिन', 'कोई मेरे भीतर जैसे धुन में गाए', 'ये मन आषाढ़ का बादल हुआ है' आदि कृतियों सहित लगभग 75 पुस्तकें प्रकाशित।

सम्मान : आचार्य रामचंद्र शुक्ल आलोचना पुरस्कार, अज्ञेय भाषा सेतु सम्मान आदि अनेक सम्मानों से विभूषित।

साहित्यिक यात्राएँ : दक्षिण अफ्रीका और मॉरीशस की साहित्यिक यात्राएँ।

संप्रति : भारतीय शिक्षा बोर्ड के हिंदी पाठ्यक्रमों के सलाहकार संपादक एवं कई प्रतिष्ठित संस्थानों के सदस्य।

संपर्क : मोबाइल— 9810042770

ईमेल— dromnishchal@gmail.com

कविताओं का सत्व तत्व भी भीतर उतरता रहा। आज कविता के प्रति, विश्व कविता के प्रति, जो प्रीति मुझमें है शायद यह उसी अध्यवसायिता और अनुरक्ति का प्रतिफल है। कहना न होगा कि हर देश-काल की कविता वैश्विक कविता आंदोलनों से प्रभावित रही है। पाश्चात्य काव्यांदोलनों ने हमारी भारतीय कविता को इस हद तक प्रभावित किया है कि कवि अपने आप में एक विश्व नागरिक-सा लगता है। एक दौर में दक्षिण अफ्रीका की आजादी के संघर्ष को भारतीय कविता ने भी अपना समर्थन और स्वर दिया। वहाँ के अनेक कवियों—रैफेल आरमेटो, दादेय, वोल सोयिन्का, क्वेसी ब्रेव, डेविड डिओप और डान मातेरा को यहाँ चाव से पढ़ा और सराहा जाता रहा। कवि कभी सरहदों से बँधा बिंधा नहीं रहा, बल्कि उनके आर-पार जाकर परिंदों की तरह विचरण करता है। कैलाश वाजपेयी की सत्तर के दौर में लिखी कविताएँ वैश्विक विक्षोभ का ही प्रत्याख्यान हैं। देश-देशांतर के फर्क के बावजूद ऐसी कविताएँ बताती हैं कि कल्पनाशीलता और मनुष्य की भावात्मक सोच एक है। उसे देश-देशांतर के विभेद ने नहीं तोड़ा है। जमीन-जमीन के फर्क के बावजूद इनकी कविताओं में मानवीय चिंतन का पक्ष हर कहीं समान रूप से उभरकर सामने आया है तथा विश्व मानवता के किसी भी अंतःबाह्य संघर्ष में कविता उसके साथ रही है। उसमें मानव-मन की सादगी, सरलता व मनुष्यता के दुर्लभ प्रतिबिंब दीख पड़ते हैं।

कविता हर बार एक नई अनुभूति, एक नई प्रतीति की तरह हमारे सम्मुख उतरती है। वह कवि के भीतर ही नहीं, उसके पाठक के भीतर भी एक कवितामयी सृष्टि संभव करती है कि हम उस विस्मयता के मुरीद हो उठते हैं, जिसके वशीभूत होकर कवि उस अलक्षित प्रतीति और अनुभूति को छू पाता है। वही उस अनुभूति का भोक्ता और स्रष्टा है। तादेऊष रूज़ेविच की एक कविता का ख्याल हो आता है, जो उन्होंने कविता के बारे में ही लिखी है—

कविता हमेशा ही
एक कविता का रूप
धारण नहीं कर पाती

पचास साल तक
कविता लिखते रहने के बाद
एक कवि को ऐसा लग सकता है
कि पेड़ की तरह होती है कविता
या चिड़िया की तरह उड़ती हुई
या जैसे उजाला
या जैसे बंद होंठों के घोंसले में
दुबकी हुई चुप्पी
या जिंदगियाँ कवि के अंदर
कहीं अरूप अवस्तु।

(न सीमाएँ न दूरियाँ, अनुवाद : कुँवर नारायण, पृष्ठ 171)

कविता की उड़ान और उसके आलोक के मध्य होंठों में दुबकी हुई एक चुप्पी की तरह इस कवि ने कविता को देखा है। याद आते हैं केदारनाथ सिंह संभवतः 'यहाँ से देखो' संग्रह में यह कहते हुए कि जब भी मैंने कविता के बारे में सोचा, रामचंद्र शुक्ल की मूँछें याद आईं। इसका आशय यह कि कविता इतने रहस्यों और विस्मयों-भरी होती है कि वह बंद होंठों की चुप्पी में कहीं ज्यादा अभिव्यक्त होती है। रूज़ेविच एक कविता 'प्रूफ्स' में यह भी कहते हैं—

मृत्यु कविता की एक पंक्ति
भी शुद्ध नहीं कर सकती
क्योंकि वह प्रूफरीडर नहीं है
न किसी संपादिका की तरह
हमदर्द।

(तादेऊष रूज़ेविच : सेलेक्टेड पोएम्स, पृष्ठ 110)

विस्मयता और संघर्ष ही कविता की जान है। अच्छी कविता अपने बिंब और रूपकों के अवगुंठन में लिपटी हुई होती है। वह उतना ही खुलती है, जिसमें उसकी नग्नता न दिखे और कविता का अर्थ खुल जाए। जहाँ तक कविता और जीवन-संघर्ष का रिश्ता है, ब्रेख्त की कविताएँ इसकी गवाह हैं। 'टू दोज हू बार्न लेटर'—यानी नई पीढ़ी को संबोधित कविता का अंत वे इन पंक्तियों से करते हैं—

तुम जो इस सैलाब से उबरकर निकल आए हो
जिसमें हम डूब गए
याद रखना, जब हमारी विफलताओं पर बात करना
तो उस अँधेरे समय के बारे में बात करना मत भूलना
जिससे तुम बचकर निकल आए हो
हमने जितने ज्यादा जूते नहीं बदले
उससे ज्यादा मुल्क बदले
युद्धों और हताशाओं से गुजरते हुए
जहाँ केवल अन्याय था और कहीं कोई प्रतिकार नहीं।

(टू दोज बार्न लेटर, बर्तोल्त ब्रेख्त : पोएम्स, 1913-1956, पृष्ठ 319)

ब्रेख्त की कविताएँ पढ़ते हुए लगता है यह एक कवि की पीड़ा नहीं है, यह समूची मनुष्यता की पीड़ा है, जो दुनिया में अपनी रिहाइश की तलाश में दर-ब-दर हो रही है। यों तो कहने को पूरी दुनिया मनुष्यों का ही घर है, किंतु समस्त मानवाधिकारों पर विमर्श के बावजूद लाखों-करोड़ों लोग पूरी जिंदगी एक घर की तलाश में बिता देते हैं। पर वह घर सुलभ नहीं हो पाता, जो कविवर अज्ञेय के शब्दों में हमदर्दी के घेरों से घिरा हुआ हो। (ऐसा कोई घर आपने देखा है, अज्ञेय)

कविता करने का एक अर्थ इस दुनिया को सुंदर बनाना भी है, बेहतर बनाना भी है। यह संदेश केवल विदेशी कवियों ने ही नहीं, मुक्तिबोध जैसे हिंदी के कवि ने भी दिया है। उन्होंने कहा है—यह दुनिया जैसी भी हो इससे बेहतर चाहिए/ इसे साफ करने के लिए एक मेहतर चाहिए। कुछ ऐसा ही बर्तोल्त ब्रेख्त कहते हैं—

सुनिश्चित करो कि
जब दुनिया से रुखसत होओ

खुद अच्छे व्यक्ति की तरह नहीं
बल्कि एक अच्छी दुनिया छोड़ते हुए
इस दुनिया से कूच करो।

(ब्रेख्त : ऐज़ दे न्यू हिम, संपादक : ह्यूबर्ट विट, पृष्ठ 99)

पाब्लो नेरुदा न केवल अपने समय के, बल्कि दुनिया के ऐसे कवियों में हैं, जिनकी प्रेम कविताएँ बहुत चर्चित हुईं। उनकी कविता की अंतर्वस्तु के स्पंदन को आज भी पूरी दुनिया में सुना और सराहा जाता है। 'इस रात मैं लिख सकता हूँ कुछ ग़मगीन सतरें'—जैसी कविता बहुधा अनूदित हुई है। कविता के बारे में उनकी एक कविता है 'पोएट्री'।

सन् 1984 में कोरिया की प्रेम कविताओं का एक संग्रह आया था, 'बेस्ट लव्ड पोएम्स ऑफ कोरिया', जिसके अनुवादक थे—शांग शू कोह (Chang soo Koh)। इसमें एक कविता 'ब्लू बड्र्स' है। कवि कहता है, 'जब मैं मरूँ एक नीली चिड़िया होना चाहूँगा/ मैं नीले आकाश और नीले खेतों में उड़ूँ / नीले गीत गाऊँ और नीले चीत्कार/ जब मरूँ / एक नीली चिड़िया होना चाहूँगा।' (अनुवाद : हा-वून हान, पृष्ठ 75)। कोरियाई कविताएँ कोरियाई हृदय का आईना हैं। कोरियाई कवि अपने सुख-दुख के क्षणों और इच्छाओं को कविताओं में व्यक्त करते हैं। यों तो, समूची कोरियाई कविता प्रकृति से अंतरंगता और प्रेम के लिए जानी जाती है। प्रकृति के प्रति एक नॉस्टैल्जिक संवेदना इन कवियों में देखी जाती है। यद्यपि, कोरियाई युद्ध के फलस्वरूप यहाँ के कवि रोजमर्रा के जीवन-परिप्रेक्ष्य और मानव-स्थितियों से जुड़े हैं, तथापि आधुनिक मनुष्य के दैनंदिन मसलों को भी कवियों ने उदारता से फोकस किया है।

2020 में कविताओं के लिए अमरीकी कवयित्री लुइस ग्लिक को नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया था। लुइस ग्लिक की कविता एक तरह से सार्वभौम संवेदना और संबंधों के गहन ताने-बाने का निर्वचन है। उनके गीतात्मक आवेग को लक्ष्य करते हुए ही कवि रॉबर्ट हास ने उन्हें 'कुशल गीतकार' कहकर सराहा है। उनके अब तक कुछ निबंध-संग्रह सहित बारह कविता-संग्रह छप चुके हैं तथा राष्ट्रीय-अंतरराष्ट्रीय पहचान के लगभग सभी महत्वपूर्ण पुरस्कार मिल चुके हैं। उनके यहाँ जीवन-मृत्यु संबंधहीनता और हताशा की आवाजें ज्यादा मुखर दिखती हैं तथा वे एक तरह से अस्तित्ववादी दर्शन से प्रेरित और प्रभावित लगती हैं।

कविता का ताल्लुक पूरे वैश्विक परिवेश से है। हर व्यक्ति के जीवन में कोई-न-कोई कविता होती है, जिसे वह अनुभव तो करता है, कह नहीं पाता। केवल कुछ अपनी काव्यात्मक अभिव्यक्ति को उपयुक्त अर्थ दे पाते हैं। कविता ही है, जो हमारे अंतःकरण के आयतन को सुविस्तृत करती है। उसके हृदय में मरती और क्षतिग्रस्त होती सभ्यता और मानवता के लिए जगह है। कविता स्वयं में एक उच्चादर्श से प्रेरित और प्रतिश्रुत लगती है। ग्रीक कवि कवाफी जब यह कहते हैं कि 'यदि तुम अपना जीवन वैसा नहीं बना सकते जैसा चाहो/ तो इतना करो कम से कम : उसे सस्ता मत बना दो/ दुनिया के बहुत साथ रह के/ बहुत बात करके। (न सीमाएँ, न दूरियाँ, पृष्ठ 57)

कितनी सुंदर कविता है यह कि कविता ही न सुंदर हो, बल्कि यह जीवन भी वैसा हो, जैसा तुम चाहते हो। और अगर यह न हो तो इसे सस्ते सूचकांक तक मत पहुँचाओ।

इसी बात को हिंदी के जाने-माने कवि अज्ञेय कहते हैं, "जब कवि की भाषा घिस-पिटकर अर्थहीन हो गई हो ...जब यह कवि के किसी काम की न रह जाए, तब उसका क्या किया जाए? तब उसे राजनीतिक को दे दिया जाए! ...जिसका सारा अर्थव्यापार उन्हीं अर्थहीन (या कि कहना चाहिए अर्थवंचित) शब्दों के सहारे चलता है। कवि की भाषा सोना है तो राजनीति की भाषा कागजी मुद्रा ...वही विस्फारित कागजी मुद्रा! सोना तो स्वयं अर्थ है (कितने अर्थों में!), कागजी मुद्रा केवल एक वायदा। कवि भाषा धन है, राजनीति की भाषा ऋण (फिर और अर्थ की गूँज)। हमारे राजनीतिक काव्य भाषा के कबाड़िये हैं।" (कवि मन, लेखक अज्ञेय, पृष्ठ 121)

हाल ही में अफ्रो-एशियाई कविताएँ जब नासिरा शर्मा के अनुवादों और व्याख्याओं के साथ आईं तो सहसा विश्व के उन इलाकों की कविताओं से हम रूबरू हुए, जो अब तक सामने न आ सकी थीं। इतने तरह के शायर यहाँ हैं, इतनी खूबियाँ कि बयान के बाहर हैं। यहाँ आँसुओं का सफर है तो जागती आँखों के ख्वाब भी। कश्मीरी शबनम एशाई की नज्में दुख से भीगी हैं। 'सफ़रे ईजाद' में वे कहती हैं, "मैं मोर की मानिंद अपने पैरों को देखकर रोती हूँ/ मेरे कदम मुझे वापस कर दो/इंतेकाल से पहले मैं अपना दिल कहीं बो देना चाहती हूँ।" एक लेबनानी कवयित्री रिश्तों को इस तरह परिभाषित करती है, "मैं जानती हूँ मर्द के दो दिल होते हैं/ और मेरा दिल वचनबद्ध/ मर्द का आना एक हल्का सैलाब है और जाना सिर्फ मलबे का ढेर।" जैसा कि कहा अफ्रो-एशियाई कविताओं में जलावतनी के ग़मों से तार-तार हुई जिंदगी की शायरी है तो युद्ध, कत्लेआम, तबाही और तानाशाही का मंजर भी। इस तरह, आज की वैश्विक कविता विश्व के हालात के रूबरू है। उसका सौंदर्यबोध व्यापक है। दिन-ब-दिन विध्वंस होती प्रकृति के प्रति उसे बचाए रखने की चाहत भी कवि को प्रकृति के स्तवन के लिए उन्मुख करती है, जैसा कि कभी 'पश्य देवस्य काव्यम्' यानी 'प्रकृति को देवताओं का काव्य' कहकर हमारे ऋषियों ने पुकारा था।

कवि भाषा या काव्य भाषा के बरक्स राजनीति की भाषा को कागजी मुद्रा और कवि की भाषा को सोना बताते हुए अज्ञेय ने जताया है कि काव्य भाषा भी मानवीय शील की तरह भाषायी गुणधर्म से संपन्न होनी चाहिए। जब मृत्युशय्या पर पड़े धूमिल जैसे क्रांतिकारी कवि ने कविता को अक्षरों में गिरे आदमी को पढ़ने का उपक्रम बताया था और यह भी कि 'कविता भाषा में आदमी होने की तमीज है' तो उनकी कविता वैश्विक कवियों की ही भाषा में अपना मंतव्य जता रही थी। मम्मट ने भी 'काव्यं यशसेऽर्थकृते व्यवहारविदे शिवेतरक्षतये।' कहकर कविता की जो प्रयोजनीयता निर्धारित की थी, हमारी विश्व कविता इसी ध्येय को अपने सामने रखती आई है। जब वह सत्ता व्यवस्था को प्रश्नांकित करती है, तो भी इसलिए कि वह न केवल समाज का, बल्कि अपने समय और व्यवस्था का क्रिटिक भी है।

समूचे विश्व को अपनी धड़कनों में सहेजे रहने वाली कविता का यही चिरंतन, शाश्वत मंतव्य, वक्तव्य और गंतव्य है।

देश से सात समंदर तक की कथक की यात्रा

गीत, नृत्य और वाद्य—यह तीनों कलाएँ संगीत के अंग हैं। 'कथक' का अर्थ है—'नवीन' या 'नूतन'। यह कथाओं पर आधारित होता है। मान्यता है कि कथक नृत्य की शुरुआत आर्य काल में हुई थी। वही कथक नृत्य के निर्माता थे। ये आर्य जातियाँ पाषाण और धातु काल में अपने देवताओं को प्रसन्न करने के लिए मूर्तियों के आगे नृत्य करते थे। इसका प्रमाण अजंता, एलोरा, भुवनेश्वर, कोणार्क, जागेश्वर, खजुराहो की मूर्तियाँ हैं।

शशिप्रभा तिवारी

केंद्रीय फिल्म प्रमाणन बोर्ड, संस्कृति मंत्रालय भारत सरकार की विशेषज्ञ समिति, आकाशवाणी की कलाकार चयन समिति तथा अनेक राष्ट्रीय पुरस्कारों की चयन समिति की सदस्य।

प्रकाशन : तीन दशकों से राष्ट्रीय स्तर पर विविध विधाओं में अनेक समाचार पत्र/पत्रिकाओं के लिए सृजनात्मक एवं विश्लेषणात्मक लेखन। 'पंख', 'शास्त्रीय नृत्यकारों से अंतरंग संवाद', 'लोकनाट्य की विरासत', 'कान्हा सुन ले' शीर्षक मूल पुस्तकें प्रकाशित। 'भारतीय कला दर्शन', 'कला साधना के वटवृक्ष', 'कलानीतिज्ञ अमीरचंद' आदि पुस्तकों का संपादन; अमूर्त सांस्कृतिक धरोहर आई.सी. एच. फेलोशिप; 2015-2017 सीनियर फेलोशिप, संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार आदि शोध कार्य।

सम्मान : डॉ. विद्यानिवास मिश्र सम्मान (उत्तर प्रदेश, सरकार), बेस्ट क्रिटिक नेशनल अवार्ड, शब्द शिल्पी सम्मान, सांस्कृतिक सम्मान, राजीवरत्न सद्भाव सम्मान, आचार्य अभिनव गुप्त सम्मान आदि।

संपर्क : मोबाइल— 9716047200

इस संदर्भ में आचार्य वृहस्पति लिखते हैं, 'कथक' शब्द का अर्थ है, 'कथा कहने वाला', लेकिन कथा बाँचने वाले व्यास लोग 'कथक' नहीं हैं। 'कथक' शब्द का एक अन्य पर्याय है, 'कथाप्राण' अर्थात् वह वर्ग, जिसकी प्राणयात्रा कथा से चलती हो। इसे 'नाट्यवक्ता' भी कहा गया है। 'कथक' शब्द का एक अन्य पर्याय है, 'एक नट, जो अकेला ही किसी कथा के संपूर्ण पात्रों का अभिनय करता हो। इस सबका निष्कर्ष यह है कि कथा का अभिनय करके आजीविका चलाने वाला वर्ग-विशेष 'कथक' कहलाता है।

आचार्य वृहस्पति के अनुसार नृत्य का सामान्य सिद्धांत है, 'शरीर से गीत का आलंबन, हाथों से अर्थ का प्रदर्शन, नेत्रों से भावों का भावन और पैरों से ताल का निर्णय करना चाहिए। यह विशेषता सभी नृत्यों में दिखाई देती है। अगली बात है, 'जिधर हाथ हो, उधर दृष्टि हो, जिधर दृष्टि हो, उधर मन हो, जिधर मन हो, उधर भाव हो, उधर रस होना चाहिए।' जब तक विभिन्न भावों और रसों के अभिनय की दिशा नहीं होगी, तब तक बात कैसे बनेगी!

ऐसी मान्यता है कि पौराणिक काल से कथक का संबंध मंदिरों से रहा है। तेरहवीं शताब्दी के ग्रंथ 'संगीत रत्नाकर' में कलाकार के रूप में 'कथक' जाति का उल्लेख है। उस समय यह नृत्य मंदिरों से जुड़ा हुआ था, जिसकी परंपरा इस युग में भी अयोध्या के आस-पास विद्यमान है। इस बारे में रामनारायण अग्रवाल का मानना है कि दिल्ली के कथक केंद्र ने राजधानी में 'मंदिरों में कथक नृत्य' विषय पर एक महत्वपूर्ण वर्कशॉप आयोजित की थी। उसमें अयोध्या

के कथक नृत्यकारों ने इस परंपरा के वर्तमान स्वरूप की एक जीवंत झलक प्रस्तुत की थी। लेकिन मुसलमान शासन काल में कुछ क्षेत्रों के कथक कलाकार ही अयोध्या जैसे क्षेत्र में ही मंदिरों से जुड़े रह सके। अधिकांश महत्वाकांक्षी कलाकार उस समय राजदरबारों से संबद्ध हो गए। वे धार्मिक परंपरा से कटकर शृंगारी हाव-भाव और विलासिता की ओर उन्मुख हो गए, जिससे कथक का मूल रूप ही बदल गया। वाजिद अली शाह के दरबार में उनकी विलासिता ने एक नया ही रूप ले लिया था। इस काल में कथक विलासी नरेशों के मनोरंजन तथा मुजरों का माध्यम बन गया था। लेकिन, सन् 1486 से 1516 तक राजा मानसिंह तोमर के दरबार में भी नृत्य हुआ करता था। उनके समय में संस्कृत के छंदों के स्थान पर हिंदी के छंदों की कविताएँ बनीं। खास तौर पर ध्रुवपद खड़ी बोली की कविता में गाया गया।

गौरतलब है कि एक समय में कथक कलाकारों के नाम से जाना जाता था। उस समय के गुरुओं ने नृत्य को अपने-अपने नाम के घराने से पुकारना शुरू कर दिया था। इस आपसी मतभेद को दूर करने के लिए करीब 150 साल पहले जयपुर में एक सम्मेलन बुलाया गया। उस सम्मेलन में तय हुआ कि अपने नाम की जगह, स्थान के नाम से घराने पुकारे जाएँ। क्योंकि जयपुर और लखनऊ में कथक कलाकारों की संख्या अधिक है, इसलिए जयपुर और लखनऊ घराने के नाम से आचार्य माने जाने लगे। हालाँकि, उस समय तक पंडित बिंदादीन महाराज, जानकी प्रसाद, पंडित सुखदेव प्रसाद, नायक मक्खन आदि के नाम के घराने के नाम की नींव पड़ चुकी थी।

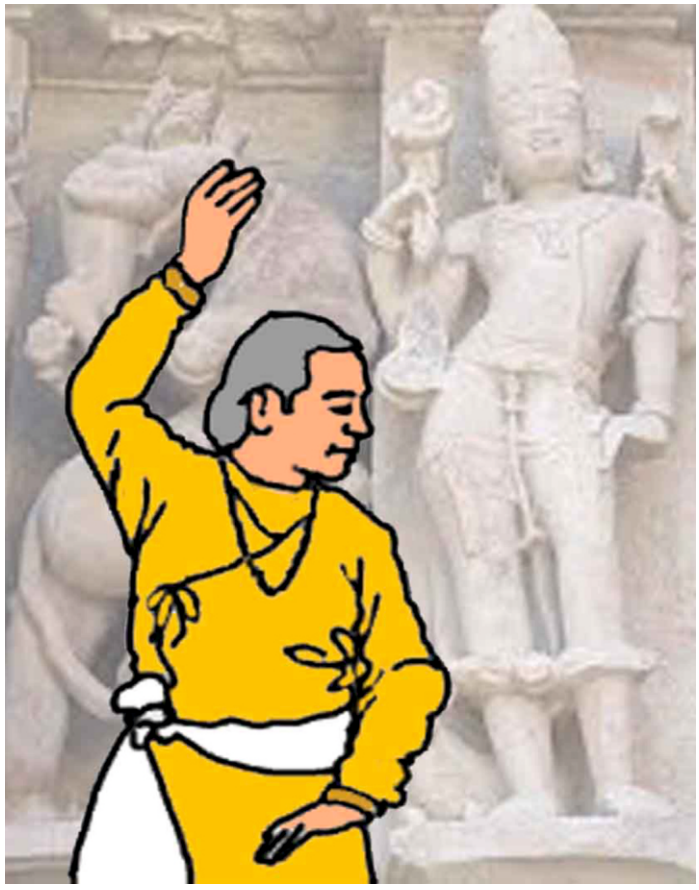

पंडित बिंदादीन महाराज और पंडित कालका प्रसाद ने जिस प्रकार से कथक को सम्मान दिलाया, उसे उनकी बाद की पीढ़ी ने और आगे बढ़ाया। पंडित अच्छन महाराज, पंडित लच्छू महाराज, पंडित शंभू महाराज, पंडित सुखदेव महाराज ने अपनी-अपनी प्रतिभा का लोहा मनवाया। कथक सम्राट पंडित बिरजू महाराज ने कथक को आधुनिक अंदाज में प्रतिष्ठित करके उसे उच्च शिखर पर प्रतिष्ठित कर दिया है। वहीं, पंडित सुखदेव की सुपुत्री विदुषी सितारा देवी ने कथक को नई पराकाष्ठा पर पहुँचाया।

रामनारायण अग्रवाल के अनुसार भारतीय स्वतंत्रता के बाद कथक नृत्य में नवीन चेतना का उदय हुआ। सरकार ने संगीत नाटक अकादेमी की स्थापना की। विभिन्न संस्थाओं व सिनेमा ने भी कथक नृत्यकारों को विशेष रूप से सम्मान और संरक्षण दिया, जिससे उसका वर्तमान युग में अनुपम विकास हुआ है। कथक नृत्य के विकास के लिए केंद्र सरकार ने दिल्ली में 'कथक केंद्र' की स्थापना की। उधर, श्रीराम भारतीय कला केंद्र और दिल्ली नाट्य बैले सेंटर जैसी संस्थाओं ने कथक के आधार पर नृत्य नाटिकाएँ तैयार की हैं। उनका देश-विदेश में प्रचार हुआ।

बहरहाल, कथक को नई ऊँचाई और गुरु-शिष्य परंपरा को प्रचारित-प्रसारित करने का काम सत्तर और अस्सी के दशक में खूब हुआ। इसमें कई नृत्यकार और नृत्यांगनाओं का योगदान महत्वपूर्ण हैं, जैसे—पंडित बिरजू महाराज, पंडित मुन्ना शुक्ला, पंडित गौरी शंकर, पंडित गोपीकृष्ण, पंडित कुंदन लाल गंगानी, विजयशंकर, उमाशंकर, उर्मिला नागर, अलका नुपुर, रोशन कुमारी, रानी कर्णा, गीतांजलि लाल आदि।

यह सच है कि पहले कलाकार भगवान की भक्ति के लिए नृत्य करते थे, लेकिन आज दर्शकों के समूह विशेष को रिझाने के लिए और उनके मनोरंजन के लिए नृत्य करते हैं। ऐसा पंडित बिरजू महाराज का मानना था। उनका कहना था कि भागवत पुराण में इस कथक नृत्य का आभास मिलता है। अगर किसी कथा को सीधा-सादा न कहकर अपने हाव-भाव द्वारा प्रदर्शन करके उस कथा का वर्णन किया जाए, तो उसमें अधिक रोचकता आ जाती है। और देखने वाले को भी आनंद आता है। उस समय मंदिरों में नृत्यकारों और संगीतकारों का समूह होता था। कलाकार गाकर और नृत्य करके, सिर्फ भगवान को रिझाते थे।

हमारे दादा जी बहुत बड़े पंडित थे। जब वह पूजा पर बैठ जाते, तो चाहे राजा हो या नवाब, कोई आए या बुलाए, वे बिना पूजा खत्म किए किसी से बात नहीं करते थे। जब वह दरबार में जाते थे, तब स्वयं नवाब वाजिद अली शाह उनके सम्मान में गद्दी से उठकर एक हाथ से अभिवादन करते थे। इतना सम्मान उस समय उनलोगों को प्राप्त था। वाजिद अली शाह को राधा-कृष्ण की लीला बहुत पसंद थी। वास्तव में, कहा जाए तो मुगलकाल में ही लय की गति में

“कथक नृत्य का संबंध मंदिरों से रहा है। इस बात को कथक नृत्यांगना मंजूश्री चटर्जी भी उचित मानती हैं। वह कहती हैं कि वैष्णव धर्म के प्रभाव और प्रोत्साहन से उत्तर में जो नृत्य विकसित हुआ वह अपनी शैली, शिल्प और प्रकार में कथक ही प्रतीत होता है। वैष्णव काव्य में वर्णित नटवर कृष्ण और उनकी संगिनी राधा कीर्तन और नृत्य के दैवीय नायक और नायिका हैं। कृष्ण को नटवर, नटनागर आदि नामों से भी विभूषित किया गया है। दरअसल, ब्रज में ध्रुपद अपने स्वरूप में धार्मिक था। कथक में शुरुआत में गांभीर्य और गरिमामय भव्यता थी। इस तरह, कथक नृत्य का पूरा रूप कथ्य, संगीत, केंद्र, आधार सब पूरी तरह धार्मिक था, जहाँ कृष्ण और राधा इसके आराध्य थे। कथक को आज नटवरी नृत्य भी कहा जाता है।”

उन्नति हुई। उस समय नृत्य का अभिनय पौराणिक होता था। लेकिन, समय के साथ-साथ उसका स्वरूप बदलता गया। पहले जनता कलाकार के मंच पर आते ही खड़े होकर प्रणाम करती थी और उन्हें सम्मान देती थी। आज समय इतना बदल गया कि कलाकार मंच पर आकर जनता को प्रणाम करता है। पहले कलाकार भगवान को रिझाने के लिए नृत्य करते थे, आज इनसान को रिझाने और उनके मनोरंजन के लिए नृत्य करते हैं।

कथक नृत्य का संबंध मंदिरों से रहा है। इस बात को कथक नृत्यांगना मंजूश्री चटर्जी भी उचित मानती हैं। वह कहती हैं कि वैष्णव धर्म के प्रभाव और प्रोत्साहन से उत्तर में जो नृत्य विकसित हुआ वह अपनी शैली, शिल्प और प्रकार में कथक ही प्रतीत होता है। वैष्णव काव्य में वर्णित नटवर कृष्ण और उनकी संगिनी राधा कीर्तन और नृत्य के दैवीय नायक और नायिका हैं। कृष्ण को नटवर, नटनागर आदि नामों से भी विभूषित किया गया है। दरअसल, ब्रज में ध्रुपद अपने स्वरूप में धार्मिक था। कथक में शुरुआत में गांभीर्य और गरिमामय भव्यता थी। इस तरह, कथक नृत्य का पूरा रूप कथ्य, संगीत, केंद्र, आधार सब पूरी तरह धार्मिक था, जहाँ कृष्ण और राधा इसके आराध्य थे। कथक को आज नटवरी नृत्य भी कहा जाता है।

कथक के विकास में कई कलाकारों और कलाप्रेमियों का अमूल्य योगदान है। इस संदर्भ में, कथक नृत्यांगना रश्मि वाजपेयी लिखती हैं कि कथक को करने वालों का विशिष्ट स्थान उत्तर भारत ही रहा है। यह नृत्य परंपरा केवल दरबारों तक सीमित नहीं थी, उसका मूल स्रोत मंदिर ही थे। राजस्थान के चुरू, सुजानगढ़ में कथिकों के गाँव हैं। संगीत-नृत्य ही उनका व्यवसाय है। राजस्थान कथकों का गढ़ रहा है। लखनऊ घराने के परिवार और शिष्य परंपरा के नर्तक को छोड़कर अधिकांश नर्तकों का संबंध जयपुर घराने से है। कथक नृत्य की एक विकसित और ठोस परंपरा रही है। इसके मिले-जुले रूप का ही परिणाम आज का कथक नृत्य है। कथक के पुनरुत्थान में निर्मला जोशी का योगदान अनूठा है। उन्होंने 'संगीत भारती' और 'भारतीय कला केंद्र' की स्थापना की। इसमें कथक और हिंदुस्तानी शास्त्रीय संगीत के गुरुओं का समागम हुआ, जो उनके प्रयास से संभव हुआ। एक समय ऐसा था, जब पंडित शंभू महाराज, पंडित सुंदर प्रसाद, बिरजू महाराज, डागर बंधु, उस्ताद मुस्ताक हुसैन खाँ, उस्ताद हाफिज अली खाँ और पंडित पुरुषोत्तम दास जैसे कलाकार यहाँ कार्यरत थे।

कला समीक्षक लीली वेंकटरामन ने लिखा है कि सन् 1952 में भारतीय कला केंद्र में माया राव, कुमुदिनी लाखिया, उमा शर्मा, कमला कीर्तिकर, रीना सिंह, केशव कोठारी, बेला अरनब ने शंभू महाराज से नृत्य सीखना शुरू किया। जयपुर घराने के प्रतिनिधि सरीखे गुरु सुंदर प्रसाद भी मुंबई की अपनी संस्था को छोड़कर भारतीय कला केंद्र में आ गए थे। वहाँ युवा बिरजू महाराज भी आ गए थे। कलाकेंद्र का माहौल कुछ-कुछ रुक्मिणी देवी के कलाक्षेत्र जैसा बना, जिसमें प्रशिक्षणार्थियों को नृत्य और संगीत के क्षेत्र के उत्कृष्ट व्यक्तियों को जानने-सुनने और सीखने का अवसर सहज ही प्राप्त हो जाता है। इसी क्रम में, संगीत नाटक अकादेमी के अंतर्गत संचालित होने वाले आज का कथक केंद्र पहले भारतीय कला केंद्र का ही एक अंग था और इसकी शुरुआत हुई थी सन् 1964 में। इसे कथक केंद्र का नाम मिला और यह संगीत नाटक अकादेमी का अंग बन गया।

कथक नृत्यांगना रोहिणी भाटे और कुमुदिनी लाखिया ने भी कथक नृत्य को एक नया आयाम दिया। कथक नृत्यांगना रोहिणी भाटे ने लच्छू महाराज और मोहन कल्याणपुरकर से नृत्य सीखा। उन्होंने केशवराव भोले और वसंतराव देशपांडे से संगीत की शिक्षा ली। सो, उन्होंने पुणे में नृत्य सिखाना शुरू किया। वहीं, मायाराव बेंगलुरु और कुमुदिनी लाखिया ने अहमदाबाद में नृत्य विद्यालयों की शुरुआत की। कुमुदिनी लाखिया ने कथक की वृत्ताकार गति, रैखिक ज्यामिति और पद संचालन का अनूठा इस्तेमाल करते हुए, कथक को अपरिमित संभावनाओं से परिपूर्ण किया। उन्होंने कथक की प्रयोगशीलता को अपनी रचनाधर्मिता में नया आकार दिया। और यह साबित किया कि परंपरागत और 'ऑर्थोडॉक्स' होने में फर्क है। उन्होंने अदिति मंगलदास, प्रशांत शाह, दक्षा सेठ जैसी शिष्याओं को तैयार किया। इस सिलसिले में मंजूश्री चटर्जी, गुरु मुन्ना शुक्ला, राजेंद्र गंगानी, प्रेरणा श्रीमाली, उमा डोगरा, शाश्वती सेन, वास्वती मिश्र, कृष्ण मोहन महाराज, राममोहन महाराज, नंदिनी सिंह, उर्मिला नागर, गीतांजलि लाल, राजश्री शिरके, उर्मिला शर्मा, रानी खानम ने भी अपनी परिकल्पना से कथक को समृद्ध किया है।

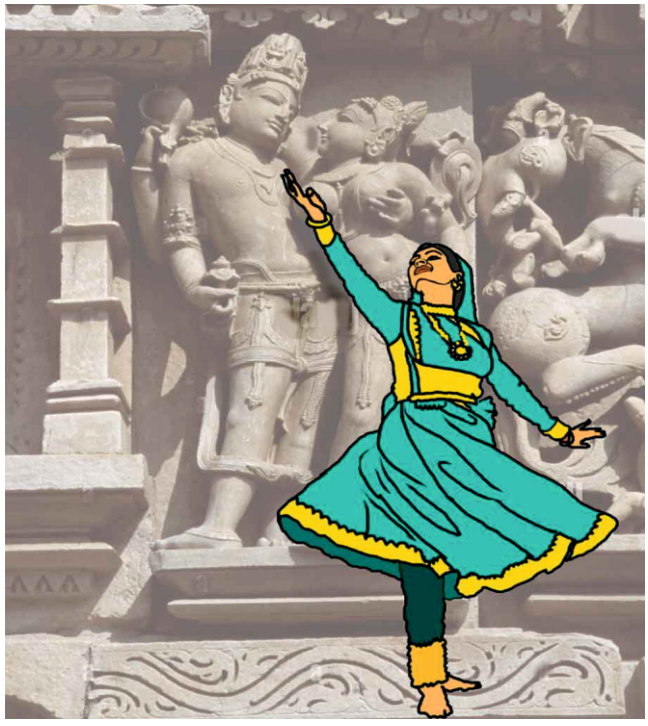

बहरहाल, कथक नृत्य के क्षेत्र में युवा प्रतिभाओं ने अपनी मेहनत और गुरुओं के मार्गदर्शन में अच्छी उपस्थिति दर्ज की है। लखनऊ और जयपुर घराने के कुछ कलाकार, मसलन—गौरी दिवाकर, शैलजा नलवड़े, नम्रता पमनानी, विद्या लाल, पूर्णिमा राय, मोनिषा नायक, प्रतिभा सिंह, स्वाति सिन्हा, समीक्षा शर्मा, रश्मि उप्पल, रचना यादव, पंखुड़ी श्रीवास्तव, शांभवी शुक्ला, मोउमाला नायक, पार्वती दत्ता ने अपने काम से कला जगत में पहचान बनाई है। वहीं, युवा नृत्यकारों में अफसर मुल्ला, हेमंत कलिता, अभिमन्यु लाल ने भी अपनी प्रतिभा का परिचय दिया है। इसके अतिरिक्त, बनारस घराने के माता प्रसाद मिश्र, रविशंकर मिश्र, विशाल कृष्ण, रुद्र शंकर मिश्र ने भी कला जगत में अपनी जगह बनाई है। गौरतलब है कि कुछ कलाकारों ने विदेश में रहकर अपनी नई पहचान गढ़ी है। इसमें कुछ कलाकार हैं—प्रताप पवार, नाहिद सिद्दिकी, चित्रेश दास, अजय व काकोली मिश्र, प्रशांत शाह, वैशाली त्रिवेदी आदि। हालाँकि, यह सूची बहुत लंबी है। हर कलाकार का नाम लिख पाना संभव नहीं है।

वास्तव में, कथक नृत्य परंपरा की लंबी यात्रा है। वह मंदिरों, राजदरबारों, मंचों, उत्सवों की शोभा बनती रही है। कोरोना काल 2020-2021 में जब पूरा विश्व अपने-अपने घरों की चारदीवारों में जीने को मजबूर थे ऐसे में कलाकार सोशल मीडिया—फेसबुक, इंस्टाग्राम, यू-ट्यूब चैनलों के माध्यम से सामने आने लगे। इस संदर्भ में, चिंतक कृष्ण गोपाल जी लिखते हैं कि जैसे ही कोई संकट आता है, विपरीत परिस्थिति आती है, कला अपना मार्ग बदल लेती है। दूसरा नया रूप ले लेती है। कला की अपनी प्रकृति है। कला विशेष समय में विशेष प्रकार का भाव लेकर आती है। कला भारतीय मन में अध्यात्म को लेकर चलती है। युग-युग के सत्य की जो खोज है, उस सत्य की खोज का नाम भारत में कला है। क्योंकि अध्यात्म निश्चित है। हमारे साहित्य, संगीत, जीवन, जानकारी, परंपरा सभी का आधार अध्यात्म है। उस अध्यात्म को एक रूप देने का काम कला करती है। हमारी कला बताती है कि सारी प्रकृति, सृष्टि एक है। यह सबका एकात्मबोध करा देती है।

यहाँ वरिष्ठ शास्त्रीय नृत्यांगना एवं पूर्व राज्यसभा सांसद सोनल मानसिंह की बातों का जिक्र करना जरूरी लगता है। सोनल जी कहती हैं कि हमारे यहाँ खोज की परंपरा थी। आत्मज्ञान का संस्कार था समाज में। हमारी परंपरा इसीलिए 'तत्त्वमसि' और 'आत्मानंद' की बात करती थी। इसी के लिए उपनिषद्, वेद, शास्त्र लिखे गए और कलाओं का सृजन हुआ। इसमें नृत्य या संगीत तो उस संस्कृति का एक छोटा-सा अंग था। मूल बात आपकी चेतना और ज्ञान की संपदा के इर्द-गिर्द घूमती थी, दुर्भाग्य से जिस पर संकट लाया जा रहा है।

हमारी सांस्कृतिक प्रतीक 'गंगा' है। 'गंगा' का मतलब है—'गम गच्छति इति गंगा' अर्थात् जो बहता है, वह सब कुछ गंगा है। हमारी परंपरा, हमारी कलाएँ जो कुछ भी बहकर आज चली आई हैं, वह सब गंगा ही हैं। इधर, गंगा का मार्ग अवरुद्ध हो रहा है। इसी गंगा की तरह, हमारी संस्कृति, कलाएँ और ज्ञान के सारे संसाधन प्रतिवर्ष थोड़ा पीछे जा रहे हैं। उनका मार्ग अवरुद्ध हो रहा है। इसके प्रति हमारे समाज को सचेत होना होगा।

विश्व खेल-पटल पर भारत कहाँ?

अपनी ताकत का इजहार करना मनुष्य की आदत भी है और मनुष्य की कमजोरी भी। आज की सभ्य कही जाने वाली दुनिया में अपनी ताकत का इजहार खेल के मैदानों में होता है। जो देश विज्ञान, तकनीक व शोध में जितना ज्यादा अग्रणी होता है, वही देश ओलंपिक में सबसे ज्यादा पदक जीतता है। इसीलिए हम देखते हैं कि अमेरिका, सोवियत रूस, चीन, दक्षिण कोरिया, जर्मनी, इंग्लैंड व जापान जैसे देश ज्यादा पदक जीतते हैं। यह विचार करना जरूरी हो गया है कि खेलों की दुनिया में भारत किस स्थान पर है। चूँकि 6 अप्रैल को अंतरराष्ट्रीय खेल दिवस मनाया जाता है, तो वर्तमान भारतीय स्थिति का आकलन दिलचस्पी का विषय हो गया है। हम यह भी जानते हैं कि भारत ने सन् 2036 के ओलंपिक के आयोजन की दावेदारी पेश की है। यह बहुत ही महत्वाकांक्षी कदम है। पर निरंतर उन्नति करते भारत के लिए ऐसा कर पाना असंभव नहीं है। सन् 2036 के ओलंपिक की दावेदारी के पहले सन् 2030 में कॉमनवेल्थ गेम्स भी भारत में आयोजित हो सकते हैं। लेकिन केवल आयोजनों की सफलता से ही हमें गर्व नहीं होना चाहिए। भारत के लिए यह निहायत जरूरी है कि इन आयोजनों में अंतरराष्ट्रीय स्तर के खिलाड़ी पेश कर सकें, जो पदक जीत सकते हैं। अन्यथा हमें तमाशबीन देश माना जाने लगेगा।

भारत में कुछ ही खेल ज्यादा लोकप्रिय हैं। क्रिकेट, फुटबॉल व कबड्डी के दर्शकों की संख्या क्रमशः 612 मिलियंस, 305 मिलियंस व 208 मिलियंस आँकी गई है। इसका मतलब यह हुआ कि 42 प्रतिशत खेल दर्शक आबादी क्रिकेट को देखती व पसंद करती है, जबकि फुटबॉल की 21 प्रतिशत तथा कबड्डी की 4 प्रतिशत पसंदगी दर्ज की गई है। भारत के क्रिकेट के आई.पी.एल. की दर्शक-संख्या किसी भी अन्य टूर्नामेंट से ज्यादा है।

भारत सरकार की खेल-नीति में यह स्पष्ट है कि देश केवल क्रिकेट से प्यार करने वाला देश ही न कहा जाए, बल्कि एथलेटिक्स सहित अन्य खेलों का विकास करने वाला राष्ट्र भी कहा जाए। भारत सरकार की योजना तो यह है कि सन् 2025 में जारी हुए ग्लोबल स्पोर्ट्स एंड सॉफ्ट पॉवर इंडेक्स में भारत 18वें स्थान पर है। आबादी, खेल प्रेम व सुविधाओं के हिसाब से यह

सुशील दोशी

पिछले पाँच दशकों से हिंदी कमेंट्री कर रहे पद्मश्री सम्मान से सम्मानित सुशील दोशी देश व विदेश में एक जाना-पहचाना नाम है, जिनकी हिंदी कमेंट्री की लोकप्रियता ने क्रिकेट को भारत के हर कोने में स्थापित किया—वह भी उन दिनों, जब टेलीविजन व मोबाइल नहीं थे। 90 से ज्यादा टेस्ट व 600 से ज्यादा ओ.डी.आई. तथा टी-20 मैच की कमेंट्री, 14 विश्व कप (टी-20 व ओ.डी.आई. मिलाकर) की कमेंट्री करने वाले वे देश के पहले हिंदी कमेंट्रीकार हैं।

वर्ष 2016 में उन्हें भारत सरकार ने पद्मश्री से नवाजा व मध्यप्रदेश सरकार ने लाइफटाइम अचीवमेंट अवार्ड से सम्मानित किया। इंटरनेशनल होलकर स्टेडियम के कमेंट्री बॉक्स का नाम 'पद्मश्री सुशील दोशी कमेंट्री बॉक्स' किया गया।

हजारों लेख व 15 पुस्तकों का प्रकाशन। पेंगुइन द्वारा प्रकाशित पुस्तक 'आँखों देखा हाल' को मध्य प्रदेश साहित्य अकादमी ने आत्मकथा श्रेणी में 'अखिल भारतीय पुरस्कार' प्रदान किया।

स्थिति काफी बुरी मानी जा सकती है। इसमें सुधार की पर्याप्त गुंजाइश है। यह तभी हो सकेगा जब खेलों के मूलभूत ढाँचों में सुधार हो। यह तभी संभव है, जब पर्याप्त धनराशि इसके लिए मुहैया हो और खेलों के लिए जमीनी स्तर पर कारगर प्रयास हों। केवल सरकार ही नहीं, निजी क्षेत्र की बड़ी कंपनियाँ भी इसमें सकारात्मक योगदान दे सकती हैं। अमेरिका इसका सबसे बड़ा उदाहरण है, जहाँ सरकार के अलावा कंपनियाँ व आम लोग खेलों की सफलता को राष्ट्रीय गौरव के साथ जोड़कर देखते हैं।

भारत ने अंतरराष्ट्रीय स्तर पर कई महत्वपूर्ण सफलताएँ हासिल की हैं। सन् 2023 के एशियाई खेलों में 107 पदक जीतकर भारत ने इतिहास रचा था। ओलंपिक खेलों में भी भारत का रिकॉर्ड सुधरता जा रहा है। सन् 2020 के टोकियो ओलंपिक खेलों में भारत ने सात पदक तथा सन् 2024 के पेरिस ओलंपिक में छह पदक जीते थे। बैडमिंटन, चेस, कुश्ती, भारोत्तोलन, शूटिंग, तीरंदाजी, मुक्केबाजी, हॉकी व जैवलिन थ्रो जैसे खेलों में भारत का असर व सुधार देखने को मिल रहा है। यह नहीं भूलना चाहिए कि सन् 2016 के रियो ओलंपिक में भारत ने केवल दो पदक जीते थे, जो बढ़कर टोकियो के 2020 के ओलंपिक में सात पदक तक पहुँच गए थे। इसका मतलब साफ है कि सरकारी स्तर पर तथा समाज के आम जन में खेलों के प्रति ललक, जागृति व महत्वाकांक्षा बढ़ी है, अंतरराष्ट्रीय स्तर पर नए मापदंड स्थापित करने की तमन्ना ने जन्म लिया है। अब खेलों में लगाया गया पैसा नाहक व्यर्थ नहीं कहा जाता है, बल्कि राष्ट्रीय प्रतिष्ठा को बढ़ाने वाला कार्य माना जाता है। सोच में यह सकारात्मक परिवर्तन ही वह सीढ़ी है, जहाँ से विश्व-स्तर की सफलताएँ प्राप्त हो सकेंगी।

भारत ने ओलंपिक में सबसे ज्यादा कामयाबियाँ तो फील्ड हॉकी में प्राप्त की हुई है। हॉकी में अब तक हमने 13 पदक जीते हैं, जिनमें आठ स्वर्ण पदक हैं। भारतीय हॉकी का वह स्वर्णिम दौर रहा, जिसमें ध्यानचंद, रूप सिंह, किशनलाल, शंकर लक्ष्मण व बलबीर सिंह जैसे खिलाड़ियों ने अपनी महिमा को प्रदर्शित किया व विश्व-पटल पर अपना नाम अंकित किया। अब तो भारतीय हॉकी अपने पुराने गौरव को तरस रही है। खेल भी अब साधारण जमीन के बनाए एस्ट्रो टर्फ पर खेला जाने लगा है, जिससे खेल अब ज्यादा तेज गति वाला तथा ज्यादा फिटनेस आधारित हो गया है। छोटे-छोटे कलात्मक पास देकर खेला जाने वाला यह खेल हिट एंड रन यानी लंबे पास देकर जल्दी परिणाम देने वाला खेल बन गया है। भारत अब इसमें पिछड़ गया है। विदेशी प्रशिक्षण नियुक्त करके तथा फिटनेस में सुधार को मूलमंत्र बनाकर, हालाँकि सुधार की चेष्टा की जा रही है और कुछ परिणाम भी हासिल हो रहे हैं, पर फिर भी, एशियाई हॉकी की जादूगरी व प्रभुत्व अब बीती बात हो गई है। पश्चिमी जर्मनी, स्पेन, बेल्जियम, ऑस्ट्रेलिया, हॉलैंड व इंग्लैंड जैसे देश हमसे आगे निकल गए हैं।

टीम खेलों में कभी फुटबॉल में भी हमारा दबदबा था। बहुत कम लोगों को मालूम है कि सन् 1956 के ओलंपिक में भारत को फुटबॉल में चौथा स्थान प्राप्त हुआ था। सन् 1950 में भारत ने वर्ल्ड कप खेलने की पात्रता भी हासिल कर ली थी। सन् 1964 के एशियन गेम्स में हम

उपविजेता रहे थे। पर क्रिकेट के प्रभुत्व, पैसे की कमी व योग्य लोगों की एसोसिएशन में कमी के कारण लोकप्रिय होने के बावजूद, फुटबॉल भारत में बुरी तरह पिछड़ा रहा है। सन् 2025 में भारत आए अर्जेंटीना के नियोलेन मेसी को केवल देखने के लिए लालायित भारतीय फुटबॉल प्रेमियों की लाखों की भीड़ ने दुनिया को अचंभित कर दिया था। फुटबॉल के प्रति इस लोकप्रियता व मुहब्बत को प्रतिभा में नहीं बदला जा सका है। इसके लिए संगठन भी काफी हद तक

“अंतरराष्ट्रीय स्तर की सफलता देश में इस खेल के प्रति क्रांति ले आती है। युवा उस सफलता से प्रेरित होते हैं। क्रिकेट में यही हुआ। कपिल देव के नेतृत्व में जब भारत ने सन् 1983 में एक दिवसीय क्रिकेट का विश्व कप जीता तो पूरे देश में क्रिकेट का जुनून सवार हो गया। फिर सन् 2007 में महेन्द्र सिंह धोनी की कप्तानी में टी-20 विश्व कप और सन् 2011 में एक दिवसीय क्रिकेट की लोकप्रियता को स्वप्निल ऊँचाइयों तक पहुँचा दिया। जिस क्रिकेट में खिलाड़ी व संगठन पैसे-पैसे के मोहताज रहते थे, उसमें धनवर्षा होने लगी। रोजगार की नई संभावनाएँ पैदा हो गईं।”

जिम्मेदार है। पश्चिम बंगाल, गोवा, कर्नाटक, केरल व मुंबई में आज भी फुटबॉल लोगों की पहली मुहब्बत है। अंतरराष्ट्रीय स्तर की सफलता देश में इस खेल के प्रति क्रांति ले आती है। युवा उस सफलता से प्रेरित होते हैं। क्रिकेट में यही हुआ। कपिल देव के नेतृत्व में जब भारत ने सन् 1983 में एक दिवसीय क्रिकेट का विश्व कप जीता तो पूरे देश में क्रिकेट का जुनून सवार हो गया। फिर सन् 2007 में महेन्द्र सिंह धोनी की कप्तानी में टी-20 विश्व कप और सन् 2011 में एक दिवसीय क्रिकेट की लोकप्रियता को स्वप्निल ऊँचाइयों तक पहुँचा दिया। जिस क्रिकेट में खिलाड़ी व संगठन पैसे-पैसे के मोहताज रहते थे, उसमें धनवर्षा होने लगी। रोजगार की नई संभावनाएँ पैदा हो गईं। टी-20 क्रिकेट में दो बार पुरुषों की विश्व विजेता भारतीय टीम से जुड़े खिलाड़ियों व सेल से जुड़े सभी वर्गों को जो इज्जत व राशि मिली, उसने सभी खेलों को भारत में पीछे छोड़ दिया।

भारत में नारी शक्ति के बारे में भी लगातार सोचा जा रहा था। भारतीय क्रिकेट कंट्रोल बोर्ड ने जय शाह के नेतृत्व में महिलाओं की समानता का न सिर्फ मुद्दा उठाया, बल्कि हकीकत में बदल भी दिया। पिछला विश्व कप (टी-20) भारतीय महिलओं ने जीतकर देश का नाम गौरवान्वित किया। आज महिला खिलाड़ी भी करोड़पतियों की गिनती में आ गई हैं। स्मृति मंधाना व हरमनप्रीत जैसी खिलाड़ियों ने विज्ञापनों में लाखों के अनुबंध प्राप्त किए। वीमेंस प्रीमियर लीग (डब्ल्यू.पी.एल.) भी शुरू कर दी गई है, जो आई.पी.एल. की तर्ज पर ही है और देशभर में महिलाओं व युवतियों में क्रिकेट के प्रति आई संभावनाओं के प्रति गहरा अनुराग दिखाई देने लगा है। भारत में आई.पी.एल. शुरू हुआ था इंग्लिश प्रीमियर लीग की तर्ज पर। ई.पी.एल. की लोकप्रियता विश्वव्यापी है और फुटबॉल खेल भी दुनियाभर में ज्यादा लोकप्रिय है। अब टी-20 के पदार्पण व बढ़ती लोकप्रियता ने क्रिकेट खेल को विश्वव्यापी बनाने में मदद की है। कम समय में निश्चित परिणाम व खेल में निरंतर अनिश्चितता व रोमांच ने अब अमेरिका, कनाडा व नीदरलैंड जैसे देशों में भी कदम जमा लिया है। अब तो टी-20 क्रिकेट के ओलंपिक प्रवेश की भी तैयारी हो रही है।

व्यक्तिगत उपलब्धियाँ हासिल करने वाली कई हस्तियाँ भारत में लोगों को खेलों के प्रति प्रेरित करती हैं। हॉकी जैसे टीम खेल की गौरवशाली उपलब्धियों के अलावा व्यक्तिगत तौर पर अभिनव बिंद्रा के ओलंपिक शूटिंग के स्वर्ण पदक व नीरज चोपड़ा के जैवलिन थ्रो के स्वर्ण पदक ने भी भारतीय खेलप्रेमियों को आंदोलित किया है। बैडमिंटन में पी.वी. सिंधु ने रियो में रजत व टोकियो में 2020 में कांस्य पदक जीता था। शूटिंग में मनु भाकर ने पेरिस में 2024 में दो कांस्य पदक जीते। भारोत्तोलन में मीराबाई चानू ने टोकियो में रजत (सन् 2020) तथा कुश्ती में सुशील कुमार ने बीजिंग 2008 में कांस्य एवं लंदन 2012 में रजत पदक हासिल किया। भारोत्तोलन में ही कर्णम मल्लेश्वरी ने सिडनी में सन् 2000 में महिलाओं में कांस्य जीता तथा सायना नेहवाल ने बैडमिंटन में सन् 2012 के लंदन के ओलंपिक में कांस्य की उपलब्धि पाई। लंदन 2012 ओलंपिक में ही बॉक्सिंग में मैरी कॉम ने कांस्य तथा वालिना बोरगोहेन ने बॉक्सिंग में ही टोकियो 2020 में कांस्य जीतकर भारतीय महिलाओं व देश को गौरवान्वित किया। कुश्ती में साक्षी मलिक (रियो 2016 में कांस्य) तथा बजरंग पुनिया ने (टोकियो में) कांस्य पदक पाया। कुश्ती में ही अन्य पदक विजेता रहे के.डी. जाधव (हेलसिंकी, 2012), योगेश्वर दत्त (लंदन 2012 कांस्य), अमन सारस्वत (पेरिस 2024 कांस्य) ने भी भारत का नाम रोशन किया।

शूटिंग में विजय कुमार (लंदन, 2012 रजत), गगन नारंग (लंदन, 2012 कांस्य) स्वप्निल कुसाले (पेरिस, 2014 कांस्य) व सरबजीत सिंह (पेरिस, 2024 कांस्य) ने भारत का मान बढ़ाया। बॉक्सिंग में विजेंदर सिंह ने (बीजिंग 2008) में कांस्य जीत चमत्कृत किया तथा एथलेटिक्स में नार्मन प्रिसाई ने पेरिस में निशानेबाजी में रजत तथा लिएंडर पेस ने टेनिस में कांस्य जीत लिया था। पर कुल मिलाकर नियमितता के साथ भारी संख्या में ओलंपिक पदक जीतने की आदत भारतीय खेल क्षेत्र में दिखाई नहीं दी। नई खेल नीति में क्रिकेट के अलावा अन्य खेलों को बढ़ावा देने की योजना शामिल रही है। 'खेलो इंडिया' के तहत एक खेल क्रांति पैदा की जा रही है और काफी संख्या में एथलीट उभरकर आ रहे हैं। सन् 2047 तक भारत को विश्व की प्रथम पाँच खेल शक्तियों में शामिल करने के सपने को यथार्थ में बदलने की कवायद शुरू हो गई है।

जल
समग्र सृष्टि का आधार

जल पृथ्वी पर जीवन का मूल आधार है। जल के बिना जीवन की कल्पना असंभव है। कृषि, उद्योग, परिवहन, ऊर्जा उत्पादन, स्वास्थ्य और स्वच्छता—हर क्षेत्र में जल की अनिवार्य भूमिका है। नदियाँ, झीलें, तालाब और भूजल न केवल हमारी जल आवश्यकताओं को पूरा करते हैं, बल्कि

डॉ. कृष्ण कुमार मिश्र

शिक्षा : इलाहाबाद विश्वविद्यालय से रसायन विज्ञान में एम.एस-सी. तथा काशी हिंदू विश्वविद्यालय से पी-एच.डी.।

प्रकाशन : कुल 25 पुस्तकें तथा 500 से अधिक लेख प्रकाशित; देश-विदेश के अनेक शैक्षिक एवं वैज्ञानिक संगठनों से जुड़ाव; कई रिसर्च जर्नलों एवं पत्र-पत्रिकाओं के संपादक मंडल के सदस्य; अनेक लेख स्कूल, कॉलेज से लेकर विश्वविद्यालय स्तर पर पाठ्यक्रमों में शामिल; राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, नई दिल्ली से प्रकाशित लोकोपयोगी विज्ञान की पुस्तक, 'जल—जीवन का आधार'; कई राज्यों के समग्र शिक्षा कार्यक्रम में शामिल।

सम्मान : 'राजभाषा गौरव पुरस्कार', केंद्रीय हिंदी संस्थान, शिक्षा मंत्रालय; आगरा, का 'आत्माराम पुरस्कार', महाराष्ट्र राज्य हिंदी साहित्य अकादेमी का 'डॉ. होमी जहांगीर भाभा स्वर्ण पुरस्कार', मध्यप्रदेश शासन, संस्कृति विभाग का 'राष्ट्रीय गुणाकर मुले सम्मान' सहित अनेक पुरस्कारों से सम्मानित।

संप्रति : टाटा मूलभूत अनुसंधान संस्थान, मुंबई के होमी भाभा विज्ञान शिक्षा केंद्र में एसो. प्रोफेसर।

संपर्क : मोबाइल— 9969078625
ईमेल— kkm066@gmail.com

पर्यावरण संतुलन बनाए रखने में भी सहायक होते हैं। मानव, पशु, वनस्पति—सभी का अस्तित्व जल पर ही निर्भर है। सभ्यताओं का विकास नदियों के किनारे हुआ और आज भी जल ही आर्थिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक प्रगति की रीढ़ है। जल के इसी महत्व को समझाने और इसके संरक्षण की आवश्यकता पर दुनिया का ध्यान आकर्षित करने के लिए प्रत्येक वर्ष 22 मार्च को विश्व जल दिवस के रूप में मनाया जाता है।

विश्व जल दिवस की घोषणा संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा वर्ष 1992 में ब्राजील के नगर, रियो डी जेनेरियो में आयोजित 'पृथ्वी सम्मेलन' में की गई थी। इसके बाद, पहली बार 22 मार्च 1993 को विश्व जल दिवस मनाया गया। तभी से यह दिवस, जल से जुड़ी विभिन्न समस्याओं और उनके समाधानों पर विचार-विमर्श करने का एक महत्वपूर्ण मंच बन चुका है। आज विश्व के अनेक देश गंभीर जल संकट का सामना कर रहे हैं। जनसंख्या वृद्धि, शहरीकरण, औद्योगीकरण, जल प्रदूषण, वनों की कटाई और जलवायु परिवर्तन के कारण स्वच्छ जल के स्रोत लगातार सिमटते जा रहे हैं। भू-जल स्तर तेजी से गिर रहा है और कई नदियाँ कमजोर तथा सूखती जा रही हैं। संयुक्त राष्ट्र के अनुसार, दुनिया में करोड़ों लोग आज भी स्वच्छ पेयजल जैसी बुनियादी जरूरत से वंचित हैं।

विश्व जल दिवस का मुख्य उद्देश्य लोगों को जल संरक्षण, जल प्रबंधन और स्वच्छ जल की समान उपलब्धता के प्रति जागरूक करना है। यह दिवस सरकारों, संगठनों और आम नागरिकों को मिलकर जल संबंधी समस्याओं पर कार्य करने के लिए प्रेरित करता है। हर वर्ष यह दिवस एक विशेष विषय (थीम) के साथ मनाया जाता है, जो जल से जुड़ी किसी प्रमुख वैश्विक चुनौती पर केंद्रित होती है। जल संरक्षण आज की सबसे बड़ी आवश्यकता है। इसके लिए कई उपाय अपनाए जा सकते हैं, जैसे वर्षा जल संचयन को बढ़ावा देना, घरेलू

उपयोग में जल की बर्बादी रोकना, नदियों और जलाशयों को प्रदूषण से बचाना, कृषि में टपक सिंचाई और स्प्रिंकलर जैसी जल-संरक्षण तकनीकों का उपयोग, वृक्षारोपण को प्रोत्साहित करना तथा जल पुनर्चक्रण को अपनाना, वगैरह।

जल ही जीवन है

मानव-सभ्यता का इतिहास जल से जुड़ा है। दुनिया की अधिकांश सभ्यताओं का विकास नदियों के किनारे हुआ है। वैज्ञानिक कहते हैं कि धरती पर जीव की आदि प्रजाति अमीबा से लेकर इनसान तक की जैव-विकास की यात्रा जल के साथ ही संपन्न हुई है। वैज्ञानिकों के अनुसार, पृथ्वी एकमात्र ज्ञात जीवित ग्रह है। पानी के कारण धरती का तापमान जीवन की स्थितियों के अनुकूल है। भारत की सनातन परंपरा में सृष्टि के संघटनात्मक मूल तत्व के रूप में पाँच मूलभूत घटक बताए जाते हैं। ये हैं, वायु, जल, अग्नि, पृथ्वी और आकाश। इन्हें ही पंचमहाभूत कहा जाता है। ऐसी मान्यता है कि समस्त चराचर जगत इन्हीं से निर्मित है। भारतीय साहित्य के महाकाव्य तथा यूनेस्को द्वारा विश्व विरासत का दर्जा प्राप्त ग्रंथ, श्रीरामचरितमानस में गोस्वामी तुलसीदास ने लिखा ही है—'छिति जल पावक गगन समीरा। पंच रचित अति अधम सरीरा।।' जल की महत्ता का व्यापक उल्लेख हमारे शास्त्रों में तो है ही, वह लोक में भी शाश्वत रूप से व्याप्त है।

पृथ्वी– एकमात्र सजीव ग्रह

पृथ्वी एक सजीव ग्रह है। यहाँ पर पानी सभी जगह तथा विविध रूपों में मौजूद है। यह धरती के वायुमंडल में जलवाष्प और बादलों के रूप में उपस्थित है। धरती की सतह का 70.8% हिस्सा पानी से घिरा है। पानी से ढँके होने के कारण बाह्य अंतरिक्ष से देखने पर पृथ्वी नीले रंग की दिखाई देती है। इसलिए इसे नीला ग्रह कहा जाता है। पृथ्वी पर मौजूद कुल जल का करीब 97 प्रतिशत से ज्यादा हिस्सा सागरों एवं

महासागरों के रूप में है। समुद्र के पानी में अनेक प्रकार के लवण एवं खनिज घुले होते हैं। इस वजह से वह खारा होता है तथा पीने के लिए उपयुक्त नहीं होता है। धरती पर मौजूद कुल जल का 2.5 प्रतिशत हिस्सा सादा जल है, जो हमारे उपयोग का हो सकता है। इस सादे जल का दो-तिहाई हिस्सा धुव्रीय प्रदेशों में हिमनदों के रूप में जमा है। धरती पर मौजूद कुल जल का करीब 0.6 प्रतिशत भूमिगत जल है। नदियों, झीलों, तालाबों तथा अन्य सतही जल स्रोतों के रूप में मौजूद जल की मात्रा महज 0.1 प्रतिशत है। प्रदूषण के चलते इन जल स्रोतों में उपलब्ध जल का करीब 20 प्रतिशत भाग ही अब पीने योग्य बचा है।

शास्त्रों में नदियों का उल्लेख

दुनिया के सबसे प्राचीन ग्रंथ, ऋग्वेद में उल्लेख है कि सृष्टि के प्रारंभ में सब जल था, यथा—'इदम सलिलम् सर्वम्'। जीवन का उद्भव एवं विकास, जल में हुआ है। जल का मानव-जीवन से रागात्मक संबंध रहा है। नदियाँ सदियों से सभ्यता की जीवनरेखा रही हैं। इसीलिए नदियाँ हमारी संस्कृति में सदा-सर्वदा पूज्य रही हैं। भारत में छोटी-बड़ी कुल दस हजार से ज्यादा नदियाँ हैं। नदियों को हमने देवी-स्वरूपा, माता की संज्ञा से अभिहित किया है। ऋग्वेद की इस ऋचा में सरस्वती नदी की महिमा गायी गई तथा उसे सर्वश्रेष्ठ नदी, सर्वश्रेष्ठ देवी तथा सर्वश्रेष्ठ माँ के रूप में संबोधित किया गया है—

'अम्बितमे नदीतमे देवितमे सरस्वति।
अप्रशस्ता इव स्मसि प्रशस्तिमम्ब नस्कृधि' ॥

(ऋग्वेद, 2.41.16)

ऋग्वेद के ही नदी सूक्त में गंगा को नदियों में प्रथम स्थान प्रदान किया गया है। इसमें गंगा यमुना के साथ पौराणिक सरस्वती का साहचर्य भी इस ऋचा में दृष्टिगोचर होता है।

इमं मे गंगे यमुने सरस्वति शुतुद्रि स्तोमं सचता परुष्ण्या।
असिक्न्या मरुद्वृधे वितस्तयार्जीकीये शृणुह्य आसुषोमया ॥

(ऋग्वेद, 10.75.5)

राष्ट्रीय नदी गंगा : सनातन आस्था का आधार

गंगा हमारे देश की केवल राष्ट्रीय नदी ही नहीं है, बल्कि वह कोटि-कोटि जन की भावनात्मक आस्था का आधार भी है। गंगा हमारे लोकजीवन में पवित्रता, निर्मलता, नैरंतर्य तथा मोक्षदायी अमृत का प्रतीक है। वास्तव में, गंगा भारतीय संस्कृति का ऐसा महाप्रवाह है, जो हजारों साल से लोक और शास्त्र, दोनों में सतत प्रवाहित हो रही है। यह नैरंतर्य सदियों से भारतीय भूखंड के लोकमानस को अनुप्राणित करता रहा है। गंगा किस तरह से हमारे लोकजीवन, लोकचिंतन तथा लोकपरंपराओं के केंद्र में रही है इसके अनेकानेक उदाहरण हमारे शास्त्रों में व्यापक रूप से मिलते हैं। भगवान श्रीकृष्ण ने श्रीमद्भगवत्गीता में स्वयं को नदियों में भागीरथी यानी गंगा तथा जलाशयों में समुद्र बताकर जल की महत्ता को स्वीकृति प्रदान की है यथा—'स्त्रोतसास्मि जाह्नवी सरसामस्मि सागरः।'

भारतीय शास्त्रों की दृष्टि में जलस्रोत केवल निर्जीव जलाशय मात्र नहीं हैं, अपितु वरुण देव तथा विभिन्न नदियों के रूप में उसमें अनेक देवियों की कल्पना की गई है। इसी कारण स्नान करते समय सप्तसिंधुओं में जल के समावेश हेतु आज भी इस मंत्र द्वारा उनका आह्वान किया जाता है–

गंगे च यमुने चौव गोदावरि सरस्वति।
नर्मदे सिन्धु कावेरी जलेऽस्मिन सन्निधिम् कुरु॥

श्रीगंगा स्त्रोतम् में माँ गंगा की स्तुति का यह शुरुआती छंद द्रष्टव्य है,

देवि सुरेश्वरि भगवति गंगे, त्रिभुवनतारिणि तरलतरंगे।
शंकरमौलिविहारिणि विमले, मम मतिरास्तां तव पदकमले॥

भावार्थ– हे देवी! सुरेश्वरी! भगवती गंगे! आप तीनों लोकों को तारने वाली हैं। शुद्ध तरंगों से युक्त, महादेव शंकर के मस्तक पर विहार करने वाली हे माँ! मेरा मन सदैव आपके चरण कमलों में केंद्रित है।

तुलसीदास ने श्रीरामचरितमानस के बालकांड में गंगा की महत्ता का वर्णन चौपाई में कुछ इस तरह किया है–

कीरति भनिति भूति भलि सोई।
सुरसरि सम सब कहँ हित होई॥

भावार्थ यह कि कीर्ति, यश तथा संपत्ति लोकमंगलारी हो, जैसे कि माँ गंगा सर्वकल्याणकारिणी हैं।

दुनिया के प्राचीनतम ग्रंथ ऋग्वेद के नदी सूक्त में गंगा को नदियों में प्रथम स्थान प्रदान किया गया है। इसमें गंगा यमुना के साथ पौराणिक सरस्वती का साहचर्य भी इस ऋचा में दृष्टिगोचर होता है।

सनातन धर्म में वैष्णवों ने गंगा को गीता तथा गायत्री के समान पवित्र तथा पूजनीय माना है तथा स्तोत्रों में उसी रूप में उसका गुणगान किया है। ऐसी मान्यता है कि इनका नित्य पाँच बार स्मरण कर लेने से जीवन के सभी पाप नष्ट हो जाते हैं, यथा–

गंगा गीता च गायत्री गोविन्दो गरुडध्वजः।
पंचैतान् स्मरतो नित्यं सर्वपाप प्रणश्यति॥

भारत में जल संरक्षण एवं प्रबंधन संबंधी योजनाएँ

भारत में जल का सांस्कृतिक और धार्मिक महत्व है। लेकिन पानी को लेकर चुनौतियाँ भी कम नहीं हैं। सरकार द्वारा महत्वाकांक्षी 'जल जीवन मिशन', 'नमामि गंगे' और 'अटल भूजल योजना' जैसे कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं। जल जीवन मिशन की शुरुआत भारत सरकार ने 15 अगस्त, 2019 को की। इस मिशन का मुख्य उद्देश्य देश के हर ग्रामीण परिवार को नल से स्वच्छ पेयजल उपलब्ध कराना है। प्रत्येक ग्रामीण घर में सुरक्षित और गुणवत्तापूर्ण पेयजल की निरंतर आपूर्ति, महिलाओं और बच्चों को पानी लाने की कठिनाई से मुक्ति दिलाना तथा समुदाय की भागीदारी से जल प्रबंधन को मजबूत करना इसके मुख्य उद्देश्य हैं। यह मिशन ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य सुधार, समय की बचत और जीवन-स्तर को ऊँचा उठाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है।

'नमामि गंगे' परियोजना भारत सरकार द्वारा 2014 में शुरू की गई एक महत्वाकांक्षी योजना है। इसका उद्देश्य गंगा नदी की सफाई, संरक्षण और पुनर्जीवन करना है। गंगा नदी के जल को प्रदूषण मुक्त बनाना, औद्योगिक और घरेलू अपशिष्ट जल का शोधन, नदी-तटों की सफाई और सौंदर्यीकरण तथा जैव विविधता का संरक्षण इसके मुख्य उद्देश्य हैं। गंगा भारत की जीवनरेखा है। यह परियोजना पर्यावरण संरक्षण के साथ-साथ धार्मिक, सांस्कृतिक और आर्थिक दृटि से भी अत्यंत महत्वपूर्ण है। अटल भूजल योजना की शुरुआत 2020 में की गई। इसका मुख्य उद्देश्य भूजल संसाधनों का सतत प्रबंधन करना

है। देश में गिरते भूजल स्तर को नियंत्रित करना, जल की माँग और आपूर्ति में संतुलन, सामुदायिक सहभागिता के माध्यम से भूजल संरक्षण तथा जल उपयोग की दक्षता बढ़ाना इस परियोजना के मुख्य उद्देश्य हैं। यह योजना उत्तर प्रदेश, राजस्थान, गुजरात, हरियाणा, मध्य प्रदेश और महाराष्ट्र के चयनित जिलों में लागू की गई है।

उपसंहार

विश्व जल दिवस हमें यह समझाता है कि जल असीम नहीं है। यदि हमने आज जल का संरक्षण नहीं किया, तो भविष्य में भयावह संकट का सामना करना पड़ेगा। जल की प्रत्येक बूँद अमूल्य है। इसलिए आवश्यक है कि हम व्यक्तिगत और सामूहिक स्तर पर जल संरक्षण को अपनी आदत बनाएँ। जलस्रोतों की गुणवत्ता बनाए रखने के लिए व्यापक जनभागीदारी बहुत जरूरी है। हमें गंगा सहित देश की सभी नदियों एवं जलस्रोतों के संरक्षण पर निरंतर काम करना होगा। आज हम जल संसाधन के संदर्भ में एक कठिन और निर्णायक दौर से गुजर रहे हैं। हमें जल संसाधनों को हर हाल में बचाना होगा, सहेजना होगा, उनका विवेकपूर्ण ढंग से किफायत से इस्तेमाल करना होगा, जिससे कि आने वाली पीढ़ियों के लिए भी उनकी जरूरत का पानी बचा रहे। आइए, इस विश्व जल दिवस पर संकल्प लें कि हम जल की रक्षा करेंगे और आने वाली पीढ़ियों के लिए एक सुरक्षित भविष्य सुनिश्चित करेंगे।

राष्ट्रनायक डॉ. भीमराव आंबेडकर

राष्ट्रनायक भारत रत्न बाबा साहेब डॉ. भीमराव आंबेडकर 20वीं सदी के एक ऐसे महान पुरुष हैं, जिनकी प्रासंगिकता राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर दिन-ब-दिन बढ़ती जा रही है। डॉ. आंबेडकर को न्यायपूर्ण और समावेशी भारत के निर्माण में उनके योगदान के लिए हमेशा सम्मानजनक ढंग से याद किया जाता है। 14 अप्रैल, 1891 को जन्मे डॉ. भीमराव आंबेडकर सामाजिक न्याय, समावेशिता और समानता के अग्रदूत थे। वे प्रख्यात राजनीतिक विचारक, इतिहासकार, पत्रकार, महिला एवं दलित चिंतक, तर्कशास्त्री, अर्थशास्त्री, कानूनवेत्ता, दार्शनिक, मानवविज्ञानी, मानवाधिकार विशेषज्ञ, बौद्ध धर्म विशेषज्ञ और संवैधानिज्ञ थे। उन्हें नौ भाषाओं का ज्ञान था। साथ ही, उनके पास कुल 32 डिग्रियाँ थीं। उन्हें कोलंबिया विश्वविद्यालय द्वारा 'द ग्रेटेस्ट मैन इन द वर्ल्ड' और ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय द्वारा 'द यूनिवर्स मेकर' जैसे विशेषणों से अलंकृत किया गया था। सार्वजनिक पानी के अधिकार के लिए आंदोलन करने वाले वे विश्व के प्रथम महापुरुष हैं। साथ ही, उन्हें लंदन विश्वविद्यालय के 200 छात्रों में प्रथम स्थान प्राप्त करने वाले प्रथम भारतीय, विश्व के छह शीर्ष विद्वानों में शामिल तथा लंदन विश्वविद्यालय से डॉक्टर ऑफ साइंस (डी.एस.सी.) की उपाधि प्राप्त करने वाले प्रथम एवं अंतिम भारतीय होने का गौरव प्राप्त है। उन्होंने लंदन विश्वविद्यालय का आठ वर्ष का पाठ्यक्रम मात्र तीन वर्षों में पूरा किया और अपने शोध प्रबंध 'द प्रॉब्लम ऑफ द रूपी' के माध्यम से भारत में रिजर्व बैंक की स्थापना की आधारशिला रखी। आज विश्व में उनकी सर्वाधिक मूर्तियाँ स्थापित हैं, जो उनके व्यापक जनाधार व सम्मान को दर्शाते हैं।

उन्होंने अपना जीवन हमारे देश में जाति-आधारित भेदभाव को खत्म करने और हाशिए पर रहने वाले समुदायों के उत्थान के लिए समर्पित कर दिया। उन्होंने भारतीय समाज के भीतर गहरी जड़ें जमा चुकी असमानताओं, विशेषकर जाति व्यवस्था को पहचाना, जिसने करोड़ों लोगों को भेदभाव और उत्पीड़न के जीवन में धकेल दिया था। उन्होंने अस्पृश्यता के उन्मूलन के लिए लड़ाई लड़ी। भारतीय संविधान के वास्तुकार के रूप में, उन्होंने सभी नागरिकों के लिए मौलिक अधिकार और सुरक्षा सुनिश्चित करने का प्रयास किया। दलितों और अन्य उत्पीड़ित जातियों के अधिकारों के लिए उनकी निरंतर वकालत से हमारे सामाजिक ताने-बाने में महत्वपूर्ण सुधार हुए।

हिंदू धर्म के प्रति अपने आक्रोश के कारण उन्होंने बौद्ध धर्म अपना लिया था, लेकिन उन्होंने किसी अन्य विदेशी धर्म को

प्रो. जय कौशल

प्रो. कौशल वरिष्ठ शिक्षाविद् हैं। आपको अगरतला, कोलकाता और असम के विभिन्न विश्वविद्यालयों में शिक्षण, अनुवाद, शोध तथा प्रशासन के क्षेत्र में 17 वर्षों से अधिक का अनुभव है।

आपने जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय (जे.एन.यू.), नई दिल्ली से अनुवाद अध्ययन में एम.फिल. एवं पीएच.डी. की उपाधि प्राप्त की है।

अनुवाद तथा पूर्वोत्तर भारत के साहित्य में अकादमिक रुचि रखने वाले प्रो. कौशल की अब तक दस से अधिक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। वर्तमान में आप असम विश्वविद्यालय, दीफू परिसर में बतौर प्रोफेसर कार्यरत हैं।

संपर्क : मोबाइल– 8131040183

ईमेल– jaikaushal81@gmail.com

नहीं अपनाया, हालाँकि इस्लामी और ईसाई विद्वानों ने उन्हें प्रभावित करने की पूरी कोशिश की थी।

बेहद गरीब परिवार से आने वाले डॉ. आंबेडकर को जीवन में बहुत अधिक सामाजिक और आर्थिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा, लेकिन उन्होंने हार नहीं मानी। अपने माता-पिता की 14वीं संतान, आंबेडकर ने 1908 में एलफिंस्टन हाई स्कूल से मैट्रिकुलेशन किया। फिर एलफिंस्टन कॉलेज से अर्थशास्त्र और राजनीति विज्ञान की पढ़ाई की। 1912 में उन्होंने बंबई विश्वविद्यालय से डिग्री प्राप्त की।

एक मानवतावादी के रूप में, डॉ. आंबेडकर मानव को आजीवन विद्यार्थी की भूमिका में देखने के पक्ष में रहे। उनका विचार था कि एक मुक्त और सहज समाज बनाने के लिए व्यक्ति को स्वयं में एक बालक के रूप में अपनी संभावनाओं को खोजने का प्रयास करना चाहिए, न कि किसी परिपाटी का हिस्सा होने के नाते अंधसमर्थक बनने की। यही मानवीय शिक्षा की प्राथमिकता है। शिक्षा के माध्यम से ही व्यक्ति अपनी उच्चतम बौद्धिक शक्तियों का प्रयोग करके समाज के साथ-साथ अपना संपूर्ण विकास कर सकता है। उनका अटूट विश्वास था कि शिक्षा ही मनुष्य और समाज के जीवन में बदलाव ला सकती है। उनके अनुसार, आत्मसम्मान की अनुभूति शिक्षा से ही जगती है, इसलिए लड़के-लड़कियों, दोनों को शिक्षित किया जाना चाहिए। पिछड़े तबकों के बीच शिक्षा के प्रसार के लिए डॉ. आंबेडकर ने 1924 में 'बहिष्कृत हितकारिणी सभा' की स्थापना की थी। इसके चार साल बाद उन्होंने 'भारतीय समाज शिक्षा प्रसार समिति' बनाई। उन्होंने 1945 में 'पीपुल्स एजुकेशन सोसाइटी' और 1946 में 'सिद्धार्थ कॉलेज' स्थापित किया। इससे शिक्षा के प्रति उनके समर्पण का पता चलता है। ध्यातव्य है कि महिलाओं के सशक्तीकरण के लिए आज भारत में अनेक प्रयास किए जा रहे हैं। डॉ. आंबेडकर ने संविधान में ऐसा समावेशी प्रावधान किया है कि उसके आधार पर वर्तमान में भी महिलाओं का राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक सशक्तीकरण सुदृढ़ हो रहा है।

स्पष्ट है, वे दलितों, पिछड़ों के साथ-साथ महिलाओं की प्रगति में गहरा विश्वास रखते थे। बाबासाहब जानते थे कि सिर्फ सलाह देने से महिलाओं का उत्थान और विकास संभव नहीं है। इसके लिए कानूनी प्रावधान आवश्यक हैं। इस दिशा में उन्होंने महिला अधिकारों की रक्षा और उनके कल्याण के लिए कई कानूनी प्रस्ताव तैयार किए। उनकी यह सोच महिलाओं की शिक्षा, आत्मनिर्भरता, राजनीतिक सहभागिता और नैतिक स्वतंत्रता को बढ़ावा देने की ओर एक महत्वपूर्ण कदम थी। इसीलिए हिंदू कोड बिल के रूप में उन्होंने महिलाओं के लिए पारिवारिक संपत्ति में अधिकार, तलाक का अधिकार, बहु-विवाह पर रोक, विधवा विवाह को मान्यता जैसी बातों को संसद के सामने पेश किया था। हालाँकि, वह बिल पूरी तरह लागू नहीं हो सका और आंबेडकर को इस क्रम में इस्तीफा भी देना पड़ा, तो भी हिंदू कोड बिल सिर्फ एक कानून नहीं था, बल्कि यह भारतीय महिलाओं को समानता, स्वतंत्रता और गरिमा देने की दिशा में एक मील का पत्थर था। उनके प्रयासों से महिलाओं को कानूनी अधिकार मिले, जिससे वे पुरुषों के साथ समान रूप से खड़ी हो सकीं।

मौजूदा समस्याओं की तह तक जाने और उसके समग्र समाधान के लिए डॉ. आंबेडकर ने बौद्ध धर्म के सामाजिक और नैतिक दर्शन को आधार के रूप में अपनाया और उन्होंने इन्हीं परिकल्पनाओं के परिप्रेक्ष्य में भारतीय समाज में व्याप्त अस्पृश्यता और जाति व्यवस्था के खिलाफ अपने संघर्ष को शुरू करने से पहले हिंदू समाज का विशद् विश्लेषण किया। उनके लेखन में यह साफ झलकता है, कि समाज में समानता तभी लाई जा सकती है जब असमानताओं के कारणों को स्पष्ट किया जाए। ध्यातव्य है कि भारत की असाधारण सामाजिक-राजनीतिक स्थिति पता करने की जरूरत ने डॉ. आंबेडकर को संविधान के जनक के रूप में एक अनोखी स्थिति प्रदान की है।

डॉ. आंबेडकर ने सामाजिक और आर्थिक रूप से पिछड़े लोगों का 'शिक्षित बनने, संघर्ष करने और संगठित बनने' का आह्वान किया। तथापि, संवैधानिक तरीकों के प्रति उनकी प्रतिबद्धता स्पष्ट थी और उन्होंने जागरूक और तर्कशील जनसंघर्ष के मार्ग की वकालत करते हुए कहा था, "...हमें क्रांति के रक्तपातपूर्ण तरीकों का परित्याग कर देना चाहिए...जब आर्थिक और सामाजिक उद्देश्यों को हासिल करने के संवैधानिक तरीकों के लिए कोई रास्ता नहीं बचता था, तब असंवैधानिक तरीकों के लिए भरपूर औचित्य होता था। परंतु जहाँ संवैधानिक तरीके उपलब्ध हैं, वहाँ इन असंवैधानिक तरीकों का कोई औचित्य नहीं है।"

अपनी परिपक्व राजनीतिक समझ के तहत डॉ. आंबेडकर प्रत्येक नागरिक की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति किसी भी लोकतंत्र का प्रथम कर्तव्य मानते थे। वे साम्राज्यवाद और पूँजीवाद के खुले विरोधी थे। वे सही मायने में पक्के यथार्थवादी थे। उनकी मान्यता थी कि मानव-समाज में पूर्ण समानता लाना आसान नहीं है, इसलिए वे धन-दौलत एवं अन्य प्रकार की सामाजिक-शैक्षिक असमानताओं को ही क्रमिक और तार्किक ढंग से दूर करना चाहते थे। उन्होंने प्रिवी पर्स की समाप्ति, बैंकों, बीमा कंपनियों तथा कोयला खदानों के राष्ट्रीयकरण की बात बहुत पहले ही उठाई थी। इससे भी आगे बढ़कर उन्होंने भूमि तथा कृषि के राष्ट्रीयकरण की वकालत की थी। वे समाजवाद और सार्वजानिक क्षेत्र के पक्षधर थे। आंबेडकर का मानना था कि जम्मू-कश्मीर में भारत के अन्य राज्यों की तरह ही भारतीय कानून और संविधान पूरी तरह लागू होना चाहिए।

डॉ. आंबेडकर की आर्थिक योजना पर उनके निम्नलिखित शब्द प्रकाश डालते हैं, 'यदि विदेशी तत्वों को निष्काषित करके आर्थिक परिवर्तनों को वरीयता दी जाए तो सशक्त प्रशासन आसानी से

दूरगामी समाज-सुधार ला सकता है।' उनके आर्थिक दर्शन से प्रभावित होकर ही नोबल पुरस्कार विजेता डॉ. अमर्त्य सेन ने कहा, "Dr. Ambedkar is the father of my economics." अर्थात् डॉ. आंबेडकर मेरे अर्थशास्त्र के जनक हैं।

डॉ. आंबेडकर ने अपनी कृतियों में अंग्रेज सरकार की तत्कालीन कर-नीति, जैसे अत्यधिक भूमि लगान, नमक-कर, इंग्लैंड तथा भारतीय उत्पादन पर असमान कर कस्टम ड्यूटी, जागीरदारी व्यवस्था द्वारा किसानों का घोर आर्थिक शोषण तथा अंग्रेजों और भारतीय सरकारी अधिकारियों के वेतन में भारी अंतर आदि पर भी आलोचनाएँ की थीं।

वास्तव में, डॉ. आंबेडकर का बहुत बड़ा योगदान भारत के औद्योगिकीकरण और आधुनिकीकरण की नींव डालने का रहा है। आज भूमंडलीकरण और निजीकरण के दौर में हम राजकीय नियंत्रण से स्वतंत्रता को वास्तविक स्वतंत्रता मान बैठे हैं। लेकिन डॉ. आंबेडकर ने इसमें व्यक्तिगत मालिकों की तानाशाही देखी थी। लोकतांत्रिक राज्य को निपट पूँजीवादी राज्य मानना उचित नहीं है। डॉ. आंबेडकर ने भारत में व्याप्त आर्थिक और सामाजिक अंतर्विरोधों को दूर करने के लिए जिस राज्य की कल्पना की थी वह राजनीतिक दृष्टि से लोकतांत्रिक और आर्थिक दृष्टि से समाजवादी था। उसे उन्होंने राजकीय समाजवाद कहा था। उसे समाजवादी लोकतंत्र भी कहा जा सकता है।

डॉ. आंबेडकर ने भारतीय संविधान की एक अनूठी विशेषता, राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांतों के निर्धारण में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इन सिद्धांतों में यह अधिदेश है कि राष्ट्र एक न्यायपूर्ण सामाजिक व्यवस्था की प्राप्ति और सुरक्षा द्वारा लोगों के कल्याण को बढ़ावा देने का प्रयास करेगा। ये सिद्धांत एक सामाजिक लोकतंत्र की नींव रखते हैं। डॉ. आंबेडकर के शब्दों में, "हमें अपने राजनीतिक लोकतंत्र को एक सामाजिक लोकतंत्र भी बनाना होगा। सामाजिक लोकतंत्र का क्या अर्थ है? इसका अर्थ है, एक जीवन-पद्धति, जो यह मानती है कि स्वतंत्रता, समानता और भाईचारा जीवन के सिद्धांत हैं। स्वतंत्रता, समानता और भाईचारे के इन सिद्धांतों को इन तीन तत्त्वों से अलग चीज मानकर नहीं चलना होगा। ये इस अर्थ में एक सूत्रता अथवा त्रितत्व की रचना करते हैं कि इनमें से एक को दूसरे से पृथक करना लोकतंत्र के अत्यावश्यक उद्देश्य को विफल करना है... समानता के बिना, स्वतंत्रता से कुछ लोगों का प्रभुत्व बहुत-से लोगों पर हो जाएगा। स्वतंत्रताहीन समानता व्यक्तिगत प्रयास को समाप्त कर देगी। भाईचारे के बिना स्वतंत्रता और समानता सहज परिघटना नहीं बन पाएगी। इन्हें लागू करने के लिए एक सिपाही की आवश्यकता होगी... सामाजिक धरातल पर, हमारे भारत में सोपानबद्ध असमानता के सिद्धांतों पर आधारित समाज है, जिसका अर्थ है एक का उत्थान और अन्यों की अवनति। आर्थिक आधार पर, हमारे यहाँ ऐसा समाज है, जिसमें ऐसे कुछ लोग हैं, जिनके पास घोर निर्धनता में जीवनयापन करने वालों की तुलना में अथाह धन-संपत्ति है... हम विरोधाभास का ऐसा जीवन कब तक जिएँगे? हमें यथाशीघ्र इस विरोधाभास को दूर करना होगा। अन्यथा इस असमानता से पीड़ित लोग राजनीतिक लोकतंत्र के ढाँचे को उखाड़ फेंकेंगे।"

डॉ. आंबेडकर ने समाजशास्त्री, अर्थशास्त्री, राजनीतिज्ञ, कानूनविद्, इतिहासकार एवं पत्रकार आदि के रूप में महान कार्य किया है, लेकिन अकसर हम दलितों का नेता कहकर उनके व्यक्तित्व का मूल्यांकन कम कर देते हैं। उनके द्वारा बनाया गया संविधान समूचे राष्ट्र के लिए है। समस्त भारतीय महिलाओं के उन्नति के लिए उनके द्वारा लाये गए हिंदू कोड बिल के साथ ही आरबीआई, दामोदर घाटी पनबिजली प्रोजेक्ट, योजना आयोग, वित्त आयोग, चुनाव आयोग आदि कई संवैधानिक संस्थाओं के निर्माण में भी उनका महत्वपूर्ण योगदान रहा।

आज समूचे विश्व में भारत को अपने लोकतांत्रिक और पंथनिरपेक्ष मूल्यों तथा एक समावेशी और आधुनिक सामाजिक व्यवस्था की स्थापना के लिए जाना जाता है। हमने आर्थिक मोर्चे पर अपनी जनता के एक बड़े वर्ग को गरीबी रेखा से नीचे से निकालकर गरिमापूर्ण जीवन के स्तर पर लाते हुए, बहुत-सी महत्वपूर्ण उपलब्धियाँ हासिल की हैं। भारत अब क्रय शक्ति समता के पैमाने पर दुनिया की सबसे बड़ी अर्थव्यवस्थाओं में एक है। अब हमारी उन्नत वैज्ञानिक और प्रौद्योगिक क्षमताओं, औद्योगिक आधार तथा विश्वस्तरीय मानव संसाधनों के लिए सराहना की जाती है और इन सबके पीछे राष्ट्रनायक भारत रत्न बाबा साहेब डॉ.भीमराव आंबेडकर का योगदान अतुलनीय है।

विश्व विरासत का संरक्षण पूरी मानवता का दायित्व

भारत मात्र एक भूखंड नहीं, बल्कि एक ऐसी धरा का नाम है, जो अपने आँचल में अनेक समृद्धशाली सांस्कृतिक, सभ्यतापरक एवं प्राकृतिक धरोहर समेटे हुए है। प्रश्न यह नहीं है कि ये धरोहर कौन-सी हैं, बल्कि प्रश्न यह है कि न जाने ऐसी कितनी अनगिनत, अमूल्य और अकल्पनीय धरोहर हैं, जो अब तक विश्व के सामने नहीं आ पाई हैं!

पत्थरों में ठहरी सभ्यता, परंपराओं में बहती स्मृति और प्रकृति में धड़कता जीवन—यही वह त्रिवेणी है, जिसे यूनेस्को 'विश्व धरोहर' या 'विश्व विरासत' की संज्ञा देता है। जब कहीं कोई स्मारक टूटता है, तब केवल ईंटें ही नहीं गिरतीं, वरन् मनुष्य की सामूहिक स्मृति का एक अध्याय ढह जाता है और सभ्यता का एक सितारा खो जाता है। इसी कारण प्रत्येक संसार के अधिकांश देश अपनी भौगोलिक सीमाओं की सुरक्षा करने के साथ-साथ विरासत संरक्षण के लिए भी निरंतर प्रयासरत रहते हैं। संयुक्त राष्ट्र की संस्था, 'यूनेस्को' उनके प्रयास को सफल बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। वह वैश्विक धरोहरों को चिह्नित करती है, उन्हें विश्व धरोहर की मान्यता देती है और साथ ही, उनके संरक्षण में वैचारिक एवं वित्तीय सहायता भी प्रदान करती है।

नालंदा

यूनेस्को ने अब तक कुल 1,248 वैश्विक धरोहरों को मान्यता प्रदान की है, जिसमें 972 सांस्कृतिक, 235 प्राकृतिक एवं 41 अन्य मिश्रित धरोहरें शामिल हैं। ये उत्कृष्ट एवं सार्वभौमिक महत्व की विश्व विरासतें हैं, जो विश्व के 170 देशों में स्थित हैं। उल्लेखनीय है कि इन स्थलों का चयन यूनेस्को की विश्व धरोहर समिति करती है। इटली, चीन, जर्मनी, फ्रांस और स्पेन दुनिया के उन देशों में शामिल हैं, जहाँ सबसे अधिक धरोहर स्थल हैं। ऐसी कुछ विश्व विख्यात विरासतें हैं—नालंदा का प्राचीन महाविहार (विश्वविद्यालय), अंगकोरवाट मंदिर (कंबोडिया), माच्चू पिच्चू (पेरू), गीजा का पिरामिड (मिस्र), चीन की दीवार, एक्रोपोलिस (एथेंस-ग्रीस) आदि।

अंतरराष्ट्रीय स्मारकों एवं स्थलों के संरक्षण के प्रति वैश्विक चेतना एवं जागरूकता के दृष्टिगत, यूनेस्को द्वारा प्रतिवर्ष 18 अप्रैल को 'विश्व विरासत दिवस' के रूप में मनाया जाता है, जिसे आधिकारिक तौर पर स्मारकों एवं स्थलों के लिए अंतरराष्ट्रीय विश्व विरासत दिवस भी कहा जाता है। उल्लेखनीय है कि 2026 में यूनेस्को अपनी स्थापना के 81 वर्ष पूर्ण कर रहा है। यह दिवस अब मात्र रस्म न रहकर एक महोत्सव, और इससे भी बढ़कर एक वैश्विक अभियान बन चुका है।

वस्तुतः, विश्व विरासतों के संरक्षण की जब हम बात करते हैं तो यह न केवल ऐतिहासिक महत्व के स्थलों की देखभाल एवं रख-रखाव के प्रति हमें जागरूक एवं चेतन

दीपाली वशिष्ठ

जन्म : 10 नवंबर, आगरा, उत्तर प्रदेश

शिक्षा : एल.एल.एम.

प्रकाशन : 'द आर्ट ऑफ रूल', 'खाटू श्याम की अनसुनी कहानी' आदि पुस्तकों सहित अनेक सम-सामायिक कानूनी विषयों पर आलेख प्रकाशित।

संप्रति : कानूनविद्, साहित्यिक संयोजक होने के साथ-साथ भारतीय ज्ञान परंपरा, प्राचीन ग्रंथों और भारतीय पौराणिक कथाओं को बच्चों और युवाओं के बीच लोकप्रिय बनाने के लिए निरंतर सृजनरत।

संपर्क : deepsharmajuris@gmail.com

करने की अंतर्ध्वनि होती है, बल्कि हमारी सांस्कृतिक समझ में वृद्धि, पर्यावरण संरक्षण में सहायता एवं पर्यटन को प्रोत्साहित करने का संदर्भ भी इसमें शामिल होते हैं।

भारत विविधताओं में एकता और सभ्यताओं के संगम का देश है, जिसकी अंतरराष्ट्रीय सीमाएँ उत्तर, पश्चिम एवं पूर्व में चीन, पाकिस्तान एवं बाँग्लादेश से मिलती हैं, जबकि पूर्व एवं पश्चिम का निचला हिस्सा क्रमशः बंगाल की खाड़ी एवं अरब सागर तथा दक्षिण का हिस्सा हिंद महासागर को स्पर्श करता है। भारत से रोम को मसालों का निर्यात तथा चीन, कंबोडिया, इंडोनेशिया आदि में बौद्ध पंथ एवं किंचित सनातन धर्म का प्रचार-प्रसार हुआ। कंबोडिया में अंगकोरवाट मंदिर हमारी उत्कृष्ट सनातन परंपरा के वैश्विक विस्तार एवं प्रसार का ही एक उदाहरण है, जो हमारे प्राचीन गौरव के स्मारक सरीखे हैं। भारत की उत्कृष्ट एवं समृद्ध धरोहरों के ऐसे दृष्टांत हमारे वर्तमान पड़ोस के अनेक देशों में यत्र-तत्र बिखरे पड़े हैं। ऐसे में, तकनीकी तौर पर आज भारत की यूनेस्को धरोहर की संख्या बेशक मात्र 44 हो, किंतु वास्तव में इनकी संख्या इससे कहीं बढ़कर है, जिनको सामने लाने के प्रयास सतत रूप से चल रहे हैं।

यहाँ यह उपयुक्त एवं प्रासंगिक होगा कि हम यूनेस्को द्वारा भारत की विश्व विरासतों के बारे में चर्चा करें। उल्लेखनीय है कि भारत अपने भू-क्षेत्र की विशालता के कारण एक उपमहाद्वीप सरीखा है, जिसकी सभ्यता और संस्कृति के साथ-साथ भूगोल भी पर्याप्त विविधता लिये हुए है।

यूनेस्को ने भारत के 44 स्थानों को (2026 तक) विश्व विरासत की सूची में रखा है। जुलाई 2024 में, मोइदाम के 43वें स्थल बनने के बाद, भारत ने मराठा सैन्य परिदृश्य को 2024-25 के चक्र के लिए नामांकित किया था, जिसे अब आधिकारिक सूची में शामिल कर लिया गया है। वस्तुतः, यह स्थल मराठा शासकों, विशेषकर छत्रपति शिवाजी महाराज के काल की असाधारण सैन्य वास्तुकला और रणनीति का प्रदर्शन करता है। इसमें महाराष्ट्र और तमिलनाडु के कई किले शामिल हैं, जैसे—शिवनेरी, रामगढ़, पन्हाला, प्रतापगढ़, जिंजी आदि के किले।

भारत में यूनेस्को विश्व विरासत स्थलों की कुल श्रेणियाँ

1. **सांस्कृतिक स्थल - 36**
2. **प्राकृतिक स्थल - 7**
3. **मिश्रित स्थल - 1 (कंचनजंगा)**

भारत के पाँच नवीनतम विश्व विरासत स्थल

40वाँ - **धौलावीरा**, गुजरात (2021);

41वाँ - **शांतिनिकेतन**, पश्चिम बंगाल (2023);

42वाँ - **होयसल के पवित्र मंदिर-समूह**, कर्नाटक (2023);

43वाँ - **मोइदाम : आहोम राजवंश की टीला-दफन प्रणाली**, असम (2024);

44वाँ - **मराठा सैन्य परिदृश्य** (2025)।

भारत के सभी यूनेस्को विश्व विरासत स्थलों के श्रेणीवार नाम

सांस्कृतिक स्थल (36)

अजंता की गुफाएँ, एलिफेंटा की गुफाएँ, आगरा का लाल किला, ताजमहल, कोणार्क सूर्य मंदिर, महाबलीपुरम के स्मारक, गोवा के चर्च और कॉन्वेंट, खजुराहो के स्मारक, हम्पी के स्मारक, फतेहपुर सीकरी, पट्टदकल के स्मारक, महान चोल मंदिर, साँची के बौद्ध स्तूप, हुमायूँ का मकबरा, कुतुब मीनार और उसके स्मारक, भारत का पर्वतीय रेलवे, महाबोधि मंदिर-परिसर, भीमबेटका के शैलाश्रय, चंपानेर-पावागढ़ पुरातत्व पार्क, छत्रपति शिवाजी महाराज टर्मिनस, लाल किला परिसर, जंतर-मंतर, राजस्थान के पहाड़ी किले, रानी की वाव, नालंदा महाविहार, कैपिटल कॉम्प्लेक्स, अहमदाबाद भारत का ऐतिहासिक शहर, मुंबई का विक्टोरियन गोथिक और आर्ट डेको एन्सेंबल, जयपुर शहर, धौलावीरा, काकतीय रुद्रेश्वर (रामप्पा) मंदिर, शांतिनिकेतन, होयसल के पवित्र मंदिर-समूह, मोइदाम।

प्राकृतिक स्थल (7)

काजीरंगा राष्ट्रीय उद्यान, मानस वन्यजीव अभयारण्य, केवलादेव राष्ट्रीय उद्यान, सुंदरबन राष्ट्रीय उद्यान, नंदादेवी और फूलों की घाटी, पश्चिमी घाट, ग्रेट हिमालयन नेशनल पार्क।

मिश्रित स्थल (1)

कंचनजंगा राष्ट्रीय उद्यान (सिक्किम)।

जंतर मंतर

यूनेस्को का एशिया में पहला विकेंद्रीकृत कार्यालय भारत की राजधानी नई दिल्ली में वर्ष 1948 में स्थापित किया गया था। वर्ष 2023 से इस कार्यालय को दक्षिण एशिया के लिए यूनेस्को क्षेत्रीय कार्यालय बना दिया गया, जिसमें बाँग्लादेश, भूटान, मालदीव, नेपाल और श्रीलंका भी शामिल हैं। भारत में संस्कृति मंत्रालय के अधीन भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण को यूनेस्को की नोडल एजेंसी बनाया गया है, जो 42 अन्य प्राकृतिक एवं सांस्कृतिक धरोहरों पर काम कर रहा है, जिन्हें भविष्य में यूनेस्को विरासत स्थल में शामिल किया जाना है।

कोणार्क

भारत के संस्कृति मंत्रालय ने 2014 में प्रोजेक्ट MAUSAM को यूनेस्को विश्व धरोहर समिति के 38वें सत्र में प्रस्तुत किया था, जिसमें इसका प्रमुख उद्देश्य हिंद महासागर क्षेत्र के प्राचीन समुद्री मार्गों और सांस्कृतिक संपर्कों को एक साझा विरासत के रूप में दस्तावेजीकरण करना तथा इन वैश्विक सांस्कृतिक संबंधों को अंतरराष्ट्रीय तरीके से यूनेस्को की विश्व धरोहर सूची में प्रस्तावित करना है।

MAUSAM की भूमिका इसलिए भी महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह न केवल भारतीय समुद्री और सांस्कृतिक इतिहास को विश्व धरोहर के दृष्टिकोण से चिह्नित करता है, बल्कि इसके माध्यम से भारत के विश्व धरोहर स्थलों और संभावित अंतरराष्ट्रीय नामांकनों की सूची को विस्तृत करने की दिशा में एक नया मंच तैयार होता है। प्रोजेक्ट MAUSAM के अंतर्गत भारत और साथी देशों के बीच सांस्कृतिक तथा ऐतिहासिक आदान-प्रदान के प्रमाण जुटाने और साझा ढाँचे की खोज करने से यह उम्मीद है कि हिंद महासागर से जुड़े ऐसे स्थल और परिदृश्य, जो अब तक यूनेस्को की सूची में शामिल नहीं हैं, उन्हें साझा विश्व धरोहर के संभावित स्थलों के रूप में प्रस्तावित किया जा सके।

भारत ने वैश्विक धरोहर संरक्षण के क्षेत्र में एक और महत्वपूर्ण उपलब्धि हासिल की है। संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार के अनुसार यूनेस्को की विश्व धरोहर अस्थायी सूची (Tentative List) में सात प्राकृतिक स्थलों को शामिल किए जाने से भारत की कुल प्रविष्टियों की संख्या 62 से बढ़कर 69 हो गई है। इसके साथ ही अब भारत के 49 सांस्कृतिक, 17 प्राकृतिक और तीन मिश्रित धरोहर स्थल विचाराधीन हैं, जो अपनी प्राकृतिक और सांस्कृतिक विरासत के संरक्षण के प्रति देश की प्रतिबद्धता को पुनः पुष्ट करते हैं। नई प्रविष्टियों में महाराष्ट्र के पंचगनी और महाबालेश्वर स्थित डेक्कन ट्रैप्स, कर्नाटक का सेंट मैरी द्वीप समूह, मेघालय की मेघालयन युग की गुफाएँ, नागालैंड का नागा हिल ओफियोलाइट, आंध्र प्रदेश के एर्रा मट्टी डिब्बालु और तिरुमला पहाड़ियों की प्राकृतिक धरोहर तथा केरल की वर्कला चट्टानें शामिल हैं।

यह शामिल किया जाना भविष्य में इन स्थलों के यूनेस्को की प्रतिष्ठित विश्व धरोहर सूची में नामांकन की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम माना जा रहा है। इन प्रस्तावों की तैयारी और प्रस्तुति का नेतृत्व भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण (ASI) ने किया, जिसे यूनेस्को में भारत के स्थायी प्रतिनिधि द्वारा सराहना भी मिली। वर्ष 2024 में नई दिल्ली में आयोजित 46वें विश्व धरोहर समिति सत्र की सफल मेजबानी के बाद यह उपलब्धि वैश्विक स्तर पर जीवित परंपराओं और प्राकृतिक धरोहरों के संरक्षण में भारत की सशक्त भूमिका को और मजबूत करती है।

विश्वगुरु होने के नाते इन स्मारकों को संरक्षित करने एवं सहेजने में हम भारतीयों की क्या भूमिका होनी चाहिए? सर्वप्रथम हमें स्मारकों पर कचरा फैलाने से बचना चाहिए, ऐतिहासिक दीवारों को

खजुराहो

खुरचकर या उन पर कुछ लिखकर उन्हें गंदा नहीं करना चाहिए, साथ ही हमें अपने बच्चों को ऐतिहासिक स्मारकों या अन्य विरासतों के प्रति शिक्षित करना चाहिए। इस प्रक्रिया को मूर्त रूप देने के लिए युवा पीढ़ी को भी आगे आना होगा और इन धरोहरों का नवीनतम और आधुनिकतम माध्यमों से दस्तावेजीकरण भी करना होगा।

इस संदर्भ में भारतीय संविधान की बात करें, तो इसमें स्मारकों के संरक्षण से संबंधित प्राथमिक मौलिक कर्तव्य अनुच्छेद 51A(f) के अंतर्गत आता है। यह अनुच्छेद नागरिकों को भारत की मिश्रित संस्कृति की समृद्ध विरासत का सम्मान करने और उसका संरक्षण करने का निर्देश देता है। यह कर्तव्य देश के ऐतिहासिक स्थलों और धरोहरों की सुरक्षा सुनिश्चित करता है। यदि सरकारी स्तर पर स्मारकों के संरक्षण की बात हो, तो अनुच्छेद 49 (राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांत) के तहत राष्ट्रीय महत्व के स्मारकों की रक्षा करना राज्य का कर्तव्य है। यह कर्तव्य, जो 42वें संविधान संशोधन (1976) द्वारा जोड़ा गया था, स्मारकों को नुकसान से बचाने और ऐतिहासिक धरोहरों को भविष्य के लिए सुरक्षित रखने के लिए नागरिकों को प्रेरित करता है।

साँची स्तूप

शांतिनिकेतन

विश्व धरोहर स्थल केवल ईंट-गारे या पत्थरों की बेजान इमारतें भर नहीं होते, बल्कि ये मानव-विकास के क्रमिक विकास की कहानी और प्रकृति के अद्‌भुत चमत्कार हैं। इन अमूल्य निधियों को बचाना, सहेजना और उन्हें सँवारकर रखना, यानी संरक्षित रखना हम सबका कर्तव्य है, सामूहिक दायित्व है। आखिर, आने वाली पीढ़ियों को हमारे पूर्वजों की उत्कृष्ट वास्तुकला, शिल्प और शैली से परिचित कराना हम सब का सामूहिक और स्वाभाविक दायित्व होना चाहिए। हमें यह भी सोचना चाहिए कि हमारी सभ्यता, संस्कृति और प्राकृतिक सुंदरता का संरक्षण करना केवल सरकार का नहीं, बल्कि हम सभी नागरिकों का सामूहिक उत्तरदायित्व है। विश्व धरोहर या विरासत (हेरिटेज) दिवस इसी उत्तरदायित्व की याद दिलाने वाला एक वैश्विक अवसर है।

बोध गया

भारत का उद्‌देश्य मात्र किताबों में लिखे गौरवशाली अतीत को लेकर पीठ थपथपानाभर नहीं है, बल्कि विश्व-पटल पर इसकी अभिव्यक्ति और स्वीकारोक्ति कराना है। हर भारतीय को भारत के प्रत्येक भू-भाग पर स्थित विरासत स्वरूपी खजाने को संरक्षित करने और इसे यूनेस्को कॉरीडोर में सम्मिलित करके टूरिस्ट मैप पर लाने का लक्ष्य रखना होगा, तभी हम भारत को पुनः सोने की चिड़िया बनाने में अपना योगदान दे सकेंगे। जैसा कि कहा भी गया है—'जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी' (माता और मातृभूमि का स्थान स्वर्ग से भी श्रेष्ठ है।)

नई दिल्ली विश्व पुस्तक मेला

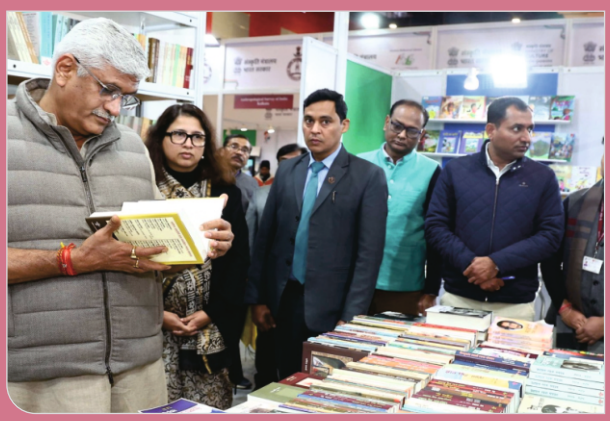

2026 : चित्रों की नजर से

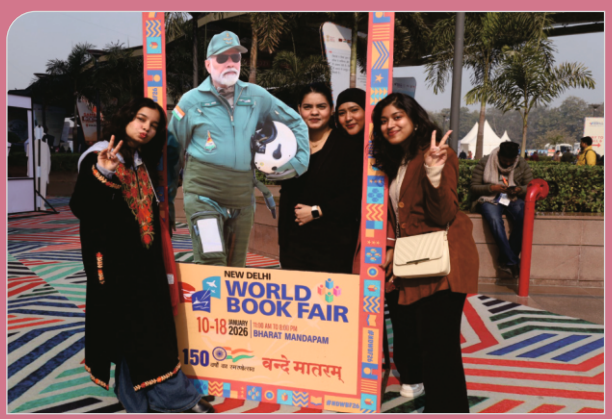

विश्व कला के संदर्भ में भारतीय चित्रकला एक विहंगावलोकन

कला मानव-मन की उत्कृष्ट अभिव्यक्ति का सर्वोच्च रूप है। चित्रकला इस कलात्मक अभिव्यक्ति का चाक्षुष रूप है। मानव आदिकाल से ही चित्र उकेरता रहा है, जिसके साक्ष्य पुरानी गुफाओं या फिर शैलचित्रों में देखने को मिलते हैं। 2021 में, सुलावेसी, इंडोनेशिया के मारोस-पांगकेप कार्स्ट में मिले चित्र, जो 45,500 साल से भी अधिक पुराने हैं, सबसे पुराना ज्ञात चित्रण और मानव इतिहास में चित्रात्मक कला का सबसे पहला

अनिल गोयल

नाट्य समीक्षा के क्षेत्र में अपना एक अलग स्थान बनाने वाले वरिष्ठ रंग समीक्षक, पत्रकार, उपन्यासकार, शोधकर्ता एवं अनुवादक अनिल गोयल ने कलाओं, विशेष रूप से रंगमंच में सराहनीय एवं विशद् लेखन कार्य किया है। पिछले 20 वर्षों से दिल्ली के रंगमंच के इतिहास पर निरंतर शोधरत।

राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय की त्रैमासिक पत्रिका 'रंग प्रसंग' के अतिथि संपादक के रूप में 'विकलांगों के साथ रंगमंच' पर विशेष अंक का प्रकाशन। कुछ फिल्मों के लिए पटकथा लेखन। 'दैनिक हिंदुस्तान' में कलाओं पर साप्ताहिक स्तंभ का लेखन।

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत से पुस्तिका 'सरकारी सेवाओं का उपयोग' तथा अंग्रेजी में पुस्तक 'म्यूजियम्स एंड कलेक्शंस ऑफ देहली' प्रकाशित। 'कहीं खुलता कोई झरोखा', 'नया सवेरा', नाटक 'एक थी लड़की उर्फ वे कुछ पल', के अतिरिक्त, कविताएँ और कहानियाँ भी प्रकाशित।

उदाहरण माना जाता है। लेआंग कराम्पुआंग में गुफा चित्र, जो मानव जैसी आकृतियों को एक सूअर के साथ बातचीत करते हुए दर्शाते हैं, लगभग 51,200 साल पुराने हैं। गुफा चित्रों के उदाहरण इंडोनेशिया, फ्रांस, भारत, स्पेन, दक्षिणी अफ्रीका, चीन, ऑस्ट्रेलिया इत्यादि में मिलते हैं।

भारतीय चित्रकला

भारतीय चित्रकला की बहुत लंबी परंपरा है। हमारे यहाँ चित्रकला का सबसे प्राचीन उदाहरण मध्यप्रदेश में भीमभेटका के शैलचित्र हैं, जो लगभग दस हजार वर्ष पुराने हैं। भारत में अजंता, बाघ, सित्तनवासल, अरममलाई गुफा (तमिलनाडु), एलोरा गुफाओं में कैलाशनाथ मंदिर, रामगढ़ और सीताबिंजी की गुफाएँ, छत्तीसगढ़ की चित्रित गुफा और थियेटर जोगीमारा और सीताबेंगा गुफा इत्यादि बीस से अधिक स्थानों पर भित्ति चित्र मिले हैं। इनसे कई हजार साल बाद, सातवीं शताब्दी में महाराष्ट्र में अजंता के तराशे हुए खंभे भारतीय पेंटिंग का एक सुंदर उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। भारतीय उपमहाद्वीप की जलवायु परिस्थितियों के कारण उस समय के बहुत कम उदाहरण ही आज बचे हैं। भारत के प्राचीन साहित्य में राजाओं इत्यादि के महलों और अन्य भवनों को चित्रों से सजाने के अनेकानेक उल्लेख मिलते हैं। इस अवधि में पांडुलिपियों पर भी चित्रकारी की जाती थी।

भारत में लघुचित्र या मिनिएचर पेंटिंग

लघुचित्र का भारत में एक बहुत दीर्घ इतिहास रहा है। यह शैली प्रायः सबसे पहले ताड़ के पत्तों की पांडुलिपियों पर उकेरे गए चित्रों के रूप में सामने आई। पश्चिम भारत

से लगभग 12वीं शताब्दी के जैन मिनिएचर और पूर्वी भारत में पाल साम्राज्य के बौद्ध मिनिएचर सबसे पुराने बचे हुए लघुचित्र हैं। परंतु तक्षशिला और नालंदा इत्यादि स्थानों पर लाखों पुस्तकों और पांडुलिपियों को जला दिए जाने के कारण भारतीय लघुचित्रों के समस्त प्रमाण लुप्तप्राय हो चुके हैं।

11वीं शताब्दी से पहले की लघु चित्रकला

इस बात के काफी सबूत होने के बावजूद कि कपड़े पर बड़े पटचित्र बनते थे, और उन्हें बनाने के तरीकों पर चर्चा करने वाले ग्रंथ उपलब्ध होने के बावजूद कपड़े पर एक भी मध्यकालीन भारतीय पेंटिंग नहीं बच पाई है, जब तक कि कुछ बौद्ध चित्रों को तिब्बती, या मध्य एशिया का न मान लिया जाए। सर ऑरेल स्टीन द्वारा चीन और तिब्बत से अनेक भारतीय चित्र लाये गए हैं। ब्लर्टन के अनुसार ऐसे प्रारंभिक चित्र मुख्य रूप से भारत की जलवायु के कारण, साथ ही बाद की शताब्दियों में इस्लाम के चित्रकला-विरोधी होने के कारण बचे न रह सके।

चित्रकला साहित्य

भारत में चित्रकला पर कई महत्वपूर्ण ग्रंथ भी लिखे गए। इनमें से कुछ बड़े विश्वकोश जैसे ग्रंथों के अध्याय हैं। ये चौथी और तेरहवीं शताब्दी ईसवी के बीच के हैं। इनमें चित्रसूत्र, हिंदू ग्रंथ विष्णुधर्मोत्तर पुराण के अध्याय 35-43 आदि सम्मिलित हैं। नग्नजित का 'चित्रलक्षण' भारत की शास्त्रीय चित्रकला पर लगभग पंद्रह सौ वर्ष पुराना एक क्लासिक है, जो इसे भारतीय चित्रकला पर सबसे पुराना ज्ञात ग्रंथ बनाता है; इसका संस्कृत संस्करण लुप्त हो चुका है, केवल तिब्बती अनुवाद उपलब्ध है, जिसमें उल्लेख है कि वह एक संस्कृत ग्रंथ का अनुवाद है। 'समरांगण सूत्रधार' (मुख्य रूप से वास्तुकला ग्रंथ, इसमें पेंटिंग पर एक बड़ा खंड है) 'अपराजितपृच्छा', 'मनसोल्लास', 'अभिलाषितार्थ चिन्तामणि', शिवतत्व रत्नाकर', 'चित्र कलाद्रुम', 'शिल्प रत्न', 'नारद शिल्प', 'सरस्वती शिल्प', 'प्रजापति शिल्प' और 'कश्यप शिल्प' इत्यादि ग्रंथ चित्रकला पर भारतीय विचारों, सिद्धांत और चित्रकला के अभ्यास, अन्य कलाओं से इसके संबंध, कैनवास या दीवार तैयार करने के तरीके, रंग बनाने की विधियों और अन्य विषयों पर चर्चा करते हैं। भारतीय पेंटिंग का प्रभाव म्यांमार के बागान में कई बौद्ध मंदिरों में देखा जा सकता है, खासकर अभयदाना मंदिर में, जिसका नाम वहाँ की रानी अभयदाना के नाम पर रखा गया था। रानी अभयदाना भारतीय मूल की थीं। पूर्वी भारतीय पेंटिंग का प्रभाव तिब्बती थांगका पेंटिंग में भी साफ देखा जा सकता है। दक्षिण एशियाई देशों, विशेषकर श्रीलंका की चित्र-कलाओं पर भारत का प्रभाव स्पष्ट नजर आता है।

भारतीय चित्रकला के षडंग

प्राचीन ग्रंथों ने चित्रकला के छह महत्वपूर्ण पक्षों को परिभाषित किया है। ये छह अंग हैं : रूपभेद दिखावट का ज्ञान, प्रमाणम सही बोध, माप और संरचना, भाव रूपों पर भावनाओं की क्रिया, लावण्य योजनम सुंदरता का समावेश, कलात्मक प्रस्तुति, सादृश्यम समानता और वर्णिकाभंग ब्रश और रंगों का उपयोग करने का कलात्मक तरीका। इन मूल सिद्धांतों पर ही भारतीय कलाकारों की कला आधारित थी।

राजपूत चित्रकला

प्रारंभिक मेवाड़ और मालवा स्कूल शैलीगत रूप से समान हैं और गुजरात के चौदहवीं-पंद्रहवीं शताब्दी के ग्रंथों में चित्रण की शैली से जुड़े हुए हैं। कुलहादार चित्रों के समूह में बिल्हण की चौरपंचासिका—चोर के पचास छंद, गीता गोविंद, भागवत पुराण और रागमाला सम्मिलित थे। सोलहवीं शताब्दी के अंत से राजपूताना के दरबारों में राजपूत चित्रकला की कई अलग-अलग शैलियाँ विकसित हुईं। सचित्र किताबों के साथ-साथ, विशेष रूप से शेखावटी क्षेत्र में महलों, किलों और हवेलियों की दीवारों पर अनेक भित्ति-चित्र भी थे। वहाँ मारवाड़ी व्यवसायी अपने घरों को चमकीले रंगों से रँगवाते थे।

राजपूत चित्रकला में चार मुख्य समूह शामिल हैं : मेवाड़, मारवाड़, हाड़ौती और ढूँढाड़। पहाड़ी चित्रकला राजपूत शैली का विस्तार है। इसे पंजाब हिल्स शैली भी कहा जाता है। मालवा और जौनपुर चित्रकला शैलियाँ अलग हैं।

मुगल चित्रकला

मुगल चित्रकला सोलहवीं शताब्दी में उभरी। यह फारसी लघु चित्रों से बहुत ज्यादा प्रभावित थी। अकबर ने अनेक चित्रकारों को नियुक्त किया था, जिनमें से अधिकांश गुजरात, ग्वालियर और कश्मीर के थे। उसके बाद जहाँगीर और शाहजहाँ ने पेंटिंग को संरक्षण देना जारी रखा। लेकिन औरंगजेब ने धार्मिक कारणों से चित्रकला को नापसंद किया, और 1670 के आसपास राजकीय कार्यशाला को भंग कर दिया। तब ये कलाकार दक्कन और राजपूताना के हिंदू दरबारों में चले गए, और लघुचित्र शैली कई स्थानीय रूपों में विकसित हुई। इनमें बूँदी, किशनगढ़, जयपुर, मारवाड़ और मेवाड़ जैसे राजस्थान चित्रकला के विभिन्न स्कूल शामिल थे।

प्रारंभिक मुस्लिम काल में चित्रकला का बहुत ह्रास हुआ, क्योंकि इस्लाम में मानव-चित्र बनाने की मनाही है। उत्तर-मुस्लिम काल में चित्रकला पर कुछ काम हुआ, जिस काल में प्रमुखतः पुस्तकों की सज्जा के लिए लघु-चित्रों का सहारा लिया जाता था। मुगल मिनिएचर में कुछ हिंदू महाकाव्यों और अन्य विषयों के फारसी अनुवादों का भी चित्रण हुआ। 'राधा बणी ठणी' (लगभग अठारहवीं शताब्दी), गीत गोविंद शृंखला (1825) और शकुंतला (1870) जैसे चित्र इस काल की महानतम उपलब्धियों में से हैं। मैसूर और तंजावुर की चित्र शैली, बंगाल और ओड़िशा के पट्टचित्र, असम की पेंटिंग जैसी अनेक शैलियाँ भारत में विकसित हुईं।

स्थानीय कला

भारतीय स्थानीय कला परंपराओं में भील, वर्ली, गोंड, संथाल, सौरा, कुरुम्बा इत्यादि आते हैं। ग्रामीण चित्रकला में पट्टचित्र, मधुबनी, मंजुशा, कलमकारी, कोलम, कलम, मंडाना इत्यादि सम्मिलित हैं।

आधुनिक भारतीय चित्रकला

कंपनी शैली

कंपनी शैली भारतीय और यूरोपीय कलाकारों द्वारा भारत में बनाये गए चित्रों की एक मिश्रित (हाइब्रिड) इंडो-यूरोपीय शैली है, जिससे उन्नीसवीं शताब्दी में पश्चिमी प्रभाव वाले कला स्कूल शुरू हुए। इससे 'आधुनिक' भारतीय चित्रकला का जन्म हुआ। पिछले पाँच सौ वर्षों में भारतीय चित्रकला पर विदेशी प्रभाव पड़ा, जिससे भारतीय शैलियों का ह्रास हुआ। लेकिन अब भारतीय चित्र-शैलियाँ तेजी से अपनी जड़ों की ओर लौट रही हैं। भारतीय चित्रों की अनेकों क्षेत्रीय परंपराएँ अभी भी काम कर रही हैं।

आधुनिक भारतीय कला में 1930 के दशक में बंगाल स्कूल ऑफ आर्ट का उदय हुआ, जिसके बाद यूरोपीय और भारतीय शैलियों में कई तरह के प्रयोग हुए। अठारहवीं और उन्नीसवीं शताब्दियों में यूरोप के देशों के द्वारा एशिया, अफ्रीका और दक्षिण अमेरिका आदि पर अधिकार जमा लिये जाने के कारण यूरोप की चित्रकला का प्रभाव इन महाद्वीपों के अनेक देशों पर पड़ा। आजादी के बाद मॉडर्निस्ट विचारों के फैलने के साथ ही भारतीय कला जगत पर बंगाल स्कूल का असर धीरे-धीरे कम होने लगा।

स्वतंत्रता के बाद

इस काल में कला के बारे में बौद्धिक चर्चा में वृद्धि ने कला को देखने के तरीके को बदल दिया। आलोचनात्मक दृष्टिकोण पर पूर्ण रूप से पश्चिमी आलोचना-प्रणाली का प्रभाव होने के कारण भारतीय आलोचकों ने भारतीय पारंपरिक शैलियों की उपेक्षा ही की। लेकिन इस काल में आनंद के. कुमारस्वामी भारत के सर्वाधिक सम्मानित चित्रकला विवेचक रहे, जिन्होंने भारत के साथ-साथ इंडोनेशियाई कला पर भी विस्तार से लिखा। कृष्ण चैतन्य, सी. शिवराममूर्ति तथा इसाबेला नारदी इस परंपरा के अन्य भारतीय चित्रकला विश्लेषक रहे हैं। अनगिनत भारतीय ग्रंथों के यूरोपीय देशों में चले जाने के कारण

भारतीय चित्रकला के इतिहास का अध्ययन एक बहुत दुष्कर कार्य है। भारत में चित्रकला में आधुनिक समय में आलोचना के क्षेत्र में एक राजनैतिक विचारधारा का आधिपत्य रहने के कारण हमारे यहाँ आलोचना और समीक्षात्मक कार्य एक-पक्षीय रहा, जिस कारण से भारत की स्थानीय कलाओं का ह्रास हुआ, उपेक्षा हुई।

“पश्चिम में आधुनिक चित्रकला के पनपने का एक बड़ा कारण रहा यूरोप का साम्राज्यवाद। पंद्रहवीं-सोलहवीं शताब्दियों में फैले यूरोपीय साम्राज्यवाद के चलते जो एक आर्थिक समृद्धि वहाँ आई, उसने वहाँ के चर्चों में कलाकारों को चित्रकला में बड़े प्रयोग करने के लिए एक सुदृढ़ आधार प्रदान किया। लगभग 1500 ईसवी के आसपास प्रारंभ हुए पुनर्जागरण ने आधुनिक पश्चिमी कला की नींव रखी। इस काल में चित्रकार चर्च और अमीर लोगों के लिए काम करते थे। बारोक युग की शुरुआत से कलाकारों को ज्यादा पढ़े-लिखे और धनी मध्यवर्ग से काम मिलने लगा।”

विश्व चित्रकला

अफ्रीकी, यहूदी, इस्लामी, इंडोनेशियाई, चीनी, जापानी, रोमन, ग्रीक और मिस्र की कलाएँ विश्व की महत्वपूर्ण कलाएँ हैं, जिनमें से प्रत्येक की अपनी विशिष्ट उपलब्धियाँ हैं। नेटिव अमेरिकन कला, माया कला, प्री-कोलम्बियन कला, ऐबओरिजिनल आर्ट भी अपने में महत्वपूर्ण विधाएँ हैं। इंडोनेशियाई, चीनी, फिलिपीनी, कोरियाई और जापानी चित्रकलाओं की अपनी-अपनी विशेषताएँ हैं, जो दर्शकों को लुभाती हैं। वहाँ उपलब्ध सामग्री, वहाँ की भौगोलिक और राजनीतिक स्थितियों ने वहाँ की चित्रकला को प्रभावित किया है। अपनी-अपनी स्थानीय विशिष्टताओं के साथ-साथ, पिछले दो से ढाई हजार वर्षों में इन कलाओं के विकास में हिंदू और बौद्ध प्रभाव स्पष्ट नजर आते हैं। इसी प्रकार से अफ्रीकी, यहूदी और इस्लामी चित्रकलाएँ भी अपनी विशिष्टताएँ रखती हैं, जिस कारण से उनकी अपनी अलग पहचान हैं।

पश्चिम में आधुनिक चित्रकला के पनपने का एक बड़ा कारण रहा यूरोप का साम्राज्यवाद। पंद्रहवीं-सोलहवीं शताब्दियों में फैले यूरोपीय साम्राज्यवाद के चलते जो एक आर्थिक समृद्धि वहाँ आई, उसने वहाँ के चर्चों में कलाकारों को चित्रकला में बड़े प्रयोग करने के लिए एक सुदृढ़ आधार प्रदान किया। लगभग 1500 ईसवी के आसपास प्रारंभ हुए पुनर्जागरण ने आधुनिक पश्चिमी कला की नींव रखी। इस काल में चित्रकार चर्च और अमीर लोगों के लिए काम करते थे। बारोक युग की शुरुआत से कलाकारों को ज्यादा पढ़े-लिखे और धनी मध्यवर्ग से काम मिलने लगा। इसके बाद रोकोको, नव-क्लासिकवाद, स्वच्छंदतावाद (रोमांटिसिज्म), प्रभाववाद (इम्प्रैशनिज्म), उत्तर-प्रभाववाद, अति-यथार्थवाद (सरियलिज्म), डाडाइज्म, क्यूबिज्म, प्रतीकवाद, अमूर्त (ऐब्स्ट्रैक्ट), नियोप्लास्टिसिज्म, सोशल रियलिज्म, पॉप आर्ट, आर्ट ब्रूट, न्यू रियलिज्म, फोटोरियलिज्म, मिनिमलिज्म आदि अनेक ‘आंदोलन’ चले, जो वहाँ की लगातार बदलती आर्थिक-राजनीतिक परिस्थितियों व तकनीकी विकास को दर्शाते थे। कैमरे और फिल्म के आविष्कार ने वहाँ की चित्रकला की सोच पर बहुत प्रभाव डाला।

विश्व कला दिवस

विश्व कला दिवस ललित कलाओं का एक अंतरराष्ट्रीय उत्सव है, जिसे दुनियाभर में रचनात्मक गतिविधियों के बारे में जागरूकता बढ़ाने के लिए इंटरनेशनल एसोसिएशन ऑफ आर्ट द्वारा घोषित किया गया था। ग्वाडलजारा (मेक्सिको) में इंटरनेशनल एसोसिएशन ऑफ आर्ट की महासभा में 15 अप्रैल को विश्व कला दिवस घोषित करने का प्रस्ताव रखा गया था, जिसका पहला उत्सव 2012 में मनाया गया। यह तारीख लियोनार्डो दा विंची के जन्मदिन के सम्मान में तय

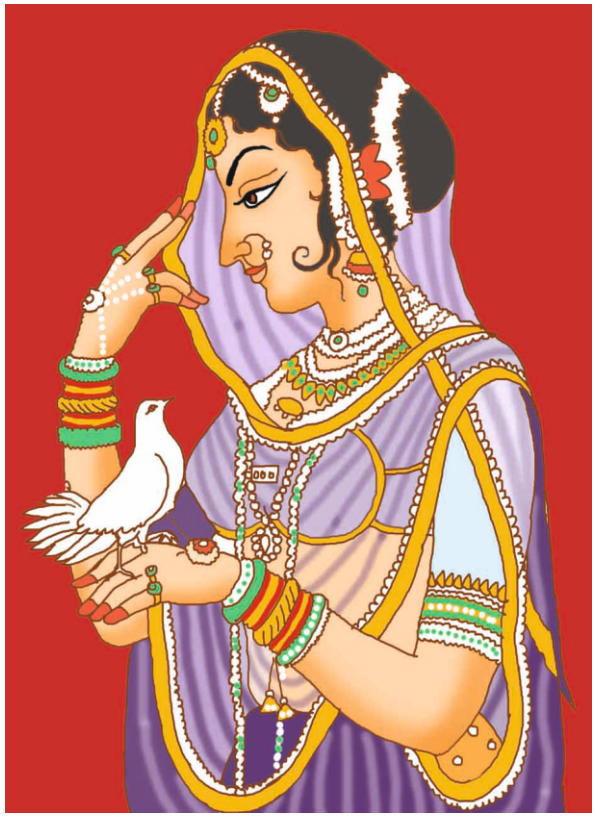

की गई थी। इस पहले विश्व कला दिवस को इंटरनेशनल एसोसिएशन ऑफ आर्ट की सभी राष्ट्रीय समितियों और 150 कलाकारों ने समर्थन दिया था, जिनमें अधिकतर यूरोप, दक्षिण अफ्रीका और दक्षिण अमेरिका के कलाकार थे।

भारतीय रेल
भाप इंजन से बुलेट ट्रेन तक का सफर

भारतीय रेल अपने देश से और समाज से बहुत गहराई से जुड़ा हुआ है। भारतीय रेल के बिना भारत के विकास की कल्पना भी नहीं कर सकते हैं। भारतीय रेल के 173 वर्षों का इतिहास बहुत ही गौरवशाली और अनेक उतार-चढ़ाव से भरा हुआ है। इसके लंबे इतिहास और विकास को भाप इंजनों का युग, डीजल इंजनों का युग, बिजली इंजनों का युग और अब बुलेट ट्रेन के युग में बाँट सकते हैं। भारतीय रेल के इस 173 गौरवपूर्ण वर्षों में एक सौ वर्ष पूरी तरह से भाप वाली रेलगाड़ियों के नाम रहा। भारतीय रेल, विश्व में सबसे

विमलेश चंद्र

शिक्षा : इलेक्ट्रिकल इंजीनियरिंग और RTM में डिप्लोमा।

प्रकाशन : रेलवे विशेषज्ञ और लेखक। रेलवे विषय पर विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में अब तक 600 लेख प्रकाशित, रेलवे पर सात पुस्तकें प्रकाशित, रेलवे जानकार और लेखक, 3,000 से ज्यादा रेलवे पोस्ट लिखना।

सम्मान : तीन बार लिम्का बुक ऑफ रिकॉर्ड में स्थान प्राप्त, 'राजभाषा गौरव पुरस्कार', हिंदी राजभाषा से जुड़े कई विभागीय पुरस्कार।

संप्रति : रेलवे अधिकारी पद से सेवानिवृत्त होकर स्वतंत्र लेखन

संपर्क : मोबाइल– 9574011888

ईमेल– vimleshchandra.awmbvp@gmail.com

बड़ा सरकारी रेल संगठन है। इससे प्रतिदिन यह करीब ढाई करोड़ लोग यात्रा करते हैं। भारतीय रेल, पूरे भारत को सांस्कृतिक, भाषायी, राष्ट्रीय एकता और यातायात के साधन के तौर पर एक सूत्र में जोड़ती है।

भाप इंजन की रेलगाड़ियों का सफर

शुरुआत में भारतीय रेल में मुख्य रूप से दो रेल कंपनियाँ अग्रणी थीं, जिनमें भारत की पहली सरकारी रेल कंपनी, कलकत्ता की ईस्ट इंडिया रेलवे कंपनी और मुंबई की ग्रेट इंडिया पेनिनसुला रेलवे कंपनी शामिल थीं। भारत एवं एशिया की प्रथम रेलगाड़ी की शुरुआत 16 अप्रैल, 1853 को बोरीबंदर से ठाणे के बीच जीआईपी रेलवे द्वारा ट्रेन चलाए जाने से हुई थी। इस प्रथम रेलगाड़ी में सुल्तान, सिंध और साहिब नामक तीन भाप इंजन लगाये गए थे। इस रेलगाड़ी में कुल 14 कोच लगे थे। भारत की दूसरी रेलगाड़ी, ईस्ट इंडियन रेलवे द्वारा 15 अगस्त, 1854 को, प्रथम यात्री रेलगाड़ी, हावड़ा से हुगली के बीच 24 मील की दूरी तक चलायी गई थी। इस रेलवे के द्वारा वर्ष 1855 में 'फेयरी क्वीन' और 'एक्सप्रेस' नाम के भाप इंजन मँगाये गए थे, जो अभी भी कार्यरत अवस्था में रखे हुए हैं। वर्ष 1876 में राजपूताना स्टेट रेलवे द्वारा अजमेर में मीटरगेज इंजन कारखाना स्थापित किया गया था, जहाँ से स्वदेशी रेल इंजनों का निर्माण शुरू हुआ था। इसी इंजन कारखाने से देश की सर्वप्रथम तथा पूर्णतः स्वदेशी भाप इंजन F-734 का वर्ष 1895 में निर्माण हुआ था। चितरंजन से वर्ष 1970 में भारतीय रेल का अंतिम बड़ी गेज का भाप इंजन 'अंतिम सितारा' बनाया गया था।

बिजली इंजन की रेलगाड़ियों का सफर

भारत एवं एशिया की प्रथम विद्युत रेलगाड़ी तत्कालीन जी.आई.पी. रेलवे के द्वारा 03 फरवरी, 1925 को बंबई वीटी से हार्बर ब्रांचलाइन पर कुर्ला तक चलायी गई थी।

यह रेलगाड़ी एक बड़ी लाइन वाली भारत एवं एशिया की प्रथम विद्युत मल्टीपल यूनिट वाली रेलगाड़ी थी। इस रेलगाड़ी में कुल चार यूनिट वाले चार कोच लगे थे। ये सभी कोच स्टैंडर्ड ऑटोमेटिक वैक्यूम ब्रेक सिस्टम वाले कोच थे। यह रेलगाड़ी 1500 वोल्ट डीसी बिजली सप्लाई से चलती थी। भारत की दूसरी बिजली उपनगरीय रेलगाड़ी बीबीसीआईआर रेलवे ने रेलगाड़ी 05 जनवरी 1928 को महालक्ष्मी से अंधेरी स्टेशन के बीच चलायी गई थी। बाद में, इसके विद्युतीकृत रेलमार्ग को विरार तक बढ़ाया गया। भारत में मीटरगेज की सर्वप्रथम विद्युत रेलगाड़ी मद्रास एंड साउदर्न मराठा रेलवे द्वारा 2 अप्रैल, 1931 को मद्रास सेंट्रल और मद्रास बीच (नया नाम चेन्नई बीच) स्टेशनों के मध्य चली थी। वर्ष 1948 में चितरंजन में बिजली इंजन कारखाना स्थापित किया गया। वर्ष 1957 में फ्रांस रेलवे से अपनाई गई। 25 केवी एसी संकर्षण प्रणाली अपनाने के बाद, भारतीय रेल में 11 अगस्त, 1960 को 75 रूट किमी. मार्ग पर देश में पहली बार 25 किलोवोल्ट एसी संकर्षण प्रणाली दक्षिण-पूर्व रेलवे के राजखर्सवान तथा डोंगीपोसी के बीच प्रारंभ की गई थी। कोलकाता मेट्रो रेलवे में

750 वोल्ट डीसी थर्ड रेल संकर्षण प्रणाली प्रारंभ की गई थी। भारतीय रेल ने वर्ष 1960 में फ्रांस से 2,900 अश्वशक्ति वाले यात्री और मालगाड़ी इंजनों के आयात के साथ 50 हट्र्ज वाली एसी तकनीक भी हस्तांतरित किया और इस तकनीक के साथ 30 वर्षों से अधिक समय तक कार्य किया। इस अवधि के दौरान इसका बेहतर उपयोग करते हुए 5,000 अश्वशक्ति वाले यात्री और मालगाड़ी इंजनों का निर्माण किया गया। ट्रेन लोड में वृद्धि के साथ विद्युत इंजनों की विद्यमान तकनीक को अपग्रेड किया गया, जिसके लिए भारतीय रेल ने एकदम आधुनिक तकनीक वाली तीन फेज वाले उच्च अश्वशक्ति के विद्युत इंजनों को आयातित किया। भारतीय रेल ने जुलाई 1993 में बॉम्बार्डियर से उच्च अश्वशक्ति वाले आधुनिक माइक्रोप्रोसेसर नियंत्रित तीन फेज ड्राइव वाले 30 विद्युत इंजन प्राप्त करने के साथ-साथ उन इंजनों को अपने देश में चितरंजन रेल इंजन कारखाने में निर्मित करने के लिए तकनीक भी प्राप्त की थी। 25 केवी प्रणाली से एक नियोजित तरीके से चुनिंदा मेन लाइनें और हाई डेंसिटी मार्गों का विद्युतीकरण का कार्य शुरू किया गया था। आज मुंबई, कोलकाता, नई दिल्ली और चेन्नई को जोड़ने वाले सात बड़े ट्रंक रूट पूरी तरह विद्युतीकृत हैं। विद्युतीकरण से, बड़ी मात्रा में आयातित डीजल तेल पर से देश की निर्भरता कम हुई है। वर्तमान समय में, भारतीय रेल की बड़ी लाइन के 99% रेल नेटवर्क का विद्युतीकरण हो चुका है।

डीजल इंजन वाली रेलगाड़ियों का सफर

भारतीय रेल में कई प्रकार के डीजल रेल इंजन प्रचलित हैं। इनमें नैरोगेज, मीटर गेज और बड़ी लाइन के डीजल इंजन शामिल हैं। भारतीय रेल में जर्मनी में बने, नैरोगेज के डीजल रेल इंजनों की शुरुआत, वर्ष 1955 में, कालका-शिमला रेलवे में हुआ था। मीटरगेज डीजल रेल इंजनों की शुरुआत, वर्ष 1955 में, नॉर्थ ब्रिटिश लोकोमोटिव कंपनी से 20 डीजल रेल इंजनों के आयात के साथ हुई थी। इसे अगस्त 1955 में पश्चिम रेलवे के मेल/एक्सप्रेस रेलगाड़ी में लगाकर पहली बार गांधीधाम से पालनपुर के बीच चलाया गया था। बड़ी लाइन डीजल रेल इंजनों की शुरुआत के रूप में बड़ी लाइन का प्रथम डीजल इंजन वर्ष 1956 में एल्को अमेरिका से मँगाया गया था। इसके साथ ही, यहाँ से एक सौ डीजल इंजन मँगाए गये थे। इन्हें पूर्व रेलवे तथा दक्षिण-पूर्व रेलवे में 20 से अधिक वर्षों तक उपयोग किया गया। वर्ष 1957-58 में पूरे भारतीय रेल में लौह अयस्क तथा कोयला की ढुलाई के लिए डीजल रेल इंजन चलाने का निर्णय लिया गया तथा तीन तरह के डीजल इंजन भी मँगाये गए। इसके साथ ही पूरी तरह से डीजल रेल इंजनों की शुरुआत हो गई थी। सर्वप्रथम कुछ विशिष्ट रेलगाड़ियों में डीजल इंजन लगाए जाने लगे, जिसके कारण रेलगाड़ियों की गति तथा ज्यादा कोच लगाए जाने से गाड़ियों की क्षमता बढ़ गई तथा यात्रा-समय में कमी आने लगी। वर्ष 1960 में भाप इंजन वाले रेलमार्ग पर भी डीजल इंजन चलाने का पूरा निर्णय ले लिया गया तथा नया डीजल इंजन बनाने के लिए अल्को तकनीकी को अपनाया गया। वर्ष 1961 में वाराणसी में डीजल रेल इंजन कारखाना की स्थापना हुई तथा 3 जनवरी, 1964 को प्रथम डीजल इंजन बनकर निकला। इस प्रकार, यही शुरुआत धीरे-धीरे बढ़कर पूरे भारतीय रेल में डीजलीकरण हो गया। अब सभी जगह विद्युतीकरण हो जाने से डीजल इंजनों को धीरे-धीरे सेवा से बाहर किया जा रहा है।

कोंकण रेलवे

कोंकण रेलवे ने पश्चिम भारत को दक्षिण भारत से एक नये रेलमार्ग से जोड़ दिया है। कोंकण रेलवे की स्थापना रोहा से थोकूर तक 741 किमी. लंबी रेललाइन बनाने तथा रेलगाड़ियाँ चलाने के लिए की गई थी। यह परियोजना अक्तूबर 1990 में शुरू हुई थी तथा इसे

26 जनवरी, 1998 को पूर्ण रूप से परिचालित कर दिया गया था। पूरे भारतीय रेल में सबसे पहले रो-रो (रोल ऑन-रोल ऑफ) सेवा कोंकण रेलवे में 26 जनवरी, 1999 को शुरू किया गया था। कोंकण रेलवे में सबसे पहले टक्कररोधी उपकरण, रक्षा कवच का विकास किया गया था। कुछ वर्षों पहले तक, देश की सबसे लंबी रेलवे सुरंग कोंकण रेलवे की 6,506 मी. लंबी करबुड़े सुरंग थी। देश का सबसे ऊँचा रेल पुल कोंकण रेलवे का पनवेल नदी रेल पुल था। कोंकण रेलवे का यह पुल 423.25 मीटर लंबा तथा 64 मीटर ऊँचा है। कोंकण रेलवे को मूर्त रूप देने का काम ई. श्रीधरन ने किया था, जिन्होंने दिल्ली मेट्रो रेलवे का सफलतापूर्वक निर्माण और संचालन कराया था। कोंकण रेलवे में कुल 382 कर्व, कुल 2,286 रेल पुल, 72 रेलवे स्टेशन और 91 सुरंग हैं। कोंकण रेलवे का सबसे लंबा पुल होनावर में शरावती नदी पर बना है, जिसकी लंबाई 2,065.8 मीटर है। कोंकण रेलवे लाइन के विद्युतीकरण के लिए नवंबर 2015 में शिलान्यास किया गया था। रोहा, महाराष्ट्र से थोकुर, कर्नाटक तक फैले पूरे 741 किलोमीटर मार्ग को मार्च 2022 में विद्युतीकृत कर दिया गया था। इस तरह से, अब पूरा कोंकण रेलवे बिजली वाली रेललाइन है।

कश्मीर घाटी रेलवे

यह रेललाइन उधमपुर से शुरू होकर श्रीनगर होते हुए बारामूला तक है। यह पूरी रेलवे लाइन 272 किमी. लंबी है। जम्मू-उधमपुर रेलवे लाइन के बाद उधमपुर-कटरा के 25 किमी. लंबे रेलखंड को 04 जुलाई, 2014 को खोला गया था। इस रेलवे का अंतिम खंड संगलदान से कटरा तक का 63 किमी. खंड, 06 जून, 2025 को खोला गया और इसके साथ ही, कश्मीर घाटी रेलवे पूरे भारतीय रेल से जुड़ गई। इसी के साथ ही सुप्रसिद्ध चिनाब रेल पुल और अंजी खड्ड रेल पुल भी खुल गया। भारतीय रेल में सबसे लंबी रेल सुरंग कश्मीर घाटी रेलवे का टनल T-50 है, जिसकी लंबाई 12.775 किमी. है। भारतीय रेल की दूसरी सबसे लंबी रेल सुरंग पीर पंजाल रेल सुरंग है, जिसकी लंबाई 11.215 किमी. है। देश की तीसरी सबसे लंबी रेल सुरंग कश्मीर घाटी रेलवे में T-44 है। इसकी लंबाई 11.130 किमी. लंबी है, जबकि चौथी लंबी रेल सुरंग T-49 है, जिसकी लंबाई 10.178 किमी. है। इसके बाद जो भी सुरंगें हैं वे सभी 10 किमी. से छोटी हैं। इस रेललाइन के निर्माण में कई भूकंप क्षेत्रों, अत्यधिक तापमान और दुर्गम पहाड़ी इलाके सहित प्राकृतिक चुनौतियों का सामना करना पड़ा था। यह एक जटिल, खतरनाक और दुर्गम रेललाइन है। कश्मीर घाटी में रेलवे निर्माण की अनेक बड़ी कठिनाइयाँ आई थीं, जैसे कि रेलवे लाइन का सर्वे करना, रेलवे लाइन सर्वे वाली रूट के तुरंत पास में पक्की और लंबी तथा मजबूत सड़क बनाना, सड़क को रेलवे लाइन से जोड़ना, जब सड़क बन जाए तब रेललाइन बनाने वाली बड़ी-बड़ी मशीनों, जैसे कि ड्रिल मशीन इत्यादि को सड़क मार्ग से लाकर रेललाइन वाले रूट के पास रखना और फिर जाकर रेललाइन, पुल और सुरंग बनाना। यह सब बहुत कठिन और जोखिम भरा कार्य था। कश्मीर घाटी रेलवे विश्व के सबसे जटिल रेलवे में से एक है।

भारतीय रेल की शान–'वंदे भारत एक्सप्रेस'

'वंदे भारत एक्सप्रेस' नए भारत की नई शुरुआत है। यह भारतीय रेल की अब तक की सबसे आधुनिक और पूर्ण रूप से स्वदेशी रेलगाड़ी है। यह दो बड़े शहरों के बीच चलने वाली एक मध्यम दूरी की रेलगाड़ी सेवा है। एक तरह से यह शताब्दी एक्सप्रेस के समान चलने वाली सेमी हाई स्पीड वाली सुपरफास्ट रेलगाड़ी है। वर्ष 2016 में गतिमान एक्सप्रेस के उद्घाटन के साथ ही देश की पहली सेमी हाई स्पीड रेलगाड़ी शुरू की गई थी। यह रेलगाड़ी दिन में चलने वाली ट्रेन सेवा है। इसकी अधिकतम गति 160 किमी./घंटा तक है। यह पूरी तरह से बिजली से चलने वाली रेलगाड़ी है। यह इंटीग्रल कोच फैक्ट्री चेन्नई द्वारा निर्मित किया जाता है। इसे कम लागत वाले रखरखाव और परिचालन अनुकूलन के अनुसार बनाया गया है। इसकी पहली सेवा 15 फरवरी, 2019 को शुरू हुई थी। इस ट्रेन में आठ से 16 कोच होते हैं। इस रेलगाड़ी को पूरी तरह से वातानुकूलित और स्वचालित प्लग दरवाजे वाली और ऑनबोर्ड वाई-फाई और कई अन्य तरह की आधुनिक सुविधाओं से सुसज्जित किया गया है। ट्रेन में चेयर कार और एक्जीक्यूटिव चेयर कार की व्यवस्था है। इसका नया स्वरूप 'वंदे भारत स्लीपर एक्सप्रेस' नाम से गुवाहाटी और हावड़ा के बीच शुरू किया गया है। भारतीय रेल में वर्तमान में 50 से अधिक वंदे भारत एक्सप्रेस रेलगाड़ियाँ चल रही हैं।

समर्पित फ्रेट कॉरिडोर

इस रेलमार्ग पर केवल मालगाड़ी ही चलती है, लेकिन इसे ऐसा बनाया गया है कि जरूरत पड़ने पर इसे सेमी हाई स्पीड यात्री गाड़ी के लिए भी उपयोग किया जा सकता है। यह अभी दो मुख्य मार्ग पर चल रही है, जिसमें पहला पूर्वी समर्पित फ्रेट कॉरिडोर और दूसरा पश्चिमी

समर्पित फ्रेट कॉरिडोर है। पूर्वी कॉरिडोर का नियंत्रण कार्यालय प्रयागराज में और पश्चिमी कॉरिडोर का नियंत्रण कार्यालय साबरमती में है। पश्चिमी कॉरिडोर, दादरी से मुंबई तक कुल लंबाई 1,504 किमी. है, जबकि पूर्वी कॉरिडोर, लुधियाना से सोननगर तक कुल लंबाई 1,337 किमी. है। इसके लगभग सभी स्टेशन एक समान या एक डिजाइन के बने हैं। दूसरी बात यह कि रेलवे के जो अभी पुराने स्टेशन हैं उसके आगे 'न्यू' लगा दिया गया है, तो अब उस स्टेशन का नाम नया हो गया है। जैसे कि न्यू खुर्जा, न्यू रेवाड़ी, न्यू मकरपुरा, न्यू डगमगपुर इत्यादि। ये सभी डबल रेलवे लाइन वाली हाई राइज/हाई पैंटोग्राफ वाली बिजलीकृत रेलमार्ग हैं। सभी संरचना और रेलवे लाइन इस रेलवे का है और रोलिंग स्टॉक, भारतीय रेल का है। समर्पित फ्रेट कॉरिडोर की मुख्य विशेषताओं में रेलगाड़ी की लंबाई 1.5 किमी., 3,660 मिमी. चौड़ाई और 7.1 मीटर ऊँचाई है। यह मालगाड़ी पहली और दुनिया में अपने प्रकार की अकेली मालगाड़ी है। इसके हाई स्पीड फ्रेट ट्रेन की गति 100 किमी./घंटा से ज्यादा होती है। सभी रेलगाड़ियों में रेडियो संचार और जीएसएम आधारित ट्रैकिंग लगाया गया है। इस गलियारे में कोई लेवल क्रॉसिंग नहीं है और निर्माण की गुणवत्ता और गति में सुधार के लिए सबसे उन्नत निर्माण तकनीकों का उपयोग किया गया है।

भारतीय रेल की प्रमुख रेलगाड़ियाँ

भारतीय रेल की प्रतिष्ठित रेलगाड़ियों में राजधानी एक्सप्रेस, शताब्दी एक्सप्रेस, तेजस एक्सप्रेस, दुरंतो एक्सप्रेस, युवा एक्सप्रेस, गतिमान एक्सप्रेस, जनशताब्दी एक्सप्रेस, संपर्क क्रांति एक्सप्रेस, डबल डेकर एक्सप्रेस, वंदे भारत एक्सप्रेस, वंदे भारत स्लीपर एक्सप्रेस, हमसफर एक्सप्रेस आदि शामिल हैं। जबकि महाराजा एक्सप्रेस, पैलेस ऑन व्हील्स, डेक्कन ओडिसी, हेरिटेज ऑन व्हील, महापरिनिर्वाण एक्सप्रेस, गोल्डन चैरिअट, भारत गौरव, तमिल संगम एक्सप्रेस इत्यादि प्रमुख पर्यटन रेलगाड़ियाँ हैं।

भारत में बुलेट ट्रेन वाली रेलगाड़ियों का सफर

पिछले कई दशक से भारत में भी बुलेट ट्रेन चलने की काफी चर्चा होती रही है। अब संभवतः यह अगले ही वर्ष चलने वाली है। बुलेट ट्रेन रेलगाड़ी चलाने के लिए बनाई जाने वाले संरचना की शुरुआत के लिए 14 सितंबर, 2017 को अहमदाबाद के साबरमती में शिलान्यास किया गया था। जापान की शिंकांसेन रेलगाड़ियों को बुलेट ट्रेन कहा जाता है, क्योंकि इन रेलगाड़ियों का आकार बुलेट अर्थात बंदूक की गोली जैसा होता है। यह रेलगाड़ी भी इसी बुलेट की तरह नुकीली और तेज गति वाली होती है। इसके कारण इस ट्रेन का निकनेम 'बुलेट ट्रेन' दिया गया है। सामान्यतया, उच्च गति की रेललाइन उसे कहते हैं, जिस पर कम-से-कम 250 किमी./घंटा की गति से रेलगाड़ी चलाई जा सके। बुलेट ट्रेन इसी प्रकार की उच्च गति रेललाइन पर चलती है। भारत अब दुनिया के उन देशों में शामिल हो जाएगा, जहाँ बुलेट ट्रेन चल रही हैं। इस परियोजना के पहले हिस्से के रूप में सूरत से बिलीमोरा तक, 15 अगस्त, 2027 को चलने की संभावना है। इसके बाद इसे वापी तक खोला जाएगा। फिर इसे सूरत से अहमदाबाद तक खोला जाएगा। इसके अंतिम चरण में वापी से कुर्ला कॉम्प्लेक्स मुंबई तक खोला जाएगा। चूँकि मुंबई का सेक्शन 21 किमी. लंबी सुरंग में बन रहा है, जिसमें सात किमी. लंबी बुलेट ट्रेन रेललाइन समुद्र के अंदर सुरंग में बन रही है तो इस सेक्शन को पूरा होने में समय लगेगा। मुंबई से अहमदाबाद तक पूरा 508 किमी. लंबा कॉरिडोर होगा। यह पूरा सेक्शन दिसंबर 2029 तक खुलने की संभावना है। बहरहाल, अभी तक दुनिया के प्रमुख देशों में भारत ही ऐसा देश रहा है, जिसके पास एक भी हाईस्पीड कॉरिडोर नहीं था। यह परियोजना जापान की मदद से बन रही है। भारतीय बुलेट ट्रेन का 92 फीसदी हिस्सा उत्थापित या एलिवेटेड होगा, जबकि बाकी का भाग सुरंग होगा। इसके लिए जापान का चयन इसलिए किया गया था, क्योंकि जापान, बुलेट ट्रेन के मामले में अग्रणी रहा है और कई दशकों में दुर्घटनारहित संचालन का इसका शानदार रिकॉर्ड रहा है। मुंबई-अहमदाबाद बुलेट ट्रेन परियोजना, जापान की शिंकांसेन तकनीक पर आधारित है। भारतीय बुलेट ट्रेन परियोजना में गुजरात की तरफ का मुख्य स्टेशन अहमदाबाद में होगा, जबकि साबरमती में बुलेट ट्रेन का यार्ड और मरम्मत डिपो बनाया जा रहा है। बुलेट ट्रेन की लागत में कमी आने से उस तकनीक से भारतीय रेल नेटवर्क को भी उन्नत बनाया जा सकेगा। इस प्रकार से यह परियोजना भारतीय रेल की दशा और दिशा बदलने वाली परियोजना साबित होगी।

विज्ञान में महिलाएँ और बालिकाएँ
समान अवसर से समृद्ध भविष्य की ओर

विज्ञान मानव-सभ्यता के विकास की सबसे महत्वपूर्ण आधारशिला रहा है। प्रकृति को समझने, जीवन को सुरक्षित बनाने और समाज को बेहतर दिशा देने में विज्ञान की भूमिका निर्णायक रही है। लेकिन यह भी एक ऐतिहासिक सच्चाई है कि विज्ञान के क्षेत्र में महिलाओं और बालिकाओं की भागीदारी लंबे समय तक सीमित रही। यह स्थिति केवल किसी एक देश या संस्कृति तक सीमित नहीं रही, बल्कि विश्व के

डॉ. शैलेश शुक्ला

जन्म : फतेहपुर, उत्तर प्रदेश

शिक्षा : एम.ए. हिंदी, एम.ए. जनसंचार, एमबीए एवं पीएच-डी.

प्रकाशन : विभिन्न प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में कविताएँ, कहानियाँ, लेख एवं शोधपत्रों सहित 1,000 से अधिक रचनाएँ प्रकाशित।

सम्मान : गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग द्वारा 'राजभाषा गौरव पुरस्कार' 2019-20, हिंदी अकादेमी, दिल्ली द्वारा 'नवोदित लेखक पुरस्कार' 2003-04 सहित अनेक पुरस्कारों से सम्मानित।

संप्रति : दिल्ली में एक दशक से अधिक शिक्षण-प्रशिक्षण। विभिन्न देशों में हिंदी भाषा, साहित्य का प्रचार-प्रसार। वैश्विक समूह संपादक, 'सृजन संसार' अंतरराष्ट्रीय ई-पत्रिका समूह।

संपर्क : मोबाइल– 9312053330

ईमेल– poetshailesh@gmail.com

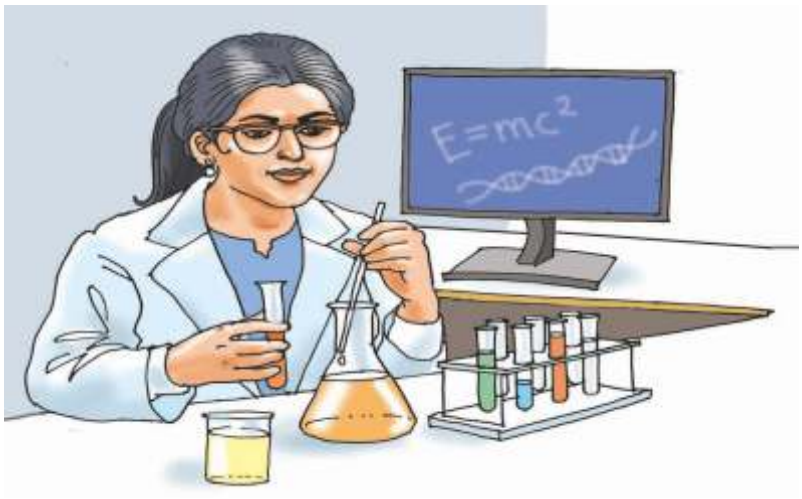

अधिकांश समाजों में किसी-न-किसी रूप में दिखाई देती रही है। आज जब दुनिया तकनीकी और वैज्ञानिक प्रगति के तीव्र दौर से गुजर रही है, तब यह प्रश्न और अधिक प्रासंगिक हो जाता है कि क्या यह प्रगति वास्तव में सभी के लिए समान है?

विज्ञान केवल प्रयोगशालाओं या शोधपत्रों तक सीमित विषय नहीं है। यह स्वास्थ्य, शिक्षा, पर्यावरण, कृषि, जल, ऊर्जा और दैनिक जीवन की समस्याओं से सीधे जुड़ा हुआ क्षेत्र है। ऐसे में यदि समाज की आधी आबादी—महिलाएँ और बालिकाएँ—विज्ञान की मुख्य धारा से पीछे रह जाती हैं, तो विकास न केवल अधूरा रह जाता है, बल्कि असंतुलित भी हो जाता है। विज्ञान में महिलाओं की भागीदारी का प्रश्न इसलिए केवल लैंगिक समानता का नहीं, बल्कि विकास की गुणवत्ता और दिशा का भी प्रश्न है।

वैश्विक स्तर पर उपलब्ध आँकड़े यह संकेत देते हैं कि विज्ञान, प्रौद्योगिकी, इंजीनियरिंग और गणित जैसे क्षेत्रों में महिलाओं की भागीदारी आज भी अपेक्षाकृत कम है। शोध और नवाचार से जुड़े क्षेत्रों में महिलाओं की हिस्सेदारी औसतन एक-तिहाई से भी कम मानी जाती है। उच्च तकनीकी और इंजीनियरिंग क्षेत्रों में यह प्रतिशत और घट जाता है। यह स्थिति इस तथ्य की ओर इशारा करती है कि प्रतिभा की कमी नहीं है, बल्कि अवसरों, समर्थन और निरंतरता की कमी है।

भारत के संदर्भ में स्थिति कुछ हद तक मिश्रित दिखाई देती है। एक ओर भारत ने विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में उल्लेखनीय उपलब्धियाँ हासिल की हैं, वहीं दूसरी ओर महिलाओं और बालिकाओं की भागीदारी अभी भी संतोषजनक स्तर तक नहीं पहुँच पाई है। विद्यालय और महाविद्यालय स्तर पर विज्ञान विषयों में पढ़ने वाली छात्राओं की संख्या में वृद्धि हुई है, लेकिन शोध, नवाचार और नेतृत्वकारी वैज्ञानिक पदों पर महिलाओं

की उपस्थिति सीमित बनी हुई है। यह अंतर इस बात को दर्शाता है कि शिक्षा के प्रारंभिक स्तर पर अवसर मिलने के बावजूद, आगे की राह में अनेक सामाजिक और संस्थागत बाधाएँ सामने आती हैं।

“विज्ञान में महिलाओं की भागीदारी में आने वाली चुनौतियाँ केवल शिक्षा तक सीमित नहीं हैं। कार्यस्थल पर सुरक्षित और सहयोगी वातावरण का अभाव, करियर में निरंतरता बनाए रखने की कठिनाई और पारिवारिक जिम्मेदारियों का असमान बोझ भी बड़ी बाधाएँ हैं। विशेष रूप से शोध और अनुसंधान से जुड़े क्षेत्रों में लंबे समय तक निरंतर कार्य की अपेक्षा की जाती है।”

बालिकाओं का विज्ञान से संबंध वास्तव में स्कूल के स्तर से ही आकार लेने लगता है। कई अध्ययनों से यह स्पष्ट होता है कि प्रारंभिक कक्षाओं में बालिकाएँ विज्ञान और गणित में अच्छा प्रदर्शन करती हैं और उनमें जिज्ञासा भी प्रबल होती है। लेकिन जैसे-जैसे शिक्षा का स्तर आगे बढ़ता है, उनकी संख्या घटने लगती है। इसके पीछे सामाजिक धारणाएँ, करियर को लेकर अनिश्चितता, पारिवारिक अपेक्षाएँ और भविष्य को लेकर असुरक्षा की भावना महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। कई बार विज्ञान और तकनीक को अब भी ‘कठिन’ या ‘पुरुषों का क्षेत्र’ मान लिया जाता है, जिससे बालिकाएँ स्वयं को इस क्षेत्र से अलग महसूस करने लगती हैं।

विज्ञान में महिलाओं की भागीदारी में आने वाली चुनौतियाँ केवल शिक्षा तक सीमित नहीं हैं। कार्यस्थल पर सुरक्षित और सहयोगी वातावरण का अभाव, करियर में निरंतरता बनाए रखने की कठिनाई और पारिवारिक जिम्मेदारियों का असमान बोझ भी बड़ी बाधाएँ हैं। विशेष रूप से शोध और अनुसंधान से जुड़े क्षेत्रों में लंबे समय तक निरंतर कार्य की अपेक्षा की जाती है। ऐसे में कई महिलाएँ करियर के मध्य चरण में ही पीछे हटने को मजबूर हो जाती हैं। यह स्थिति विज्ञान के लिए भी एक बड़ा नुकसान है, क्योंकि इससे प्रशिक्षित और सक्षम मानव संसाधन का क्षय होता है।

इन चुनौतियों के बावजूद, भारत और विश्व स्तर पर अनेक महिला वैज्ञानिकों ने यह सिद्ध किया है कि अवसर मिलने पर वे किसी भी क्षेत्र में उत्कृष्ट योगदान दे सकती हैं। चिकित्सा विज्ञान, जैव प्रौद्योगिकी, पर्यावरण अध्ययन, अंतरिक्ष अनुसंधान और सूचना प्रौद्योगिकी जैसे क्षेत्रों में महिलाओं ने उल्लेखनीय कार्य किया है। इन उपलब्धियों का महत्व केवल व्यक्तिगत सफलता तक सीमित नहीं है, बल्कि यह समाज के लिए प्रेरणा का स्रोत भी बनता है। जब बालिकाएँ ऐसे उदाहरण देखती हैं, तो उन्हें यह विश्वास होता है कि विज्ञान उनके लिए भी एक वास्तविक और सम्मानजनक विकल्प है।

विज्ञान में महिलाओं की भागीदारी का महत्व केवल प्रतिनिधित्व तक सीमित नहीं है। शोध यह दर्शाते हैं कि जब वैज्ञानिक समुदाय में विविधता होती है, तो अनुसंधान के प्रश्न अधिक व्यापक और समाधान अधिक प्रभावी होते हैं। स्वास्थ्य विज्ञान में महिलाओं की भागीदारी से महिला-विशिष्ट और बाल स्वास्थ्य से जुड़े मुद्दों पर बेहतर समझ विकसित होती है। पर्यावरण और जलवायु परिवर्तन के क्षेत्र में महिलाओं की दृष्टि स्थानीय अनुभवों और सामुदायिक ज्ञान को शोध से जोड़ती है। इस प्रकार, विज्ञान अधिक मानवीय और समाजोपयोगी बनता है।

STEM शिक्षा और लैंगिक समानता का संबंध भी इसी संदर्भ में महत्वपूर्ण हो जाता है। STEM शिक्षा केवल तकनीकी कौशल नहीं सिखाती, बल्कि तार्किक सोच, समस्या-समाधान और नवाचार की क्षमता विकसित करती है। यदि बालिकाओं को प्रारंभ से ही इन क्षेत्रों में समान अवसर और प्रोत्साहन मिले, तो वे न केवल विज्ञान में आगे बढ़ सकती हैं, बल्कि समाज के अन्य क्षेत्रों में भी नेतृत्वकारी भूमिका निभा सकती हैं। इसके लिए आवश्यक है कि शिक्षा प्रणाली प्रयोगात्मक, जिज्ञासा-आधारित और जीवन से जुड़ी हो।

शिक्षकों की भूमिका इस प्रक्रिया में अत्यंत महत्वपूर्ण होती है। यदि शिक्षक बालिकाओं को प्रश्न पूछने, प्रयोग करने और अपनी सोच व्यक्त करने के लिए प्रोत्साहित करते हैं, तो उनका आत्मविश्वास बढ़ता है। इसके विपरीत, यदि अवचेतन रूप से भी भेदभावपूर्ण दृष्टिकोण अपनाया जाता है, तो बालिकाओं की रुचि और क्षमता प्रभावित होती है। इसलिए शिक्षक प्रशिक्षण और शैक्षणिक वातावरण में संवेदनशीलता लाना आवश्यक है।

परिवार और समाज का समर्थन भी विज्ञान में महिलाओं की भागीदारी के लिए निर्णायक भूमिका निभाता है। भारत जैसे समाज में करियर का चयन अकसर पारिवारिक सोच से प्रभावित होता है। यदि परिवार विज्ञान को बालिकाओं के लिए कठिन या असुरक्षित मानता है, तो वे स्वयं भी संकोच करने लगती हैं। लेकिन जब परिवार विश्वास और समर्थन प्रदान करता है, तो बालिकाएँ आत्मविश्वास के साथ आगे बढ़ती हैं। इस प्रकार, लैंगिक समानता केवल नीतियों का विषय नहीं, बल्कि सामाजिक मानसिकता का भी प्रश्न है।

आज का समय उन्नत तकनीकों का है—कृत्रिम बुद्धिमत्ता, डेटा विज्ञान, जैव चिकित्सा और अंतरिक्ष अनुसंधान जैसे क्षेत्र मानव-जीवन को नई दिशा दे रहे हैं। यदि इन क्षेत्रों में महिलाओं और बालिकाओं की भागीदारी सीमित रही, तो तकनीकी प्रगति समाज के कुछ वर्गों तक ही सिमट सकती है। इसके विपरीत, यदि महिलाएँ इन क्षेत्रों में सक्रिय भूमिका निभाती हैं, तो विज्ञान अधिक संतुलित और न्यायपूर्ण रूप ले सकता है। इसलिए यह आवश्यक है कि महिलाएँ और बालिकाएँ केवल तकनीक की उपभोक्ता न बनें, बल्कि उसकी निर्माता और निर्णयकर्ता भी हों।

मीडिया और साहित्य की भूमिका भी यहाँ महत्वपूर्ण हो जाती है। जब महिला वैज्ञानिकों की कहानियाँ, उनके संघर्ष और उपलब्धियाँ

सामने आती हैं, तो समाज की सोच बदलती है। विज्ञान को यदि केवल पुरुष-प्रधान क्षेत्र के रूप में प्रस्तुत किया जाएगा, तो बालिकाएँ स्वयं को उससे अलग महसूस करेंगी। इसके विपरीत, जब विज्ञान में महिलाओं की उपस्थिति को स्वाभाविक और सामान्य रूप में दिखाया जाएगा, तो यह धारणा टूटेगी कि विज्ञान किसी एक वर्ग तक सीमित है।

अंततः, विज्ञान में महिलाओं और बालिकाओं की भागीदारी का प्रश्न हमें यह सोचने के लिए प्रेरित करता है कि हम किस प्रकार का भविष्य चाहते हैं। क्या हम ऐसा समाज बनाना चाहते हैं, जहाँ ज्ञान और अवसर कुछ लोगों तक सीमित हों, या ऐसा समाज, जहाँ विज्ञान सभी के लिए समान रूप से खुला हो? भारत जैसे युवा और प्रतिभाशाली देश के लिए यह प्रश्न विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। यहाँ की महिलाएँ और बालिकाएँ यदि विज्ञान में पूरी क्षमता के साथ आगे बढ़ें, तो देश न केवल तकनीकी रूप से, बल्कि सामाजिक रूप से भी अधिक सशक्त बन सकता है।

महिलाओं, बालिकाओं और विज्ञान से जुड़े राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय दिवस समानता, चेतना और वैज्ञानिक भागीदारी के साझा उद्देश्य को रेखांकित करते हैं। अंतरराष्ट्रीय महिला दिवस (8 मार्च) महिलाओं के सामाजिक, आर्थिक और बौद्धिक अधिकारों की महत्ता को स्थापित करता है, जबकि राष्ट्रीय विज्ञान दिवस (28 फरवरी) समाज में वैज्ञानिक दृष्टि, तर्क और अनुसंधान संस्कृति को मजबूत करने का संदेश देता है। अंतरराष्ट्रीय महिला एवं बालिका विज्ञान दिवस (11 फरवरी) विज्ञान, प्रौद्योगिकी और STEM क्षेत्रों में महिलाओं व बालिकाओं की भूमिका को केंद्र में लाता है। ये सभी दिवस बताते हैं कि सामाजिक समानता और वैज्ञानिक प्रगति परस्पर पूरक हैं तथा इनकी सार्थकता स्थायी सामाजिक और शैक्षिक परिवर्तन से ही सिद्ध होती है।

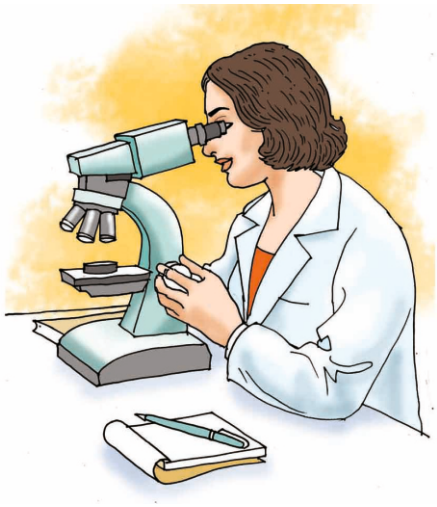

निष्कर्षतः, यह स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि विज्ञान की वास्तविक प्रगति और उसकी नई दिशा की परिकल्पना तब तक पूर्ण नहीं हो सकती, जब तक महिलाएँ और बालिकाएँ उसमें केवल सहभागी ही नहीं, बल्कि समान और सक्रिय भागीदार के रूप में प्रतिष्ठित न हों। विज्ञान का उद्देश्य केवल तकनीकी उन्नति या भौतिक सुविधाओं का विस्तार नहीं है, बल्कि मानव-जीवन को अधिक न्यायपूर्ण, संतुलित और संवेदनशील बनाना भी है। इस व्यापक उद्देश्य की प्राप्ति के लिए विज्ञान में लैंगिक समानता कोई वैकल्पिक या सहायक तत्व नहीं, बल्कि उसकी आधारभूत शर्त है। महिलाओं और बालिकाओं की भागीदारी को यदि अब भी किसी विशेष रियायत या अनुग्रह के रूप में देखा जाएगा, तो यह स्वयं विज्ञान की समावेशी प्रकृति के विपरीत होगा। वस्तुतः, यह समानता न्याय, लोकतंत्र और सतत विकास की अनिवार्यता है।

समान शिक्षा तक पहुँच, सुरक्षित और सम्मानजनक कार्यस्थल, वैज्ञानिक जिज्ञासा को पोषित करने वाला सहयोगी वातावरण तथा निरंतर प्रेरक मार्गदर्शन—ये सभी तत्व मिलकर विज्ञान के क्षेत्र में एक ऐसी संरचना का निर्माण कर सकते हैं, जहाँ प्रतिभा का मूल्यांकन लिंग के आधार पर नहीं, बल्कि बौद्धिक क्षमता, नवाचार और सामाजिक प्रासंगिकता के आधार पर हो। जब बालिकाओं को प्रारंभ से ही यह विश्वास दिया जाता है कि विज्ञान उनका भी क्षेत्र है, तो वे केवल ज्ञान अर्जित नहीं करतीं, बल्कि प्रश्न पूछने, समाधान खोजने और समाज की जटिल समस्याओं पर वैज्ञानिक दृष्टि से विचार करने की क्षमता विकसित करती हैं। यही क्षमता विज्ञान को मानवीय सरोकारों से जोड़ती है और उसे समाज के व्यापक हित में उपयोगी बनाती है।

इसके अतिरिक्त, महिलाओं और बालिकाओं की वैज्ञानिक भागीदारी अनुसंधान और नवाचार को बहुआयामी बनाती है। विविध अनुभवों और दृष्टिकोणों के समावेश से विज्ञान अधिक संतुलित, समावेशी और व्यावहारिक समाधान प्रस्तुत कर सकता है। स्वास्थ्य, पर्यावरण, शिक्षा और तकनीक जैसे क्षेत्रों में महिलाओं की उपस्थिति उन मुद्दों को भी केंद्र में लाती है, जो प्रायः उपेक्षित रह जाते हैं। इस प्रकार, विज्ञान न केवल अधिक प्रभावी बनता है, बल्कि सामाजिक न्याय और मानवीय मूल्यों से भी गहराई से जुड़ता है।

अंततः, जब एक बालिका विज्ञान को अपनाती है, तो वह केवल अपने व्यक्तिगत भविष्य की दिशा निर्धारित नहीं करती, बल्कि सामाजिक सोच, पारिवारिक अपेक्षाओं और सामूहिक आकांक्षाओं को भी नई दृष्टि प्रदान करती है। वह आने वाली पीढ़ियों के लिए यह संदेश छोड़ती है कि ज्ञान और नवाचार पर किसी एक वर्ग का अधिकार नहीं, बल्कि यह साझा मानव विरासत है। इसी अर्थ में, विज्ञान की नई दिशा समान अवसरों से समृद्ध उस भविष्य की ओर संकेत करती है, जहाँ प्रगति केवल तकनीकी उपलब्धि नहीं, बल्कि न्यायपूर्ण और मानवीय विकास का प्रतीक बन सके।

भूल सुधार

'पुस्तक संस्कृति' के जनवरी-फरवरी 2026 अंक में, पृ.सं. 41 पर लेखक-परिचय में, लेखक सुशील स्वतंत्र का नाम भूलवश स्वतंत्र शुक्ल प्रकाशित हो गया था। इसके लिए हमें खेद है।

समीक्षक : **डॉ. राजेश कुमार व्यास**

लेखक : **यशवंत व्यास**

प्रकाशक : पेंगुइन स्वदेश, गुरुग्राम, हरियाणा

पृष्ठ : 223

मूल्य : रु. 250/-

बेगमपुल से दरियागंज

यशवंत व्यास की सद्यःप्रकाशित पुस्तक 'बेगमपुल से दरियागंज' लोकप्रिय साहित्य का इतिहास, संस्कृति और सृजन से जुड़ी दृष्टि का अनूठा आख्यान है। अपनी किस्सागोई में उन्होंने इसमें 'पल्प' का इतिहास जीवंत किया है। माँग आधारित उत्पादन के अंतर्गत कम लागत वाली, बड़े पैमाने पर छपी पेपरबैक पुस्तकों के भारतीय ही नहीं, वैश्विक सरोकारों की थाह इसमें ली गई है। गुटनबर्ग द्वारा सस्ते कागजों का पता लगा प्रिंटिंग प्रेस में टाइप ढालने और उसके बाद उस समय में नौ लाख किताबें छपने और सस्ते में सब तक उनकी पहुँच की रोचक दास्ताँ से पुस्तक शुरू होती है। पर, इसमें ऐसी पुस्तकों के नहीं छापे जाने के अवरोधों की भी गाथा है। प्रख्यात सुधारक मार्टिन लूथर चर्च के खिलाफ पैंफ्लेट जारी कर जर्मनी और यूरोप में उसे बाँटते हैं। चिंतित चर्च पढ़ने को फिजूल कहकर अज्ञान को मुक्ति का मार्ग बताता है। मुझे लगता है, लोकप्रिय लेखन के आलोक में बहुत-से स्तरों पर अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के संकट, संघर्ष की व्यथा-कथा भी है यह पुस्तक। पुस्तक बताती है, कैसे अठारहवीं सदी में चार से चौबीस पेज में प्रकाशित सेक्स, क्राइम और कत्ल जैसे विषयों पर प्रकाशित चैप बुक्स और उन्हें साइकिल पर वितरण करने वालों के प्रति आकर्षण हुआ करता था और अमेरिकी प्रकाशक ब्रिटिश प्रकाशकों की पायरेसी से पैसा कमाने लगे थे। पल्प रेशों से कागज के रोल बनाने वाले लुई रॉबर्ट के बाद छपाई में आए क्रांतिकारी बदलाव का रोचक संधान इसमें है। गुडरीड्स द्वारा ऐसी पुस्तकों से सहेजे नीति वाक्यों संग पुस्तक में हिंदुस्तान में जेम्स हेडली चेज के अनुवादों, प्रेरणाओं और रूपांतरणों के जरिए लुगदी प्रकाशकों द्वारा कमाई करने और पेपरबैक पॉकेट बुक्स की क्रांति से ऐसे लेखन की बदली काया की दास्ताँ भी हैं।

बीसवीं सदी के उच्च साहित्य पर लोक साहित्य के प्रभाव का आकलन भी यहाँ हैं तो, सेक्सपियर के जिंदा होने तक उन्हें लोकप्रिय साहित्य में गिने जाने और बाद में शास्त्रीय में सम्मिलित किए जाने के पीछे की महती दृष्टि भी है। देवकीनंदन खत्री के 'चन्द्रकांता' की अपार लोकप्रियता में निहित कथा बढ़त पुस्तक में है, तो 'चन्द्रकांता संतति' के मुख्य पात्र भूतनाथ पर केंद्रित उपन्यास के शेष पंद्रह भाग उनके पुत्र द्वारा पूरे करने की रोचक दास्तां भी है। पल्प लेखक वेदप्रकाश काम्बोज से संवाद आलोक में भी पल्प के महती सूत्र पुस्तक में निहित हैं।

'बेगमपुल से दरियागंज' पुस्तक नहीं किस्सागोई में लिखा शोध ग्रंथ है। पॉकेट बुक्स के क्रांतिदाता कहे जाने वाले परशुराम शर्मा की वह अनकही कहानी भी इसमें है, जिसमें अपहरण और बलात्कार के आरोप में सहारनपुर जेल की सजा काटने वाला किशोर कैसे बाद में मशहूर उपन्यासकार बन जाता है। हिंदी की वर्णमाला नहीं पढ़ सकने वाले हिंदी में अपार लोकप्रिय सईद ही नहीं, उनसे डिक्टेशन लेकर जनप्रिय लेखक बनने वाले आबिद रिजवी की रोचक कथा भी इसमें है तो इब्ने सईद, राही मासूम रजा द्वारा एक ही समय में एक साथ कई स्क्रिप्ट पर काम करने जैसी कथाओं के आलोक में पुस्तक पल्प के बहाने लोकप्रिय साहित्य के बहुत सारे अनजाने-अनछुए पहलुओं से हमें साक्षात् कराती है। पढ़ेंगे तो यह भी लगेगा, शब्द-दर-शब्द दृश्यों से हम साक्षात् हो रहे हैं।

असल में बेगम पुल मेरठ शहर का वह महत्वपूर्ण स्थल है, जो लुगदी साहित्य या कहें, पल्प का आरंभ से ही प्रमुख केंद्र रहा है। हिंदी पल्प का बड़ा बाजार तब यही शहर था। यहाँ की गलियों में विचरते यशवंत व्यास पल्प साहित्य रचने वालों से मिले ही नहीं, उनके भीतर झाँका भी है। इस झाँकने में ही उन्होंने बहुत कुछ जो महत्वपूर्ण पाया, उसे हमें सौंपा है। मुझे लगता है, यशवंत व्यास ने बेगम पुल से दरियागंज के आलोक में हिंदी पल्प की दुनिया की अपनी खास किस्सागोई अंदाज में छानबीन ही नहीं की है, वह इस बहाने पढ़ने की प्रवृत्तियों का मनोवैज्ञानिक सच भी अनायास हमें सौंपते हैं। देवकीनंदन खत्री, किशोरीलाल गोस्वामी, गोपालराम गहमरी, दत्त भारती, गुलशन नंदा, प्रेम वाजपेई, रानू, राजहंस, ऋतुराज, ओमप्रकाश शर्मा, कृश्न चंदर, अकरम इलाहाबादी, सुरेंद्र मोहन पाठक, इब्ने सफी, कुशवाह कांत, प्यारेलाल आवारा आदि महत्वपूर्ण लेखकों के सिरजे में ही वह हमें नहीं ले जाते, बल्कि इन सबके जीवन की अनकही दास्तां भी हमें सुनाते हैं।

पुस्तक चौदह बयानों में दर्ज है। पर यह बयान कहन का अनूठा सौंदर्य लिए हुए है। शब्द-दर शब्द इनमें जैसे दृश्य रचे गए हैं। पढ़ते हुए पल्प साहित्य की कहानियाँ ही नहीं उनके रचे जाने के संसार से भी हम साक्षात् होते हैं। जेम्स हेडली चेज के अनुवाद और प्रेरणाओं ने कैसे पल्प का महती गढ़ा, कैसे देवकीनंदन खत्री के 'चन्द्रकांता' ने हिंदी पाठकों के संसार को समृद्ध किया—इस सब का रोचक ताना-बाना है, यशवंत व्यास की यह पुस्तक।

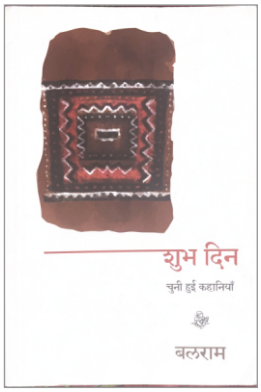

समीक्षक : **जनार्दन मिश्र**

लेखक : **बलराम**

प्रकाशक : राजकमल प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली

पृष्ठ : 160

मूल्य : रु. 250/-

शुभ दिन

चुनी हुई कहानियाँ

पत्नीमुखी प्रेम के चितेरे बलराम के कहानी-संग्रह 'शुभ दिन' में कुल 14 कहानियाँ संगृहीत हैं। ये सभी चुनिंदा कहानियाँ उनके विभिन्न कथा-संग्रहों में प्रकाशित हो चुकी हैं। समाज के पिछड़े वर्ग के पात्रों से जुड़ी समस्याओं को पूर्ण संवेदना के साथ अपनी रचनाओं में उकेरने वाले बलराम ने पत्रकारिता के साथ-साथ साहित्यिक जगत में भी ख्याति अर्जित की है। कई संस्थाओं द्वारा सम्मानित-पुरस्कृत बलराम वर्तमान में भी साहित्य अकादमी की पत्रिका 'समकालीन भारतीय साहित्य' के संपादक हैं।

इस संग्रह की 'शिक्षाकाल' शीर्षक कहानी में कथाकार ने बड़ी मार्मिकता के साथ मध्य एवं निम्नवर्गीय परिवार के जीवन-चरित्र का यथार्थ चित्रण किया है। अपना ही सगा भाई माता-पिता के न रहने पर अपनी पत्नी के साथ मिलकर अपने से छोटे सीधे-सादे भाई के साथ नौकर जैसा व्यवहार करता है। छोटा भाई पढ़ना चाहता है पर बड़ा भाई उसे दिन-रात काम में उलझाए रखता है। उसकी पत्नी उसे भरपेट खाना नहीं देती है, जबकि अपने पति एवं बच्चों को अपने मन मुताबिक खिलाती-पहनाती है। वह देवर के सामने रूखा-सूखा खाना रख देती है। उसके वजीफे को भी भाई-भाभी हड़प लेते हैं। इस कहानी में तथाकथित सवर्ण ही दलित, वंचित, शोषित कहे जाने वालों पर अत्यचार नहीं करते, बल्कि एक ही जाति, परिवार, यहाँ तक कि खून के रिश्ते में बड़े भाई-भाभी ऐसा अत्याचार करते हैं कि पाठक का दिल दहल जाता है। यह कहानी दर्शाती है कि राग-द्वेष के भाव के लिए जरूरी नहीं कि व्यक्ति अलग संप्रदाय या जाति का हो। यह सब मानवीय सोच और संवेदना पर निर्भर करता है।

'कलम हुए हाथ' इस संग्रह की छठीं कहानी है। वरिष्ठ साहित्यकार विश्वनाथ त्रिपाठी ने अपनी भूमिका में ठीक ही कहा है कि मेरी दृष्टि में यह उपन्यास का विषय है। हाथ कट जाने को 'कलम हुए हाथ' कहना, विशेषकर साहित्य या रूपक के रूप में कहना, बिलकुल सही है। जमींदारी चले जाने के बाद भी वर्षों तक गाँव-देहातों में जमींदारों का दबदबा बना रहा। संयुक्त परिवार में यदि आपसी तालमेल सही है, तो बड़ी-से बड़ी चुनौतियों का भी आसानी से सामना करने में वे कामयाब हो जाते हैं, पर बात-बात में आपसी खींच-तान, झगड़ा-झंझट, लेन-देन की बात होने लगे, तो परिवार में बिखराव आने में देर नहीं लगती। घर का मुखिया अपाहिज हो जाए, तो उसकी बातों में वह ताकत नहीं रह जाती जो परिवार को संभाल सके। जुआ-शराब की लत से शरीर, दिमाग और सामाजिक जीवन पर कई तरह के नकारात्मक असर पड़ते हैं। नशेड़ी व्यक्ति के अंदर निर्णय लेने की क्षमता घट जाती है। वह बात-बात में आक्रामक हो जाता है। अपनी कुत्सिक चाल से ठाकुर तीन भाइयों में मझले को जुआ और शराब की लत में डुबो देता है, फिर तीनों भाइयों में बँटवारे और उनकी जमीन हड़पने में कामयाब हो जाता है। अनेक देशज बोली-बानी के प्रयोग से यह कहानी ग्रामीण जीवन के चरित्र को पाठकों के सामने प्रस्तुत करती है।

बलराम की कहानियों में किसान जीवन के विविध रूप देखने को मिलते हैं। निम्नवर्गीय किसानों के पास, जो थोड़ी-बहुत जमीन होती है, उसे हड़पने के लिए गाँवों में दबंग लोग, चाहे किसी भी जाति या समुदाय के हों तरह-तरह की चाल चलते हैं, क्योंकि किसानों के बच्चों की पढ़ाई-लिखाई, दवा, कपड़ा-लत्ता, शादी-व्याह यहाँ तक कि जीवन-मरण में सिर्फ जमीन ही नजर आती है और दबंगों की नजर उनकी जमीन पर होती है। एक तरह से बलराम को किसान जीवन का चितेरा भी कह सकते हैं।

'शुभ दिन' कहानी, जो इस संग्रह का शीर्षक भी है, इसमें मध्य वर्ग के एकल परिवार के संबंधों को बड़ी बारीकी से बुना गया है, जो महानगर में रहते हैं और आर्थिक बोझ को कम करने के लिए पति-पत्नी दोनों कार्यरत रहते हैं। जब पति-पत्नी के बीच मानसिक और शारीरिक तालमेल एक-दूसरे की सूझ-बूझ से ठीक-ठाक बना रहता है, तो एक दूसरे के सुख-दुख को गहरे भाव-बोध से समझते हैं। चाहते हुए भी शारीरिक संबंध बराबर नहीं बन पाता, फिर भी उसके लिए एक-दूसरे पर दोष नहीं थोपते। यद्यपि ऐसी समझ बहुत कम जोड़ियों में होती है। यदि ऐसी समझ है, तो वे बड़े भाग्यशाली हैं।

इस संग्रह की सभी कहानियाँ उद्देश्यपरक हैं। देशज शब्दों की बहुलता से कई कहानियों में ग्रामीण जीवन के चरित्र चलचित्र की तरह उभर कर आए हैं। ये सभी कहानियाँ हमारे समाज के यथार्थ चित्र उपस्थित करती हैं। यदि घर में आपसी तालमेल सही हो, सौहार्द हो, तो व्यक्ति बाहर की विकट-से विकट परिस्थितियों, चुनौतियों का सामना करने में सक्षम होता है। घर का टूटा हुआ व्यक्ति बाहरी हवा के हलके झोंके में भी बिखर जाता है।

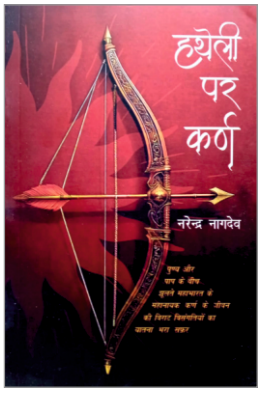

समीक्षक : **शशि सहगल**

लेखक : **नरेन्द्र नागदेव**

अनुवाद : **प्रभात सिंह**

प्रकाशक : राजपाल एंड संस प्रकाशन, कश्मीरी गेट, दिल्ली

पृष्ठ : 176

मूल्य : रु. 325/-

हथेली पर कर्ण

(उपन्यास)

महाभारत एक ऐसा पौराणिक महाकाव्य है, जिसने समय-समय पर अनेक रचनाकारों को कुछ न कुछ लिखने के लिए प्रेरित किया है और अनेक बार हमें चिर-परिचित प्रसंगों की नई-नई व्याख्याएँ मिली हैं। चाहे वह धर्मवीर भारती का नाटक 'अंधायुग' हो या नरेन्द्र कोहली का उपन्यास 'महासमर', एस. एल. भैरप्पा का उपन्यास 'पर्व' और शिवाजी सावंत का उपन्यास 'मृत्युंजय'। दिनकर की 'रश्मिरथी' भी इसी प्रसंग से जुड़ा हुआ एक खंडकाव्य है। अब इसी शृंखला को आगे बढ़ाते हुए नरेन्द्र नागदेव का नया उपन्यास आया है—'हथेली पर कर्ण'। उपन्यास का नाम सुनते ही मन एक अबूझ जिज्ञासा से भर उठता है कि 'हथेली पर कर्ण' यानी क्या? क्या हैं इसके निहितार्थ? कर्ण के जन्म और उसके जीवन की प्रमुख घटनाएँ सर्वविदित हैं। दुर्वासा ऋषि द्वारा दिये गए मंत्र से सूर्य देवता का आह्वान, कर्ण का जन्म, लोक-मर्यादा वश उसे अश्वा नदी में बहाना, धृतराष्ट्र के सूत द्वारा उसे उसकी पत्नी राधा को देना। इसी कारण कर्ण सूतपुत्र और राधेय कहलाए।

इस उपन्यास को रचने के पार्श्व में नरेन्द्र नागदेव का अभिप्रेत कर्ण के विरोधाभासी खंडित व्यक्तित्व के साथ-साथ उसे साधारण मानव के रूप में चित्रित करना भी है। बचपन से ही कर्ण को तथाकथित जन्म पर आधारित जातिगत भेदभाव का शिकार होना पड़ा। न्याय के नाम पर अन्याय होते देख उसके मन में उच्च-वर्ग के प्रति नकारात्मक ग्रंथि उत्तरोत्तर विकसित हो रही थी। कथाकार ने उसे अत्यंत संवेदनशील होकर जन्म और जाति के आधार पर सदा उपेक्षित होते वर्णित किया है। कर्ण बिना किसी अपराध के जीवन के प्रत्येक मोड़ पर अपमान और उपेक्षा पाता है, चाहे वह द्रोणाचार्य हों या परशुराम या द्रौपदी की स्वयंवर सभा। यहाँ तक कि जन्म से ही प्राप्त कवच-कुंडल भी दान में देकर मानो वह अपने मृत्यु-पत्र पर स्वयं ही हस्ताक्षर कर देता है। लेखक ने इस उपन्यास में सामाजिक एवं राजनीतिक सत्तारूढ़ अधिपतियों तथा भीष्म और द्रोणाचार्य जैसे गुरुओं और अन्य सज्जन पुरुषों की मानसिकता के बखिए उधेड़े हैं। कर्ण के जीवन पर आधारित अन्य कथाओं में केवल उसकी वीरता, दानवीरता और दुर्योधन की मित्रता के गुण गाए हैं, लेकिन नरेन्द्र नागदेव ने इन गुणों के साथ-साथ उसे एक 'खंडित व्यक्तित्व' कहलाकर मानव सुलभ दुर्बलताओं को उकेरा है। कोई भी व्यक्ति शुद्ध रूप से देवता या दानव नहीं होता। इस उपन्यास में कर्ण के चरित्र की दुर्बलताओं को बड़े सहज ढंग से शब्दों में बाँधा गया है। लेखक का कर्ण साधारण मानव की तरह पाप और पुण्य को बेधड़क जीता है।

आरंभिक जीवन में मिली उपेक्षा और तिरस्कार उसे पाप करने से रोकती नहीं, चाहे द्रौपदी को द्यूत-गृह में घसीटकर लाते हुए दुशासन का शर्मनाक दृश्य हो या लाक्षागृह के निर्माण की दुरभिसंधि में कर्ण की भूमिका आदि-आदि। मनोविज्ञान के अनुसार भी जीवन के शुरुआती दौर में बनी ग्रंथियाँ धीरे-धीरे विकसित होकर समय और अवसर और सत्ता के अधिकार को पाते ही अधिकार भावना से पुष्ट होकर स्वयं के लिए न्याय माँगती हैं। कर्ण के लिए विनाश का यह मार्ग पाप नहीं, पुण्य है। उसका ऐसा खंडित व्यक्तित्व उसके जीवन की नियति है। प्रतिशोध की भावना का सतत विकास कर्ण के चरित्र के उस रूप का निर्माण करता है, जिसे हम खंडित व्यक्तित्व या बहुआयामी चरित्र कह सकते हैं। लेकिन अगर कर्ण के चरित्र पर इतने लांछन हैं, तो युधिष्ठर और कृष्ण भी तो धर्म के मार्ग पर कहाँ टिके रहते हैं? युद्ध में वे भी अनुचित आचरण और छल-प्रपंच करते हैं। कर्ण की मृत्यु के संबंध में लेखकीय कल्पना या डिवाइसेस के रूप में जो देखा जा सकता है, वे हैं तीन श्राप—पहला, परशुराम द्वारा दिया गया श्राप, गाय के वध के लिए दिया गया ब्राह्मण का श्राप, तीसरा पृथ्वी माता का। युद्ध-क्षेत्र में तीनों फलित होते हैं। अंततः अर्जुन के तीर से बेधित कर्ण मृत्यु को प्राप्त होता है। शैल्पिक विन्यास ही जग-प्रसिद्ध कथा को नवीन कलेवर देकर प्रभावशाली बनाता है। नरेन्द्र नागदेव पेशे से एक कुशल और विख्यात वास्तुकार हैं। 'हथेली पर कर्ण' में जहाँ भी उन्हें महल, उद्यान आदि बनाने का अवसर मिला है, बड़ी खूबसूरती से उसका शब्द-चित्र खींचा है। स्वप्न माध्यम से भी महल की संरचना को आकार दिया गया है। लेकिन आश्चर्य तो इस बात का है कि कुरुक्षेत्र में युद्ध से पूर्व वे कौरवों और पाण्डवों की सेनाओं के लिए नियत स्थानों का आकलन करते हुए उसकी नाप-जोख इस प्रकार करते हैं कि वे सैनिकों, रथों, घोड़ों और हाथियों के लिए उचित स्थान का निर्धारण कर देते हैं।

जटिल विषय को सहज और स्पष्ट भाषा में प्रस्तुत करना किसी भी लेखक के लिए चुनौती होती है। शर्त यह भी है कि विषय की गंभीरता खंडित नहीं होनी चाहिए। नरेन्द्र नागदेव बेशक यहाँ कामयाब हुए हैं।

अंत में एक बात खटकती भी है कि जब कृष्ण ने कर्ण का अंतिम संस्कार अपनी हथेली पर किया तो इसे केवल एक अभिधा के रूप में लिखकर ही क्यों छोड़ दिया गया। इस प्रसंग में छिपी प्रतीकात्मता को भी खोलना आवश्यक था। फिर भी कहा जा सकता है कि 'हथेली पर कर्ण' एक सशक्त उपन्यास है।

समीक्षक : **श्याम सुशील**

कवि : **राजेन्द्र उपाध्याय**

प्रकाशक : अमरसत्य प्रकाशन (किताबघर प्रकाशन का उपक्रम), प्रीत विहार, दिल्ली

पृष्ठ : 70

मूल्य : रु. 150/-

झूले

(बाल कविताएँ)

» कई बार किताब बहुत छोटी होती है पर उसके शब्दों में जीवन बहुत बड़ा होता है। उस जीवन को पढ़ने और उससे जुड़ने में समय भी ज्यादा लग सकता है। क्योंकि उस छोटी-सी किताब के छोटे-छोटे शब्द हमें बचपन से बुढ़ापे के बीच 'झूले' की तरह झुलाते हुए जाने किन-किन यादों से जोड़ते चले जाते हैं।

याद कीजिए—आखिरी बार आपने कब रेल की खिड़की से पीछे भागते हुए बिजली के खंभों, हरे-भरे खेतों, पेड़-पौधों, नदी-नालों, पशु-पक्षियों को ललक कर निहारा था। पतंग उड़ाते, ढोर चराते, साइकिल चलाते लड़कों को और रात के आसमान में अपने साथ चलते चाँद और टिमटिमाते तारों को देखकर मुस्कुराए थे। इतना ही नहीं—कुछ भरे कुछ खाली घड़े, कुछ कुम्हार कुछ दर्जी कुछ बढ़ई, कुछ धोबी कुछ कपड़े सुखाते हुए... ये सब नजारे आप शहर की जिंदगी जीते हुए बिसार बैठे हों, तो कवि राजेन्द्र उपाध्याय की छोटी-सी किताब के 'झूले' में झूलते हुए मन की आँखों से देख और महसूस कर सकते हैं।

शहर के अपने कंक्रीट के घर में बैठे-बैठे इस संग्रह की कविताएँ आपको नाना के गाँव की ही नहीं, और भी बहुत कुछ याद दिलाएँगी—

माँ ने भेजे हैं अमरूद/ घर में अमरूदों की गंध है/
घर में बचपन का बाग है/ घर में ननिहाल का बसंत है।

इन अमरूदों की गंध में शामिल है माँ की भी गंध। ननिहाल से आई है मौसी। क्या-क्या लाई है मौसी, जरा सुनिए तो—नानी की कहानी, मीठी लोरी, मक्खन, आम, कैर, जामुन, नींबू, अमरूद और परियों की राजकुमारी की जादूगरनियों की कहानी—इन्हें सुनते-पढ़ते हुए आपको अपने बचपन की भूली-बिसरी कहानी याद आ जाए तो ताज्जुब नहीं।

कविताओं के 'झूले' में झूलते हुए आप कुछ ऐसे रंगों से मिलेंगे, जिन्हें देखते हुए आपका मन नहीं भरेगा, लेकिन सोचेंगे जरूर कि इन रंगों को हमारे जीवन में किसने भरा है, जो तेरा-मेरा नहीं, सबका है। नाना के जीवन का रंग हम 'नाना का कबाड़' कविता में देखते हैं। एक जीवन में कई-कई जीवन जीने वाले नाना एक साथ कितनी चीजें काम में लाते थे, उनके कबाड़ की चीजों को जानकर आप हैरान रह जाएँगे उनकी लिस्ट लंबी है।

इस संग्रह की कविताओं का आकाश बहुत बड़ा है। 'बच्चे के शिक्षक को पत्र' पढ़ते हुए अब्राहम लिंकन के उस पत्र की याद आती है, जो उन्होंने अपने बच्चे के शिक्षक को लिखा था। कवि चाहता है, उसे जीतना सिखाना पर हारने के सुख के बारे में भी बताना। कमाई की एक पाई बड़ी है, भीख में माँगे गए रुपये से। झूठ बोलकर जीतने से बेहतर है खेल हार जाना सच बोलकर। वे यह भी कहते हैं कि 'ये सब सीखने में उसे समय लगेगा। समय सिखाएगा उसे बहुत-सी चीजें, हम तुम, नहीं।' और भी बहुत-सी बातें हैं, इस लंबी कविता में, जो सोचने के लिए प्रेरित करती हैं।

ऐसी ही एक और लंबी कविता है 'हाथ हमारे', जो शुरू होती है 'वे हमारे हाथ हैं' से और हाथ के अनेक मुहावरों के साथ आगे बढ़ती हुई बताती है कि हाथों ने क्या-क्या किया है। कितनी चीजें जुड़ी हैं 'हाथ' से, कविता पढ़ते हुए आप दंग रह जाएँगे! ऐसे ही 'ताली' कविता में 'घर पहुँचकर याद आई/ नन्ही ताली की/ खूब बजाई ताली/ नहीं मिली ताली/ खुला नहीं ताला/ अब भूखे-प्यासे रहो बाहर/ रात भर/ और बजाओ ताली।' 'ठहरो, तनिक ठहरो' पढ़ते हुए आपको पता चलेगा कि 'जो पाया बड़े लोगों ने/ धीरज से पाया/ भागकर तो कईयों ने गँवाया/ बोलो, सुख कहाँ पाया?' 'मेरा चन्द्रमा' कविता में बेटा, माँ से कहता है—'कब तक तुम दिखती रहोगी/ केवल चाँद सूरज की छाया/ और कब तक तुम सिर्फ/ थाली में पानी ढार रिझाती रहोगी माँ/ क्यों नहीं तुम उठाती मुझे इतना/ कि मैं गगन के सारे तारे तोड़ लाऊँ/ और एक नहीं हजारों-हजारों चाँद और सूरज लेता आऊँ।' 'अमीर बच्चे गरीब बच्चे', 'जेबें', 'चवन्नियाँ', 'मसूरी', 'कोडाईकनाल में वर्षा', 'ऋतुएँ उसकी मुट्ठी में हैं' और 'रोज एक नया कमाल' आदि कविताओं की सुंदरता और कोमलता को देखते हुए एक सवाल मन में उभरता है कि 'कहाँ से मिलती है/ धरती को इतनी प्रेरणा/ जो रच देती है इतना नया/ रोज ब रोज!'

सहज चित्रों से सजी इस संग्रह की कविताओं को कवि ने 'बाल कविताएँ' कहा है। ये ऐसी 'कविताएँ' हैं, जो सबकी हैं। कविताओं के इस 'झूले' में, जो चाहे सो झूले—भाई झूले/ बहन झूले/ हिंदू झूले/ मुसलमान झूले।/ राजा झूले/ रंक झूले/ गोरे झूले/ काले झूले।/ साहब झूले/ नौकर झूले/ छोटे-बड़े सब झूले।

ऐसे 'झूले' खूब-खूब हों, कविता-कहानी में हों और हमारे जीवन में भी, जिसका आनंद सभी उठा सकें तो कितना अच्छा हो!

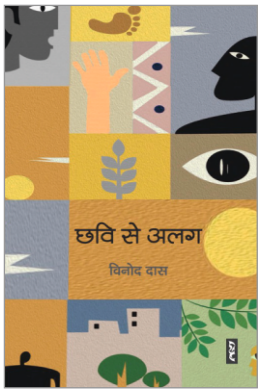

समीक्षक : **विज्ञान भूषण**

लेखक : **विनोद दास**

प्रकाशक : सेतु प्रकाशन, नोएडा, उत्तर प्रदेश

पृष्ठ : 198

मूल्य : रु. 295/-

छवि से अलग

हिंदी जगत के कई लेखक, अपनी रचनात्मक यात्रा और व्यक्तिगत जीवन से जुड़ी स्मृतियों को संजोते रहे हैं। ऐसी संस्मरणात्मक पुस्तकें साहित्यिक दस्तावेज की तरह प्रतिष्ठित होती हैं, क्योंकि इनके जरिये न केवल रचनाकार के अंतस को जानने, समझने का एक नया आयाम खुलता है, बल्कि उस व्यक्ति विशेष की भी अनावृत्त रही छवियाँ उजागर होती हैं, जिसके बारे में रचनाकार ने लिखा होता है। कुछ इसी तरह की अनुभूति हाल में छपकर आई विनोद दास के संस्मरणों की पुस्तक 'छवि से अलग' से गुजरते हुए होती है।

इस पुस्तक में जिन साहित्यकारों से जुड़ी स्मृतियों को लेखक ने सँजोया है, उनमें से कई हिंदी के शीर्षस्थ रचनाकार रहे हैं। लेकिन इनके बारे में लिखते हुए विनोद दास कहीं भी उनके साहित्यिक कद से प्रभावित नजर नहीं आते हैं और न ही उनकी गैरजरूरी आलोचना करते हैं। मिसाल के तौर पर हिंदी आलोचना के शिखर शख्सियत के रूप में प्रतिष्ठित नामवर सिंह से जुड़े संस्मरण 'आलोचक के सिरहाने कविता' में लेखक ने उनकी सहजता और सदाशयता से जुड़े कई प्रसंगों का वर्णन किया है। लेकिन उनके विचार और व्यवहार में मौजूद कुछ अनपेक्षित प्रतिक्रियाओं पर अपनी शिकायत दर्ज करने से भी वह नहीं चूकते हैं। वह लिखते हैं, 'नामवर जी से शिकायतें भी रही हैं। वह कभी-कभार कुछ ऐसा करते थे कि अनेक बार हम हतबुद्धि रह जाते थे। आरक्षण पर उनका नकारात्मक वक्तव्य, कि आरक्षण रहा तो ब्राह्मण, क्षत्रिय के लड़के भाड़ झोकेंगे, तो कभी किसी अधिकारी की किताब का विमोचन करते हुए उसे मुक्तिबोध के समकक्ष बताना, सरीखे ऐसे अनेक प्रसंग रहे हैं, जिनको लेकर हमारे जैसे उनके अनेक प्रशंसकों को गहरी निराशा भी होती रही है।'

श्रीलाल शुक्ल के संस्मरणात्मक लेख 'राग दरबारी के रंगनाथ' में भी लेखक ने श्रीलाल जी के व्यक्तित्व में मौजूद कई पहलुओं को सामने रखा है। वह लिखते हैं, 'श्रीलाल जी बतरसिया थे। उनके पास हमेशा किस्सों की अक्षय पोटली होती थी। श्रीलाल जी के सत्संग में मनहूसियत के लिए कोई जगह नहीं थी। वह खुशमिजाज थे। अपनी उपस्थिति से अपने आस-पास को भी खुशगवार बनाए रखते थे।' लेकिन उनसे जुड़े एक ऐसे प्रसंग का भी जिक्र लेखक ने किया है, जिसमें श्रीलाल जी के व्यक्तित्व का अनछुआ पहलू सामने आता है।

निर्मल वर्मा पर केंद्रित संस्मरण 'गद्य में कविता' में विनोद दास उनके लेखन ही नहीं उनके व्यक्तित्व की सादगी से भी प्रभावित नजर आते हैं। निर्मल जी के लेखकीय व्यक्तित्व के बारे में यह स्वीकार करने से नहीं हिचकते, 'उनके विचारों से असहमत होने के बावजूद, उनके चेहरे पर जो लेखकीय आभा झलकती थी, उसका मैं शैदाई था।'

कुंवर नारायण पर लिखे गए संस्मरण में विनोद दास उनके बहुआयामी व्यक्तित्व के तमाम पक्षों पर रोशनी डालने के साथ उनके व्यक्तिगत जीवन के उस पहलू की भी विस्तार से चर्चा करते हैं, जिसमें कुंवर नारायण एक ऐसे पति के रूप में नजर आते हैं, जो अपनी पत्नी भारती जी का भरपूर सम्मान करते हैं। केदारनाथ सिंह के व्यक्तित्व में उपस्थित सहजता की सुगंध को बहुत सरल तरीके से विनोद दास ने उन पर लिखे संस्मरण 'याद आते हैं छीमी में रस की तरह' में व्यक्त किया है। अरुण कमल पर लिखे संस्मरण 'पटना में कवि' में लेखक ने अरुण कमल के व्यक्तित्व में समाए कवि मन की बहुत सी कोमल छवियाँ उकेरी हैं।

'एक सतत विद्रोही' शीर्षक संस्मरण में विनोद दास ने 'मुद्राराक्षस' के बारे में भी कई अनसुनी बातें उजागर की हैं। अखिलेश पर लिखे अपने संस्मरण 'कथाकार संपादक का अक्स' में विनोद ने अखिलेश के स्वभाव और उनके लेखन की विशिष्टताओं को रेखांकित करने के लिए कई प्रसंगों का जिक्र किया है।

यहाँ ऐसे प्रसंग भी पढ़े जा सकते हैं, जिसमें अरुण कमल की लेखकीय प्रतिबद्धता सिद्ध होती है। वीरेंद्र यादव से जुड़े संस्मरण 'आडंबरहीन गंभीर चेहरा' में विनोद लिखते हैं कि वीरेंद्र अपने बेबाक आलोचनाकर्म को लेकर पूरी तरह प्रतिबद्ध और स्पष्ट रहते हैं। यही वजह है कि वे विनोद कुमार शुक्ल, मनोहर श्याम जोशी और निर्मल वर्मा सरीखे प्रतिष्ठित साहित्यकारों को भी सराह नहीं पाते हैं।

लोकप्रिय कथाकार गौरा पंत शिवानी पर केंद्रित संस्मरण में विनोद, कुछ साहित्यकारों द्वारा उनकी महत्ता को न समझे जाने की उनकी शिकायत दर्ज करते हैं, लेकिन स्वयं अपनी सोच को भी प्रश्नांकित करने से नहीं चूकते हैं। इनके अलावा विजय कुमार, रघुवीर सहाय, अशोक सेकसरिया पर भी विनोद दास ने मार्मिक संस्मरण लिखे हैं। हालाँकि इन 14 साहित्यकारों के साथ, पूर्व प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी से जुड़े संस्मरण को पुस्तक में स्थान देना, पुस्तक के एकांगी साहित्यिक स्वरूप में अवरोध उत्पन्न करता-सा नजर आता है।

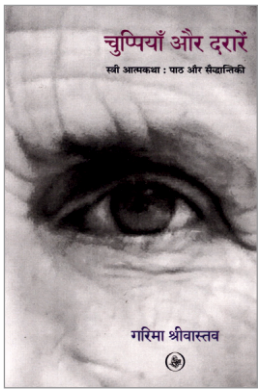

समीक्षक : **ज्योत्सना कुमारी**

लेखिका : **गरिमा श्रीवास्तव**

प्रकाशक : राजकमल प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली

पृष्ठ : 510

मूल्य : रु. 599/-

चुप्पियाँ और दरारें

स्त्री आत्मकथा : पाठ और सैद्धांतिकी

स्त्रियों के अनुभव और उनके द्वारा इन अनुभवों का प्रस्तुतीकरण, पुरुषों द्वारा अपने जीवन और संघर्षों को अभिव्यक्त करने के तरीके से काफी अलग होता है। लेखिकाएँ समाज और उसकी विविध संरचनाओं के बारे में काफी अलग तरीके से विचार करती हैं, और इनकी कृतियों को पढ़ने से समाज के बारे में एक नवीन और भिन्न अंतर्दृष्टि मिलती है। सुप्रसिद्ध आलोचक गरिमा श्रीवास्तव की पुस्तक 'चुप्पियाँ और दरारें, स्त्री आत्मकथा : पाठ और सैद्धांतिकी' में स्त्रियों द्वारा लिखी गयी आत्मकथाओं के बारे में गहन और विशद आलोचनात्मक आलेख सम्मिलित किये गए हैं। लेखिका ने विविध भाषाओं में स्त्रियों द्वारा लिखी गई आत्मकथाओं की विवेचना के माध्यम से उनके जीवन अनुभवों के भिन्न-भिन्न रूपों और रंगों को पाठकों के सामने रखने का प्रयास किया है।

यह पूरी पुस्तक नौ अध्यायों में विभाजित है। इन अध्यायों में आत्मकथा की सैद्धांतिकी के साथ-साथ बांग्ला, तेलुगु, मलयालम, कन्नड़ जैसी भाषाओं में प्रकाशित स्त्रियों की आत्मकथाओं का विश्लेषण किया गया है। इसके अतिरिक्त, पुस्तक में दलित स्त्री आत्मकथा तथा मुसलमान स्त्री आत्मकथा के बारे में भी अध्ययन है। पुस्तक के आखिरी अध्याय में ब्लैक स्त्री आत्मकथा का आलोचनात्मक मूल्यांकन भी किया गया है। इस पुस्तक में संकलित शोध आलेख लेखिका द्वारा इस पुस्तक की कल्पना करने के पश्चात नहीं लिखे गए। असल में, लेखिका स्त्रियों द्वारा लिखी गई आत्मकथाओं के बारे में पिछले बारह वर्षों से गहन और व्यवस्थित अध्ययन करती रही हैं। समय-समय पर उन्होंने इन आत्मकथाओं के बारे में 'प्रतिमान', 'तद्भव', 'स्त्रीकाल', 'समालोचन', 'बहुवचन' और 'आलोचना' जैसे स्तरीय जर्नल्स में आलेख प्रकाशित किए। वर्तमान पुस्तक इन्हीं आलेखों का संकलन है। चूँकि इन सभी आलेखों का साझा विषय स्त्री आत्मकथा है, इसलिए यह पुस्तक अलग-अलग समय में प्रकाशित आलेखों के संकलन होने के बजाय एक सुगठित पुस्तक होने का अहसास देती है।

लेखिका का यह मानना है कि स्त्री आत्मकथाओं पर विचार करते हुए जाति, वर्ग, वर्ण, जेंडर तथा संप्रदाय जैसी श्रेणियों पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए। ये सभी निकष या श्रेणियाँ आपस में गुँथी हुई हैं, यानी प्रतिच्छेदी अवस्था में मौजूद हैं। इसका अर्थ यह है कि यदि हम एक स्त्री की आत्मकथा पढ़ते हैं, तो इसे सिर्फ स्त्री की भावनाओं और स्त्री के रूप में जीवन संघर्षों के दस्तावेज के रूप में नहीं देखा जाना चाहिए। दरअसल, हर स्त्री एक वर्ग, एक जाति या एक संप्रदाय से भी संबद्ध होती है। इसलिए उसके वर्णन में सिर्फ स्त्री के रूप में उसके अनुभव ही सामने नहीं आते हैं, बल्कि इन विविध श्रेणियों से उसके जुड़ाव के कारण उत्पन्न होने वाले जीवन अनुभव भी उसकी अपनी कहानी का हिस्सा होते हैं। इस तरह की प्रतिच्छेदी यथार्थ को समझकर ही स्त्री आत्मकथाओं के विविध आयामों की समझ बनाई जा सकती है। यह अवश्य है कि स्त्री आत्मकथा में स्त्री के रूप में जीवन अनुभवों के साथ-साथ किसी एक श्रेणी की प्रधानता हो। इसी आधार पर किसी स्त्री आत्मकथा को दलित स्त्री आत्मकथा, ब्लैक स्त्री आत्मकथा आदि श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है। गरिमा श्रीवास्तव इस बात जोर देती हैं कि स्त्री के आत्मकथ्य का विश्लेषण उसके समाज, समुदाय, पीड़ा, चोट, लिंग भेद के अनुभवों की मनो-सामाजिकी और भाषा भंगिमाओं को सामने लाने में मदद करता है। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि लेखिका ने स्त्री लेखिकाओं की चुप्पियों, मितकथन और कथन के दरारों को विखंडित कर उनका विश्लेषण सामने लाने का प्रयास किया है। लेखिका ने पुरुषों के आत्मकथ्य की भाषा और स्त्रियों के आत्मकथ्य की भाषा में अंतर को भी रेखांकित किया है। उनके अनुसार, पुरुषों के आत्मकथ्यों में भाषा का ज्यादा प्रभावी रूप दिखाई देता है। जहाँ पुरुष भाषा फेलोसेंट्रिक है, वहीं स्त्री रचनाकारों में अपने अन्या होने का अहसास निरंतर उपस्थित रहता है, जिससे उनकी भाषा कोमल होती है। उसमें कहीं-कहीं घरेलू बातचीत और रोजमर्रा प्रतीक और बिंब समन्वित होते हैं। गरिमा श्रीवास्तव यह मानती हैं कि ज्यादातर महिलाएँ अभिधात्मक तरीके से आत्माभिव्यक्ति करना पसंद करती हैं।

गरिमा श्रीवास्तव की यह पुस्तक कई मायनों में अनूठी है। यह हिंदी साहित्य और आलोचना के दायरे का विस्तार करती है तथा उसे ज्यादा समृद्ध बनाती है। उनके द्वारा हिंदी से इतर अन्य भाषाओं की स्त्री आत्मकथाओं का गहन शोधपरक अध्ययन करने से हिंदी के भीतर मौजूद जेंडर विमर्श ज्यादा समृद्ध हुआ है। यह हिंदी साहित्य में अन्य भाषाओं, विशेषकर भारतीय भाषाओं के लेखन को सम्मिलित करती है। इस तरह, यह पुस्तक हिंदी पाठकों को अन्य भाषाओं की साहित्यिक दुनिया से भी परिचित कराती है। यह पुस्तक समाज विज्ञान के विद्यार्थियों के लिए भी उपयोगी है, खास तौर पर, इसके आरंभिक दो अध्यायों में प्रतिरोध की संस्कृति और आत्मकथा सैद्धांतिकी के बारे में गहन चर्चा मिलती है। स्त्री अध्ययन, आत्मकथा अध्ययन, साहित्य, समाज विज्ञान आदि के विद्यार्थियों और अन्य सामान्य पाठकों को यह पुस्तक जरूर पढ़नी चाहिए।

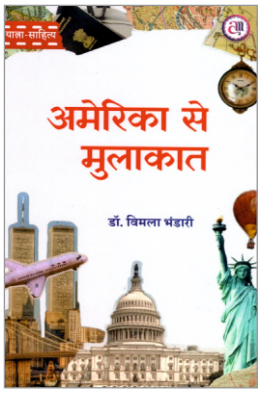

अमेरिका से मुलाकात

समीक्षक : **डॉ. पूर्णिमा शुक्ला**

लेखिका : **डॉ. विमला भंडारी**

प्रकाशक : अद्रिक पब्लिकेशन, पटपड़गंज, दिल्ली

पृष्ठ : 184

मूल्य : रु. 280/-

साहित्य अकादेमी पुरस्कार से सम्मानित डॉ. विमला भंडारी द्वारा लिखी पुस्तक 'अमेरिका से मुलाकात', एक यात्रा वृत्तांत है। बाल साहित्य, कहानी एवं यात्रा वृत्तांत के क्षेत्र में डॉ. भंडारी की विशेष उपलब्धि है। 'लंदन से रोम', 'सौराष्ट्र में सोमनाथ' और 'अध्यात्म का वह दिन' शीर्षक से आपके यात्रा-वृत्तांत प्रकाशित हैं। 'अध्यात्म का वह दिन' राष्ट्रीय स्तर पर पुरस्कृत है। 'अमेरिका से मुलाकात' एक ऐसा यात्रा संस्मरण है, जिसमें डॉ. भंडारी ने अपने प्रवासी बेटे के घर अमेरिका की सात वर्षों में दो बार की गई यात्राओं एवं उनके शानदार अनुभवों का वर्णन है। इस पुस्तक को तीन भागों में विभाजित किया गया है। इसके प्रथम भाग में 14 जून से 27 जुलाई, 2023 के डॉ. भंडारी के प्रवास के दौरान की यात्राओं का वर्णन 20 अध्यायों में किया गया है। द्वितीय भाग में अमेरिका प्रवास 14 जून से 28 जून, 2016 के दौरान यात्राओं और परिवार के साथ बिताये गए समय और अनुभवों को लिपिबद्ध किया गया है। इस भाग में 11 अध्याय हैं। तृतीय भाग में 'स्मृतियों की क्षणिकाएँ' शीर्षक से 12 अध्याय प्रस्तुत किये गए हैं।

डॉ. भंडारी द्वारा लिखित यह पुस्तक पाठकों के लिए एक विशिष्ट यात्रा-संग्रह है, जिस पर एक धारावाहिक भी बना है। जो लोग अमेरिका में प्रवास करना चाहते हैं, जो अमेरिका की यात्रा करना चाहते हैं या फिर जो लोग अमेरिका की यात्रा करने की आकांक्षा रखते हैं, किंतु जा नहीं सकते, उन सभी के लिए यह पुस्तक उपयोगी हो सकती है। इस पुस्तक को पढ़कर पाठकों को अमेरिका और इसकी संस्कृति व सभ्यता के बारे में जीवंत जानकारी प्राप्त होगी। साथ ही, उन्हें भी लगेगा कि उन्होंने अमेरिका की यात्रा कर ली।

पुस्तक के प्रथम भाग, 'अमेरिका से मुलाकात' में लेखिका ने बताया है कि अमेरिका न केवल एक भौगोलिक स्थल है, बल्कि एक सांस्कृतिक और ऐतिहासिक चेतना का स्वरूप है। 'सोलन में प्रवास', इस यात्रा वृत्तांत ने पाठकों को एक ऐसे शहर से परिचित कराया, जो रहने की दृष्टि से सर्वश्रेष्ठ शहरों की सूची में से एक है। यह शहर उच्च गुणवत्ता वाले जीवन, उत्कृट शिक्षा और सांस्कृतिक गतिविधियों के लिए प्रसिद्ध है। इसे ऑनलाइन व्यापार समुदाय वाले शहर के रूप में मान्यता देते हुए 'गूगल ई-सिटी' पुरस्कार भी प्राप्त है। इस शहर में विभिन्न धर्म को मानने वाले कई समुदाय के लोग रहते हैं। लेखिका ने आगे बताया कि अमेरिका में हिंदी भाषा की स्वीकार्यता प्रवासी भारतीयों के महत्व को दर्शाती है।

द्वितीय भाग में 'अमेरिका प्रवास 14 जून से 28 जून, 2016' में 11 अध्यायों में अमेरिका के महत्वपूर्ण परिदृश्य को प्रस्तुत किया गया है। इस खंड में डॉ. भंडारी ने परमा उपनगर की खासियत को उजागर किया है, जैसे—जीवन शैली की गुणवत्ता, स्कूल, अस्पताल, पार्क, शॉपिंग मॉल की दृष्टि से बहुत ही उत्कृष्ट नगर है। 'अमेरिका का दिल' नाम के अध्याय में वॉशिंगटन डीसी की यात्रा का विस्तृत वर्णन करते हुए वहाँ के भ्रमण अनुभव ऐतिहासिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक महत्व, स्मारकों एवं स्थलों का जीवंत चित्रण किया है। यह शहर अमेरिका की लोकतांत्रिक प्रणाली का जीवंत उदाहरण है। इस शहर में अमेरिका की संसद, अब्राहम लिंकन को समर्पित स्मारक, वास्तुकला इत्यादि देखने लायक हैं। आगे लेखिका ने लिखा है कि नासा स्थित, कैनेडी स्पेस सेंटर देखने के लिए उन्होंने 4 अगस्त, 2016 का दिन चुना और वहाँ से आरलैंडों के लिए क्लीवेलैंड से हवाई उड़ान भरी। यहाँ पर उन्होंने कैनेडी स्पेस में अंतरिक्ष शटल देखा। स्पेस स्टेशन की प्रदर्शनी, रॉकेट गार्डन, हीरोज एंड ली जैड्स हाल ऑफ फेम, मंगल रोवर प्रोटोटाइप प्रदर्शनी को देखने के रोमांच को पाठकों के साथ साझा किया है। आगे लेखिका यूनिवर्सल स्टूडियो की सैर में बारे में बताती है। यहाँ पर अलग-अलग तीन थीम पार्क हैं, जिसमें यूनिवर्सल स्टूडियो सबसे पहला बड़ा और मूल पार्क है, जिसमें हॉलीवुड की अवधारणा पर एक वास्तविक फिल्म सेट बनाया गया है। आगे लेखिका स्टैच्यू ऑफ लिबर्टी और न्यूयॉर्क सिटी की यात्रा का वर्णन बहुत ही सुंदर और रोमांचक तरीके से करती हैं।

स्टैच्यू ऑफ लिबर्टी स्वतंत्रता का प्रतीक है और यह फ्रांस द्वारा अमेरिका को उपहार में दी गई थी। स्टैच्यू ऑफ लिबर्टी का पूरा नाम 'लिबर्टी एनलाइटिंग द वर्ड' है। वर्ड ट्रेड सेंटर, जो 2011 में हुए आतंकी हमले में नष्ट हो गया था, उसका स्मारक न्यूयॉर्क स्टॉक एक्सचेंज और ब्रुकलिंग ब्रिज के बारे में बताता है कि स्टॉक एक्सचेंज दुनिया का सबसे बड़ा शेयर बाजार है और ब्रुकलिंग ब्रिज अमेरिका का सबसे पुराना सस्पेंशन ब्रिज है।

कुल मिलाकर, यह यात्रा वृत्तांत, पाठकों को अमेरिका की यात्रा का आनंद प्रदान करने हेतु एक उपयुक्त पुस्तक है। लेखिका ने जैसा देखा, महसूस किया, ठीक वैसा ही बिना किसी भेदभाव के, बिना किसी प्रजातिकेंद्रियता के इस पुस्तक में अमेरिका का वर्णन किया है। यह पुस्तक अमेरिका को जानने के लिए पढ़ी जानी चाहिए।

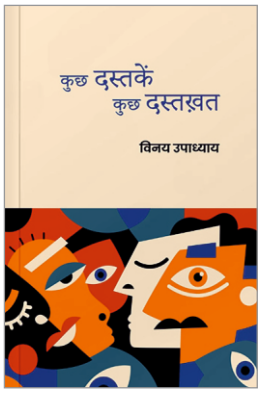

समीक्षक : **पंकज शुक्ला**

लेखक : **विनय उपाध्याय**

प्रकाशक : आईसेक्ट पब्लिकेशन, भोपाल, मध्य प्रदेश

पृष्ठ : 216

मूल्य : रु. 350/-

कुछ दस्तकें, कुछ दस्तख़त

हमारे समाज के संस्कार और मेधा उसकी अपनी सामूहिक और व्यक्तिगत स्मृति और वाचिकता के संग निखार और उत्कृष्टता पाते हैं। व्यक्तिगत चेतना ही अन्ततः सामूहिक चेतना का निर्माण करती है। यह कुछ ऐसा है, जैसे– गुरु-शिष्य परंपरा, जिसमें गुरु अपने जीवन भर की साधना का निष्कर्ष किसी सूत्र वाक्य में अपने शिष्यों को सौंप देता है। इसके लिए शिष्यों को लंबी ज्ञान साधना नहीं करनी पड़ती है। किताबें भी कुछ ऐसा ही माध्यम हैं। लेखक भी पुस्तक की रचना प्रक्रिया से गुजरता सृजन की पीड़ा स्वयं भोगता है और पाठकों के लिए एक निराली दुनिया रच देता है। लेखक एक ही समय में एक ऐसा टेलीस्कोप और माइक्रोस्कोप साबित होता है, जो पाठकों को दूर का आकाश और निकट का संसार एक साथ दिखलाता है। ऐसा सर्जक जो खुद तप कर अपने अनुभवों से पाठकों को अज्ञात दुनिया से रूबरू करवाता है। साहित्य की अन्य विधाएँ तो यह काम करती ही हैं, लेकिन इस भूमिका पर कोई विधा उपयुक्त सिद्ध होती है, तो वह विधा है संस्मरण।

ऐसी ही एक पुस्तक है– 'कुछ दस्तकें, कुछ दस्तख़त', जिसके लेखक हैं, जाने-माने उद्घोषक, कला-समीक्षक और सर्जक विनय उपाध्याय। उन्होंने इस पुस्तक में अपने जीवनानुभव के जखीरे से कुछ मोती पेश किए हैं। ये संस्मरणों के 50 मोती हैं। एक ऐसी सरस यात्रा, जो हमें कला मनीषियों के कृतित्व और व्यक्तित्व के जाने, अनजाने पहलुओं से रू-ब-रू करवाती है। बल्कि वह इन साधकों की कला साधना, इस तप के कष्ट और निरंतरता के संघर्ष का परिचय भी देती है।

इस पुस्तक की भूमिका लिखने वाले कवि-साहित्यकार प्रेमशंकर शुक्ल कहते हैं–"विनय उपाध्याय हमारे सांस्कृतिक जगत के जिम्मेदार नागरिक हैं। लिखना-बोलना उनकी आवश्यक दिनचर्या है। वे या तो लिख रहे होते हैं या सभा गोष्ठी में बोल रहे होते हैं। यही उनका परिचय है। लिखने-बोलने की परस्परता में वे सिद्धहस्त और सिद्धकण्ठ के अद्वैत में हैं। लिखने-बोलने के क्रम में ही ये लेखांश बनते रहे हैं, जो रोचक होने के साथ ही ज्ञानवर्धक और प्रेरक भी हैं। जब आप इन्हें पढ़ते हैं तो लगता है हम सुन्दर सुन रहे हैं और चुन कर रखे गए में हमारी ही आकांक्षा साकार हो रही है। लिखते-बोलते विनय उपाध्याय ने पुस्तक रच दी। ऐसी पुस्तक, जो हमारे समय के विचारजगत से और सांस्कृतिक संसार से हमारा साक्षात्कार तो कराती ही है, बेहतर बनने की या बन सकने की शुभनिश्चयी लालसा भी भरती है। यह भी कि इससे हम अपने समय से अभिप्रेत होते हैं और समय में अपने होने का जायजा भी पाते हैं।"

इस पुस्तक की खूबसूरती यह है कि इसमें लेखक एक सूत्रधार की भूमिका में है। विनय जी अपने अनुभवों को व्यक्त करते हैं, लेकिन ऐसा करते हुए वे अपनी धारणा या दृष्टिकोण थोपते हुए नहीं चलते हैं। इन रूपकों का केंद्र वह व्यक्ति और उसका जीवन है, जिनके संग के अनुभव को उकेरा गया है। इन मनीषियों की संगत के अनुभवों को बताने में भी विविधता का ध्यान रखा गया है। संगीत, साहित्य, लोकसंगीत, रंगमंच, सिनेमा, छायाचित्र, चित्रकला आदि कला अनुशासनों की सर्जकों के जीवन रस, संघर्ष और तप को समझने का भाव इस पुस्तक का वह हेतु है, जो पाठकों को अंत तक जोड़े रखता है। पुस्तक की भाषा पर बात करें, तो भाषा का संस्कार और लालित्य विनय जी की पहचान है और इस पुस्तक में उनकी भाषा सरस रूप से संस्मरणों को रुचिकर बनाती चलती है।

गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर, पंडित जसराज, पंडित रविशंकर, गिरिजा देवी, एम.एस. सुब्बुलक्ष्मी, उस्ताद ज़ाकिर हुसैन, लता मंगेशकर, वसुंधरा कोमकली, बेगम परवीन सुल्ताना, तीजन बाई, हृदयनाथ मंगेशकर, पंडित राजन मिश्र, हरिहरन, कौशिकी चक्रवर्ती, मालिनी अवस्थी, गुलवर्धन, सैयद रज़ा, सचिदा नागदेव, गुरु शंकर होम्बल, ओमप्रकश चौरसिया, सुरेश तांतेड़, राजेन्द्र शर्मा, शेखर सेन, आलोक चटर्जी, अमृतलाल वेगड़, उषा गांगुली, अनिल चौबे, संजू जैन, शरद जैन, मनोहर काजल आदि के बारे में पढ़ना किसे नहीं सुहाएगा और अगर इनके बारे में ऐसे व्यक्ति ने लिखा है, जो अपने कहे और लिखे के कारण जाना जाता है, तो लिखे गए संस्मरण स्वतः उपयोगी हो जाते हैं। उन्होंने हमें ऐसे अनुभवों से युक्त किया है, जिन लम्हों को जीना सामान्य इंसान के लिए कल्पना से आगे की बात है। दूसरे शब्दों में कहूँ तो विनय जी ने किताब प्रकाशित करवाने के उद्देश्य से ये संस्मरण नहीं लिखे, बल्कि स्मरणों ने अपनी उपस्थिति दर्ज करवाने के लिए पुस्तक का आकार चुना है। अपने समय के सर्जकों को इतने निकट से जानने-समझने के लिए यह पुस्तक उपयोगी होगी।

समीक्षक : **डॉ. रमेश तिवारी**

लेखक : **संजय पुरोहित**

प्रकाशक : कलासन प्रकाशन, बीकानेर, राजस्थान-334001

पृष्ठ : 96

मूल्य : रु. 200/-

अहं सर्वस्वम् !

(व्यंग्य-संग्रह)

युवा रचनाकार संजय पुरोहित का यह पहला व्यंग्य संग्रह प्रकाशित हुआ है। आत्ममुग्धता के इस दौर में जब हर व्यक्ति स्वयं को ही सर्वेसर्वा सिद्ध करने की जुगतबाजी में व्यस्त है, इस संग्रह का प्रकाशन एक महत्त्वपूर्ण प्रयास है। व्यंग्य रचनाओं से पूर्व, लेखक ने व्यंग्य के संबंध में अपनी समझ को 'मेरी बात' शीर्षक से पाठकों के समक्ष रखने की कोशिश की है, "व्यंग्य एक ऐसी विधा है, जिसमें व्यंग्यकार अपनी धारदार लेखनी से अव्यवस्थाओं, अनियमितताओं, विद्रूपताओं, पाखंड, दोगलेपन पर प्रहार करता है। व्यंग्य गंभीर चिंतन के विषयों के मंथन की माँग करता है। ये मनुष्य को सोचने को विवश करता है।" लेखक की समझ स्पष्ट है कि व्यंग्य का काम हमारे जीवन व्यवहार में व्याप्त विद्रूपताओं की पहचान करते हुए उन पर सुधार की दृष्टि से प्रहार करना है। लेखक के इन विचारों और दृष्टिकोण से यह समझा जा सकता है कि व्यंग्य-लेखन का जनसरोकारों से गहरा रिश्ता होता है।

इस संग्रह में मनुष्य की चापलूसी की प्रवृत्ति पर प्रहार करती एक मारक रचना है 'अपने-अपने तोते'। इस रचना के द्वारा लेखक ने हमारे समाज में व्याप्त चापलूसी की प्रवृत्ति पर व्यंग्य करते हुए लिखा है, 'तोते किसे पसंद नहीं होते। हरे, भगवा और लाल तोते। ...तोते हर देश, काल, परिस्थिति में हाईपावर के करीब रहे।...राजा-रानियाँ सलट गए तो लोकतांत्रिक राजाओं ने कुर्सियाँ सँभालीं। तोतों ने इस परिवर्तन के साथ ही नई दुनिया के साथ अपने आपको ढालते हुए परिस्थितिजन्य निर्णय लेते हुए सत्ता की कुर्सी के हत्थे पर जमने का हुनर सीखा। दुनिया बदलती रही, लेकिन तोते सत्ता की कुर्सी के पास ही फुदकते रहे।' तोतों के बहाने लेखक ने इस रचना में चापलूसी की प्रवृत्ति को बेपर्दा करने का काम किया है। कभी इस देश की सीबीआई को सर्वोच्च न्यायालय ने 'सरकार के पिंजरे में बंद तोता' कहकर उसकी कार्यप्रणाली की आलोचना की थी। लेखक इसे याद दिलाता है, 'तोता माहात्म्य बड़ा है। इसका अंदाजा इसी बात से लगाया जा सकता है कि सत्ता के विरोधियों को सलटाने वाली चमचेड़नुमा एजेंसी वाले मोटे बाबू कहते हैं कि 'हम तो जी तोते हैं'।' इस उदाहरण से स्पष्ट है कि चापलूसी या जी-हुजूरी करना अब शर्मिंदगी का नहीं, बल्कि ढिठाई का विषय हो गया है। लेखक इसी विसंगति पर चोट करना चाहता है। यह विकृति मनुष्य की एक बहुत बड़ी कमजोरी के रूप में उभर चुकी है, जो स्थानीय से लेकर अंतरराष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में हर तरफ देखी जा सकती है।

लेखक के इस दृष्टिकोण की सराहना करनी होगी कि उसने स्थानीय से लेकर अंतरराष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में चापलूसी की विसंगति को देखा और उस पर इस रचना के द्वारा प्रहार करने की कोशिश की। लेखक का जनसरोकार उल्लिखित व्यंग्य में द्रष्टव्य है।

'काले झंडे' शीर्षक रचना में झंडों के बहाने काले झंडे के दुरुपयोग की प्रवृत्ति पर प्रहार किया गया है, 'कई मिश्रित झंडे भी मार्केट में हैं। पीले, नीले, हरे और सफेद। ये झंडे इसलिए बने कि पार्टी बनी है, तो झंडा भी होना चाहिए। बाकी ना तो हरे से भगवों को कोई लेना-देना है, ना लाल को नीले से।' इन झंडों में एक झंडा ऐसा है, जो किसी पार्टी विशेष से अधिक अभिव्यक्ति के लिए उपयोग किया जाता है। और इस झंडे का रंग होता है काला। हम सब जानते हैं कि काला झंडा असहमति का प्रतीक होता है। लेखक इस काले झंडे की महिमा को स्पष्ट करते हुए लिखता है, 'झंडों की इस रंगीन दुनिया में एक झंडा ऐसा है, जिसे कोई पसंद नहीं करता। लेकिन ये ही झंडा सबसे ज्यादा हिट है। हिट क्या है, बल्कि सुपरहिट है। वो है काला झंडा। ...काले झंडे का खौफ इतना ज्यादा होता है कि पुलिस को 'एंटी काला झंडा स्क्वाड' गठित कर स्पेशल ट्रेनिंग देने की नौबत आ जाती है।'

यानी एक तरफ विरोध के प्रतीक काले झंडे का राजनीतिक नफा-नुकसान की दृष्टि से इस्तेमाल और दूसरी तरफ काला झंडा से बचने के लिए सत्तासीनों द्वारा पुलिसिया दुरुपयोग, दोनों ही स्वस्थ लोकतांत्रिक व्यवस्था के लिए हानिकारक हैं। यही कारण है कि आज के समय में काला झंडा भी इस विकृति का शिकार हो गया है। लेखक इस पूरे परिदृश्य पर नजर रखते हुए न सिर्फ इस विसंगति की समग्रता में पहचान करता है, बल्कि उसे अपनी रचना का केंद्रीय विषय बनाकर इस पर प्रहार भी करता है।

निस्संदेह, इस संग्रह की अधिकांश रचनाओं में जीवन के विविध क्षेत्रों में व्याप्त विसंगतियों को पहचान कर उन पर प्रहार किया गया है। लेखक ने इसमें सहज और सरल भाषा का प्रयोग किया है, जिससे यह व्यंग्य-संग्रह पठनीय बन पड़ा है। उम्मीद है, यह संग्रह पाठकों द्वारा पढ़ा और सराहा जाएगा।

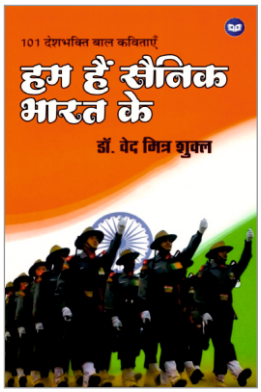

समीक्षक : **रवि शंकर सिंह**

लेखक : **डॉ. वेद मित्र शुक्ल**

प्रकाशक : सर्व भाषा पब्लिकेशन दिल्ली व हेल्पफाउंडेशन, बहराइच

पृष्ठ : 144

मूल्य : रु. 395/-

हम हैं सैनिक भारत के

वेद मित्र शुक्ल बच्चों के लिए साहित्य-निर्माण में सतत सक्रिय हैं, जिन्होंने बाल-मानस को ध्यान में रखकर निरंतर ऐसे विषयों पर रचना की है, जो उन्हें शिक्षित भी करें और प्रेरित भी। 'हम हैं सैनिक भारत के' उनका चौथा बाल कविता-संग्रह है, जो विषय-वस्तु, प्रस्तुति और भावाभिव्यक्ति के स्तर पर अत्यंत महत्वपूर्ण सिद्ध होता है। इससे पहले 'बापू से सीखें' (2018), 'कहावतों की कविताएँ' (2019) और 'जनजातीय गौरव' (2022) जैसे संग्रहों के माध्यम से वे बाल साहित्य के क्षेत्र में अपनी विशिष्ट पहचान स्थापित कर चुके हैं। विशेषकर 'जनजातीय गौरव' में जनजातीय योद्धाओं के जीवन को बाल-स्तर की सहज भाषा में प्रस्तुत करना उनका बड़ा योगदान रहा है।

प्रस्तुत संग्रह 'हम हैं सैनिक भारत के' का कथ्य भारतीय सैन्य परंपरा, राष्ट्रप्रेम और आदर्श नायकों के जीवन-चरित पर आधारित है। इस संग्रह में लेखक ने राष्ट्रीय पर्वों, विशिष्ट युद्धों तथा स्काउट-गाइड और एनसीसी जैसे विषयों को अत्यंत सरल, लयात्मक और प्रेरणादायी शैली में व्यक्त किया है। साथ ही, भारतीय सेना, नौसेना और वायुसेना पर लिखी कविताएँ विशेषरूप से उल्लेखनीय हैं। थलसेना के त्याग और समर्पण को दर्शाती पंक्तियाँ हों या नौसेना दिवस और वायुसेना दिवस पर रचित गीत, सभी कविताएँ राष्ट्रगौरव की भावना को प्रभावी ढंग से व्यक्त करती हैं। भारतीय सेना की विश्व-स्तरीय प्रतिष्ठा और सागर सुरक्षा में नौसेना की भूमिका को भी कवि ने सहज भाषा में रूपायित किया है। यह संग्रह बच्चों में सैन्य बलों के प्रति सम्मान और राष्ट्रभक्ति की भावना जगाने का सशक्त माध्यम है।

संग्रह में मेजर धन सिंह थापा, मेजर शैतान सिंह, कैप्टन विक्रम बत्रा जैसे वीरों की शौर्यगाथाएँ बाल-मन को ध्यान में रखकर प्रस्तुत की गई हैं। उदाहरण के तौर पर मेजर धन सिंह थापा पर लिखी पंक्तियाँ, 'अंतिम दम तक हार न मानी' न केवल उनके शौर्य से परिचय कराती हैं, बल्कि बच्चों के लिए प्रेरणा का स्रोत भी बन जाती हैं। इसी प्रकार मेजर शैतान सिंह की अदम्य वीरता को सरल शब्दों में इस प्रकार व्यक्त किया गया है कि बच्चे सहज ही समझ सकें कि कुछ ही सैनिकों के साथ हजारों दुश्मनों का सामना करने की साहसगाथा कितनी महान थी। कैप्टन विक्रम बत्रा को 'शेर-ए-कारगिल' के रूप में चित्रित करती कविताएँ भी अत्यंत प्रभावी हैं। लेखक ने कारगिल युद्ध, 'विजय अभियान' और कठिन चोटियों पर विजय के प्रसंग को बच्चों की समझ के अनुरूप और रोचक ढंग से प्रस्तुत किया है।

डॉ. वेद ने इस संग्रह में केवल आधुनिक सैनिक नायकों को ही नहीं, बल्कि स्वतंत्रता आंदोलन के प्रख्यात योद्धाओं—मंगल पाण्डे, चापेकर बंधु, खुदीराम बोस, रामप्रसाद बिस्मिल, चंद्रशेखर आजाद, सुभाषचंद्र बोस और वीर सावरकर को भी सम्मिलित किया है। इससे पुस्तक का दायरा व्यापक हो जाता है और बच्चों को अपने इतिहास के महत्वपूर्ण अध्यायों से परिचित होने का अवसर मिलता है। इसकी शैली ऐसी है कि कविता गीतात्मकता के साथ-साथ जानकारी का संप्रेषण भी करती है।

पुस्तक में प्रयाण गीत प्रमुख आकर्षण हैं। बाल कविताओं में प्रयाण गीत प्रेरणा, उत्साह और देशभक्ति की भावना जगाने के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण माने जाते हैं। 'हाथ में हैं लिए तिरंगा...' जैसी पंक्तियाँ बच्चों में आगे बढ़ने और लक्ष्य-केंद्रित होने की भावना विकसित करती हैं। भाषा सरल है, लय स्वाभाविक है और उद्देश्य—देशभक्ति का संस्कार।

श्रेयस नामक पात्र के माध्यम से प्रस्तुत कविताएँ इस संग्रह की विशेष उपलब्धि कही जा सकती हैं। श्रेयस के माध्यम से लेखक ने बच्चों की जिज्ञासा, उत्साह और सपनों को भाषा की सहजता और सौंदर्य के साथ व्यक्त किया है। 'गर्व हुआ श्रेयस भैया को...' जैसी पंक्तियाँ बाल-स्वभाव की चंचलता और देशप्रेम दोनों को एक साथ प्रस्तुत करती हैं।

भाषा के स्तर पर शुक्ल जी का यह संग्रह अत्यंत सार्थक है। बच्चों की समझ, रुचि और भाषा क्षमता—इन तीनों को ध्यान में रखकर शब्दों का चयन किया गया है। कठिन या दुरूह शब्दों से बचते हुए सहज और सरस भाषा ने इन कविताओं को प्रभावी और पठनीय बनाया है। यह पुस्तक विशेष रूप से 10 वर्ष से अधिक उम्र के बच्चों के लिए उपयुक्त प्रतीत होती है।

समग्रता में 'हम हैं सैनिक भारत के' एक ऐसा श्रेष्ठ बाल कविता-संग्रह है, जो बच्चों में न केवल राष्ट्रप्रेम उत्पन्न करता है, बल्कि उन्हें इतिहास, संस्कृति और आदर्श वीरों से परिचित भी कराता है। डॉ. वेद मित्र शुक्ल बाल साहित्य के उन विरल कवियों में हैं, जो शिक्षाप्रद, प्रेरक और मूल्यपरक साहित्य रचने में निरंतर सक्रिय हैं। उनकी यह पुस्तक बच्चों को उत्तम नागरिक बनाने में निश्चित ही सहायक सिद्ध होगी।

समीक्षक : **उमेश कुमार सिंह**

लेखक : **डॉ. राकेश कुमार आर्य**

प्रकाशक : डायमंड पॉकेट बुक्स प्रा.लि., ओखला इंडस्ट्रियल एरिया, नई दिल्ली

पृष्ठ : 178

मूल्य : रु. 200/-

भारतीय इतिहास के गौरव छत्रपति संभाजी महाराज

'भारतीय इतिहास के गौरव : छत्रपति संभाजी महाराज' डॉ. राकेश कुमार आर्य द्वारा रचित पुस्तक महत्वपूर्ण ऐतिहासिक कृति है, जो भारतीय इतिहास में छत्रपति संभाजी महाराज के अद्वितीय व्यक्तित्व और उनके योगदान को उजागर करती है। यह पुस्तक न केवल इतिहास प्रेमियों के लिए, बल्कि युवा पीढ़ी के लिए भी प्रेरणा का स्रोत है, क्योंकि इसमें शिवाजी महाराज के पुत्र और मराठा साम्राज्य के द्वितीय छत्रपति संभाजी महाराज के जीवन के अनछुए पहलुओं को बड़ी संजीदगी और गहराई के साथ प्रस्तुत किया गया है।

डॉ. राकेश कुमार आर्य ने अपने इतिहास लेखन में विशेष दृष्टिकोण अपनाया है। वे अपने इतिहासनायकों के उन अद्वितीय पहलुओं को सामने लाते हैं, जिन्हें सामान्य प्रचलित इतिहास ने अनदेखा किया है। डॉ. आर्य के अनुसार, संभाजी महाराज केवल एक योद्धा नहीं थे, बल्कि एक दूरदर्शी नेता भी थे।

पुस्तक का प्रारंभ संभाजी महाराज के पिता छत्रपति शिवाजी महाराज से होता है और उनके 'हिंदवी स्वराज्य' की विचारधारा को विस्तारपूर्वक समझाया गया है। इसके बाद संभाजी महाराज के बचपन, शिक्षा, विवाह और उनके प्रारंभिक जीवन की घटनाओं का उल्लेख है, जो उनके चरित्र और नेतृत्व क्षमता को उभारते हैं। इसके अतिरिक्त, पुस्तक में उनके साहित्यिक पक्ष, प्रशासनिक दृष्टिकोण और प्रजाहितकारी कार्यों को भी दर्शाया गया है। संभाजी महाराज न केवल युद्धकला में प्रवीण थे, बल्कि एक लेखक और विचारक के रूप में भी उभरकर सामने आए।

पुस्तक में 'छावा' फिल्म और इसके निर्माण का भी उल्लेख किया गया है, जिसमें संभाजी महाराज की भूमिका विक्की कौशल ने निभाई है। इस फिल्म ने संभाजी महाराज के व्यक्तित्व को नया स्वरूप दिया है और युवाओं में उनके प्रति सम्मान और गौरव की भावना पैदा की है। लेखक के अनुसार, इस प्रकार की फिल्में हमारे अतीत के गौरवशाली पहलुओं से युवाओं को परिचित कराने में महत्वपूर्ण योगदान देती हैं। माता जीजाबाई की प्रेरणा और मार्गदर्शन ने शिवाजी महाराज और संभाजी महाराज दोनों को राष्ट्रवाद और वीरता के मार्ग पर अग्रसर किया।

पुस्तक में संभाजी महाराज के युद्ध, उनके बलिदान और धार्मिक आस्थाओं का विशेष उल्लेख किया गया है। विशेष रूप से उनके बुरहानपुर में कैद होने और औरंगजेब द्वारा किये गए अत्याचारों के दौरान उनका साहस और मातृभूमि के प्रति समर्पण अत्यंत प्रेरणादायक है। उन्होंने मृत्यु को भी मातृभूमि की सेवा और धर्म की रक्षा के लिए स्वीकार किया। यह उनके दृढ़ निश्चय और त्याग की अनूठी मिसाल है।

संभाजी महाराज के प्रशासनिक कौशल, मुगलों और पुर्तगालियों के साथ उनके संघर्ष, ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी से संबंध, मराठा-मैसूर संबंध और 'भारत बचाओ अभियान' का उल्लेख भी पुस्तक में किया गया है। इन अध्यायों में उनके दूरदर्शी दृष्टिकोण और राष्ट्रहित के लिए किये गए प्रयासों को विस्तारपूर्वक प्रस्तुत किया गया है। कवि कलश और अन्य साथियों के बलिदान का वर्णन इस बात की पुष्टि करता है कि संभाजी महाराज केवल एक योद्धा नहीं थे, बल्कि उनके नेतृत्व में कई वीर सपूतों ने भी मातृभूमि की रक्षा के लिए अपने प्राणों की आहुति दी।

पुस्तक के लेखक ने यह भी स्पष्ट किया है कि भारतीय इतिहास के साथ अन्याय हुआ है। हमारे वीर और धर्मयोद्धाओं के बलिदानों को भुला दिया गया और सनातन संस्कृति की रक्षा करने वालों को उचित सम्मान नहीं मिला। इस संदर्भ में डॉ. आर्य ने पुस्तक के माध्यम से इसे सही करने का प्रयास किया है। वे चाहते हैं कि हमारी युवा पीढ़ी अपने अतीत की गौरवशाली घटनाओं से प्रेरणा लेकर अपने राष्ट्र और संस्कृति के प्रति गर्व महसूस करे। पुस्तक में छत्रपति संभाजी महाराज के वंश परंपरा, उनके उत्तराधिकारी और भारतीय इतिहास में उनके योगदान का भी विस्तार से उल्लेख है। लेखक ने संभाजी महाराज को न केवल एक वीर योद्धा, बल्कि एक जीवंत और प्रेरणादायक इतिहास पात्र के रूप में भी प्रस्तुत किया है। उनके कृतित्व और परिश्रम को स्मारक के रूप में संरक्षित करने का आग्रह लेखक ने विशेष रूप से किया है।

अंततः, 'भारतीय इतिहास के गौरव : छत्रपति संभाजी महाराज' पुस्तक युवाओं और इतिहास प्रेमियों के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण कृति है। यह पुस्तक न केवल एक ऐतिहासिक दस्तावेज है, बल्कि यह प्रेरणा, साहस और देशभक्ति की मिसाल भी प्रस्तुत करती है। डॉ. राकेश कुमार आर्य ने संभाजी महाराज के व्यक्तित्व और उनके कृतित्व के उस पक्ष को उजागर किया है, जो सामान्य इतिहास में छिपा रह गया था। पुस्तक का उद्देश्य केवल इतिहास को प्रस्तुत करना नहीं है, बल्कि इसे वर्तमान और भविष्य की पीढ़ियों के लिए जीवंत बनाना है, ताकि वे अपने वीर इतिहास से प्रेरणा लेकर राष्ट्र की सेवा में योगदान दे सकें।

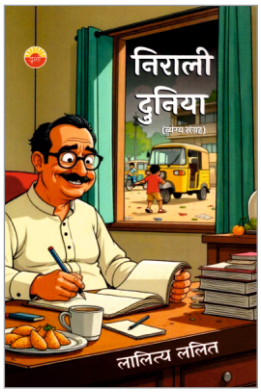

समीक्षक : **सत्येन्द्र प्रकाश**

लेखक : **लालित्य ललित**

प्रकाशक : दृशी प्रकाशन, सिद्धार्थ नगर, जयपुर, राजस्थान

पृष्ठ : 126

मूल्य : रु. 250/-

निराली दुनिया
(व्यंग्य-संग्रह)

» जो किताब मेरे सामने है, उसका शीर्षक है—'निराली दुनिया'। दरअसल, व्यंग्य विधा को जिन सोलह शृंगारों से सजाया गया है, उनमें दुनिया कहीं अलग से निर्मित नहीं की गई है। वह कोई वायवी दुनिया नहीं है, बल्कि उसी सामान्य दुनिया—जिसमें हम-आप भी किसी-न-किसी किरदार में खिसियाते, खिखियाते या फिर खौखियाते मिल जाते हैं—के निरालेपन को पकड़-पिरोकर ही यह 'निराली दुनिया' पेश की है, अपनी तरह के इस निराले व्यंग्यकार ने। इस दुनिया के सर्जक हैं कवि/ व्यंग्यकार लालित्य ललित।

मूलतः एक संवेदनशील, सरल, कवि लालित्य ललित के शब्द दिल को छूते हैं, झकझोरते हैं, तो व्यंग्य कुरेदते हैं, चुभते हैं और गुदगुदाते हैं। यों व्यंग्य उनकी कविताओं में भी दिखता है, पर वह थोड़ा महीन किस्म का होता है। वहाँ वे बड़ी मासूमियत से विसंगतियों को उभारकर एक कचोट पैदा करते हैं। संवाद की चुटीली शैली में प्रस्तुत ललित जी के व्यंग्य मुखर होकर बोलते हैं, बिना लाग-लपेट के, बेधड़क। पर, इस बेधड़की और रोचकता की रफ्तार में व्यंग्यकार कहीं-कहीं अपने किसी पात्र को अचानक पिछले स्टेशन पर ही छोड़कर आगे बढ़ जाता है, और कहानी में बँधा हुआ पाठक भी। यकायक पता चलता है कि अरे, लेखक की उँगली पकड़े यह बच्चा (पात्र) तो कोई और है। पहले वाला कहीं पीछे भावों के भागते मेले में भटक गया है। जैसे कि, पुस्तक के पहले व्यंग्य 'पांडेय जी की किताबें और उनका लोकार्पण' कुछ यों शुरू होता है, 'पांडेय जी एक आम आदमी हैं। बड़ा घर है। बाप-दादा के जमाने का बना हुआ घर। बीस कमरे हैं। सबसे ऊपर के फ्लोर पर (खुद) रहते हैं।' उसके बाद की पंक्ति देखें, 'नीचे के बीस कमरे किराए पर चढ़ा रखे हैं।' इससे पाठक को साफ संकेत मिलता है कि पांडेय जी के घर के ऊपरी फ्लोर को छोड़कर नीचे ही कुल बीस कमरे हैं, जिन्हें वे किराए पर देते हैं। जबकि शुरू की पंक्तियों के मुताबिक, मकान में कुल बीस ही कमरे हैं। इसी तरह दगड़ू पान वाले से पांडेय जी की बातचीत में इस बात पर बारीक व्यंग्य भी है कि पांडेय जैसे लोग दगड़ू जैसों को एक कप चाय पिलाने में कैसे उसकी गरीबी का मजाक उड़ाते हैं। पर, आगे टेक्स्ट में दगड़ू का पूरी तरह से गायब हो जाना, कुछ अजीब लगता है, जबकि पांडेय जी चिंगपोकली शर्मा को फोन लगाने से पहले उसी से बात कर रहे थे। उसकी उपस्थिति ही अप्रासंगिक हो जाती है।

दरअसल, यह मगन-मन हरफनमौला लेखक की लेखन शैली का ही कमाल है। उसमें इतना प्रवाह है कि लेखक के साथ उसके सम्मोहन में पाठक भी भागता चलता है। लालित्य की इस दुनिया से गुजरते हुए यह लगता है कि उनके विषय आस-पास की रोजमर्रा की जिंदगी से उठाये गए, बिलकुल टटके होते हैं, लेकिन इस बात का वे ध्यान रखते हैं कि उन पर घोर सामयिक होने का ठप्पा न लगने पाये, बल्कि वास्तविक हों और समकालीन साहित्य के रूप में इतिहास और भावी पीढ़ी के दिलोदिमाग में जगह बनाएँ। इसकी पुष्टि के लिए आज के सर्वाधिक चर्चित/ स्थापित बड़े व्यंग्यकारों में से एक और अपनी 'व्यंग्य यात्रा' से व्यंग्य विधा को परवान चढ़ाने वाले प्रेम जनमेजय की पारखी नजर की यह टिप्पणी, 'वे (लालित्य) सामयिक विषय उठाते हैं, पर सामयिकता की सीमा में बँधते नहीं हैं। वे एक सजग रचनाकार हैं और आस-पास पर उनकी गिद्धदृष्टि रहती है।' यह गिद्धदृष्टि काल, परिवेश, सिचुएशन से ज्यादा पात्रों के चयन और खासतौर से उनके नामकरण में देखी जा सकती है।

'निराली दुनिया' के 16 स्टेशनों पर ठहरने वाली व्यंग्य एक्सप्रेस पर सवार सतर्क यात्री (पाठक) को, जो किरदार अपनी भूमिका के अलावा अपने नामों से आकर्षित करते और गुदगुदाते हैं, उनमें प्रमुख हैं—विलायतीराम पांडेय (जिनके बिना कोई व्यंग्य नहीं), साहित्यकार चिंगपोकली शर्मा, राधेलाल (टाइप लोग), लल्लू भैया, टिकू तलसानिया, लपकु (लपकू) राम, भैरो बाबा, राम प्यारी, असंतुष्ट कुमार, गैंदामल कलसी, चुप्पी प्रसाद भट्ट, बहुधंधी बाबू (अमेरिका के 'अजनबी दोस्त' को पांडे जी का नंबर देने वाले), अंतर्मन कुमार, मास्टर चिंगपोली मखीजा, रॉकेट सिंह दुहाजू , पल्टू , छोटूराम बंजारा, बिरजू भईया, देविका गजोधर (कॉमेडियन राजू श्रीवास्तव की याद दिलाती) इत्यादि। इन नामों के सामने आते ही पाठक चर्चित मुहावरे 'नाम में क्या रखा है' वाली सोच के विपरीत मन-ही-मन कह उठता है, "वाह क्या नाम रखा है!" जबकि थोड़ा सतर्क होकर देखें, तो किरदारों तक पहुँचने से पहले व्यंग्य के शीर्षक ही आपके होठों को एक इंच फैला देते हैं। 'पांडेय जी का स्थानीय टाइप का वैश्विक नजरिया', 'पांडेय जी और प्रेमिकाओं से भरी बस', 'पांडेय जी (और) महाकवि का दूर वाला नजरिया', 'पांडेय जी और एसियार का भूत'—जैसे उनवान पढ़ते ही पाठक में कौतूहल जगने लगता है। इन व्यंग्यों में एक और खास बात यह है कि व्यंग्यकार विशिष्टता और विद्वता के प्रदर्शन से खुद को दूर रखता है। वह अपनी बात कहने के लिए भारी-भरकम शब्दों/ वाक्यों की बजाय आम बोलचाल के शब्दों का प्रयोग और सरल-सहज वाक्यों से अपना ताना-बाना ऐसा बुनते हैं कि उनके व्यंग्य का सीधा असर पाठक के मन पर पड़ता है, बल्कि यह कहना ज्यादा सटीक होगा कि उन्हें बाँधे रहता है। अब अंत में, इस 'निराली दुनिया' के निरालेपन का आनंद तो तभी मिलेगा जब आप दृशी प्रकाशन, जयपुर से यह व्यंग्य-संग्रह मँगाने और उनमें आए प्रसंगों में डूबने की जहमत मोल लेंगे।

भारतीय सैन्य इतिहास : शौर्य एवं प्रज्ञा को समर्पित रहा नई दिल्ली विश्व पुस्तक मेला 2026

उद्घाटन

"विश्व पुस्तक मेला केवल पुस्तकों का प्रदर्शन नहीं है, बल्कि यह ज्ञान, विचार, संवाद और लोकतांत्रिक मूल्यों का सशक्त मंच है। ...पुस्तकें समाज को दिशा देने का कार्य करती हैं और विचारों के आदान-प्रदान के माध्यम से एक जागरूक नागरिक-चेतना का निर्माण करती हैं।" नई दिल्ली विश्व पुस्तक मेला 2026 का उद्घाटन करते हुए माननीय केंद्रीय शिक्षा मंत्री श्री धर्मेंद्र प्रधान ने उक्त विचार व्यक्त किए। 'भारतीय सैन्य इतिहास : शौर्य एवं प्रज्ञा@75' इस वर्ष की मेले की थीम रखी गई थी। इस संदर्भ में राष्ट्र-निर्माण में शौर्य और प्रज्ञा के मूल्यों की भूमिका को रेखांकित करते हुए सरदार वल्लभभाई पटेल के विचारों का स्मरण भी किया गया। श्री प्रधान ने आगे कहा कि एक सशक्त राष्ट्र के निर्माण के लिए केवल भौतिक संसाधन ही नहीं, बल्कि नैतिक साहस और बौद्धिक चेतना भी आवश्यक है। उन्होंने साहित्य को सामाजिक चेतना का प्रत्यक्ष और जीवंत प्रतिबिंब बताते हुए कहा कि यह पुस्तक मेला ज्ञान, संवाद और रचनात्मकता का मार्ग प्रशस्त करेगा।

शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार के तत्वावधान में राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत द्वारा पुस्तकों के महाकुंभ के रूप में प्रतिष्ठित नई दिल्ली विश्व पुस्तक मेला 2026 का 10 जनवरी, 2026 को नई दिल्ली के भारत मंडपम में भव्य उद्घाटन हुआ। आईटीपीओ इस पुस्तक मेला का सह-आयोजक था। इस पुस्तक मेले का उद्घाटन संयुक्त रूप से केंद्रीय शिक्षा मंत्री श्री धर्मेंद्र प्रधान, स्पेन के संस्कृति मंत्री श्री अर्नेस्त उर्तासुन डोमेनेक तथा कतर के संस्कृति मंत्री शेख अब्दुलरहमान बिन हमद बिन जासिम अल थानी द्वारा किया गया। इसके पश्चात्, नई दिल्ली विश्व पुस्तक मेला 2026 के संबंध में एक वीडियो प्रस्तुति दिखायी गई।

उद्घाटन समारोह में भारत स्थित कतर के राजदूत महामहिम हसन जबीर अल-जबीर सहित स्पेन के संस्कृति मंत्रालय में पुस्तक, कॉमिक्स तथा पठन की महानिदेशक सुश्री मारिया होजे गॉल्वेज तथा भारत के शिक्षा मंत्रालय के सचिव श्री विनीत जोशी, आईटीपीओ के महानिदेशक श्री नीरज खरवाल एवं आईटीपीओ के कार्यकारी निदेशक श्री प्रेमजित लाल की गरिमामयी उपस्थिति रही। राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत के अध्यक्ष प्रो. मिलिंद सुधाकर मराठे और निदेशक श्री युवराज मलिक ने गणमान्य अतिथियों को पुस्तक, प्रतीक चिह्न भेंट देकर स्वागत किया।

श्री प्रधान ने स्पेन और कतर से आए विदेशी अतिथियों का हार्दिक स्वागत करते हुए कहा कि शिक्षा और संस्कृति के क्षेत्र में सांस्कृतिक आदान-प्रदान देशों के बीच आपसी समझ और सहयोग को सुदृढ़ करता है। उन्होंने इसे वैश्विक ज्ञान परंपरा के विस्तार के लिए अत्यंत उपयोगी बताते हुए विदेशी प्रतिनिधिमंडलों के प्रति आभार व्यक्त किया और कहा कि साहित्य सीमाओं से परे जाकर मानवता को जोड़ने का कार्य करता है।

पठन-संस्कृति को बढ़ावा देने में राष्ट्रीय पुस्तक न्यास के पचास वर्षों से अधिक के योगदान की सराहना करते हुए केंद्रीय मंत्री ने कहा कि ज्ञान, संवाद और रचनात्मकता जैसे तत्व एक सशक्त, जागरूक और संवेदनशील समाज की आधारशिला हैं। उन्होंने कहा कि एनबीटी ने पुस्तकों को जन-जन तक पहुँचाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है और देश में पठन-संस्कृति को मजबूत किया है।

उद्घाटन-अवसर पर, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास के अध्यक्ष प्रो. मिलिंद सुधाकर मराठे ने स्वागत संबोधन दिया। उन्होंने कहा कि विश्व पुस्तक मेले की शुरुआत वर्ष 1972 में हुई थी और वर्ष 2012 के बाद से इसे प्रतिवर्ष आयोजित किया जाने लगा। उन्होंने विश्व पुस्तक मेला की अनूठी पहल 'फेस्टिवल ऑफ फेस्टिवल्स' के बारे में बताते हुए कहा कि यह ऐसा मंच है, जहाँ विभिन्न पुस्तक महोत्सव एक साथ प्रस्तुत किए जाते हैं। अपने संबोधन में उन्होंने एक बेहद प्रचलित कथन को उद्धृत करते हुए कहा कि "अच्छी पुस्तकें और अच्छे लोग तुरंत समझ में नहीं आते, उन्हें समझने के लिए उन्हें पढ़ना पड़ता है।" इसके साथ ही उन्होंने देश की तीनों सेनाओं की सराहना करते हुए उनके योगदान को नमन किया।

कतर के संस्कृति मंत्री शेख अब्दुलरहमान बिन हमद बिन जासिम अल थानी ने मेले में सम्मानित अतिथि देश के रूप में भाग लेने पर प्रसन्नता व्यक्त की। उन्होंने कहा कि ज्ञान को राष्ट्रीय सुरक्षा का पहला निर्माण-खंड माना जाना चाहिए। उन्होंने कहा कि पुस्तकें मनुष्य की सबसे अच्छी मित्र होती हैं। उनके अनुसार, साहित्य समाज को स्थायित्व और दिशा प्रदान करता है।

स्पेन के संस्कृति मंत्री ने अपने संबोधन में कहा कि लोगों का भविष्य पुस्तकों पर निर्भर करता है। उन्होंने बताया कि स्पेन ने इस विश्व पुस्तक मेले का प्रचार वैश्विक स्तर पर किया है और कहा कि "किताबें वह बोलती हैं, जो

कोई और नहीं बोल सकता।" उन्होंने पुस्तक मेले के इस संस्करण के सफल आयोजन के लिए आयोजकों को बधाई दी और साहित्य के माध्यम से भारत-स्पेन के सांस्कृतिक संबंधों के और सुदृढ़ होने की आशा जताई।

उद्घाटन समारोह में 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम से जुड़े वीरतापूर्ण घटनाक्रम को दर्शाने वाली राष्ट्रीय पुस्तक न्यास की पुस्तक 'द सागा ऑफ कुदोपली' का लोकार्पण भी किया गया। यह पुस्तक स्पेनिश सहित भारत की विभिन्न भाषाओं में उपलब्ध करायी गई है। इस अवसर पर पुस्तक की घटनाओं के संबंध में एक वीडियो प्रस्तुति भी की गई। उद्घाटन समारोह का एक मुख्य आकर्षण प्रधानमंत्री युवा मेंटरशिप योजना 3.0 के विजेता प्रतिभागियों की सभागार में उपस्थिति थी।

विश्व पुस्तक मेला 2026 के उद्घाटन समारोह के अवसर पर अतिथियों का धन्यवाद-ज्ञापन न्यास के निदेशक श्री युवराज मलिक द्वारा किया गया। उन्होंने केंद्रीय शिक्षा मंत्री श्री धर्मेंद्र प्रधान, विदेशी अतिथियों, विशिष्ट वक्ताओं, प्रकाशकों, लेखकों तथा देश-विदेश से पधारे प्रतिनिधियों के प्रति हार्दिक आभार व्यक्त किया। उन्होंने कहा कि सभी गणमान्य अतिथियों की गरिमामयी उपस्थिति से उद्घाटन समारोह अत्यंत प्रेरक और सार्थक बन गया है। साथ ही उन्होंने आयोजन को सफल बनाने में सहयोग देने वाले सभी संस्थानों, कर्मचारियों और सहभागियों का धन्यवाद करते हुए आशा व्यक्त की कि यह विश्व पुस्तक मेला पाठकों, लेखकों और प्रकाशन जगत के लिए यादगार सिद्ध होगा। इस समारोह का संचालन केतकी नायक ने किया।

थीम मंडप

नई दिल्ली विश्व पुस्तक मेले 2026 की थीम 'भारतीय सैन्य इतिहास : शौर्य एवं प्रज्ञा @75' थी और इसे थीम मंडप में जिस खूबसूरती से सजाया गया, वह अविस्मरणीय थी। 'थीम मंडप' इस बार सिर्फ एक प्रदर्शनी नहीं, बल्कि भावनाओं का एक तीर्थ बन गया था। थीम मंडप में थीम आधारित अनेक सत्र आयोजित हुए।

इंडियन नेवी द्वारा आयोजित 'पैनल डिस्कशन ऑन इंडियन नेवी इन 1971 इंडो-पाक वार' में कमांडर विजय प्रकाश कपिल (से.नि.), कमांडर नीरज वशिष्ठ और 'इंडिया टुडे' के कार्यकारी संपादक संदीप उन्नीथन के बीच, 1971 के ऑपरेशन-ट्राइडेंट, ऑपरेशन-पायथन और कुछ गुप्त ऑपरेशनों के बारे में बातचीत हुई।

पुस्तक लोकार्पण सत्र में नौसेना प्रमुख एडमिरल दिनेश के. त्रिपाठी, पीवीएसएम, एवीएसएम, एनएम ने युवा पाठकों को, जिन्हें उन्होंने प्यार से 'किंडल पीढ़ी' कहा, नई दिल्ली विश्व पुस्तक मेले में उमड़ते और उत्सुकता से किताबें खरीदते देखकर प्रसन्नता व्यक्त की। उन्होंने कहा, "सभी पाठक नेता नहीं हो सकते, लेकिन सभी नेता निश्चित रूप से पाठक होते हैं।" इस अवसर पर भारतीय नौसेना पर लिखी गई पुस्तकों, 'फोर्ज्ड बाई द सी : द इंडियन नेवी स्टोरी' और 'इकोज़ ऑफ करेज' का भी लोकार्पण किया गया। मुख्य नौसेना प्रमुख को सम्मानित करते हुए, एनबीटी के निदेशक श्री युवराज मलिक ने एनबीटी को सहयोग देने के लिए भारतीय नौसेना का आभार व्यक्त किया। उन्होंने कहा कि सहयोग करने का यह एक बेहतरीन अवसर था, क्योंकि मेले का विषय 'भारतीय सैन्य इतिहास : शौर्य और ज्ञान@75' है। ऐसे में इन कृतियों को प्रकाशित करने का इससे बेहतर मौका और कोई नहीं हो सकता था।

'पीएम-युवा 3.0 के लेखकों के साथ उपेन्द्र राय की बातचीत' कार्यक्रम में भारत एक्सप्रेस मीडिया समूह के निदेशक और मुख्य संपादक उपेन्द्र राय द्वारा, पीएम युवा 3.0 के तहत चयनित युवा लेखकों से लेखन को लेकर बातचीत हुई। इस कार्यक्रम में मुख्य वक्ता के रूप में आमंत्रित उपेन्द्र राय ने महाभारत, रामायण, भारतीय इतिहास और दर्शन के विभिन्न किस्सों को श्रोताओं से साझा किया।

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास द्वारा महिला भौतिकविज्ञानी और मौसम वैज्ञानिक अन्ना मणि के जीवन पर आधारित बायोग्राफी 'अन्ना मणि : द अनकट डायमंड' (लेखिका डॉ. आशा गोपीनाथन, न्यूरो वैज्ञानिक) की पुस्तक का गोपाल अयंगर, साइंटिस्ट 'जी' (से.नि.) ने लोकार्पण किया। कार्यक्रम में राष्ट्रीय पुस्तक न्यास के अध्यक्ष प्रो. मिलिंद सुधाकर मराठे, वरिष्ठ वैज्ञानिक डॉ. रमन अयंगर, विज्ञान क्षेत्र से ही जुड़ी डॉ. इंदिरा रानी तथा अर्पिता रस्तोगी मौजूद रहीं। लोकार्पण के बाद दो युवाओं को भी यह पुस्तक भेंट की गई, जो मौसम विज्ञान क्षेत्र से ही जुड़े हुए थे। आशा गोपीनाथ ने अन्ना मणि के जीवन के बारे में बताते हुए उनके जीवन को महिला सशक्तीकरण से जोड़ा।

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास द्वारा आयोजित कार्यक्रम में राष्ट्रीय पुस्तक न्यास द्वारा प्रकाशित चैतन्यानंद के. प्रसाद, ज़ोया और वैष्णवी की पुस्तक 'व्हेन ब्रांडिंग मेट द मूवीज' का लोकार्पण किया गया। यह लोकार्पण न्यास के अध्यक्ष प्रो. मिलिंद सुधाकर मराठे और निदेशक श्री युवराज मलिक, शिक्षा मंत्रालय के सचिव श्री विनीत जोशी, अजय नागभूषण, सी. सविल राजन, धीरज सिंह, प्रकाश मगदुम, अंशुल चतुर्वेदी, नीला माधव पंडा, उत्पल बोरपुजारी के सान्निध्य में संपन्न हुआ।

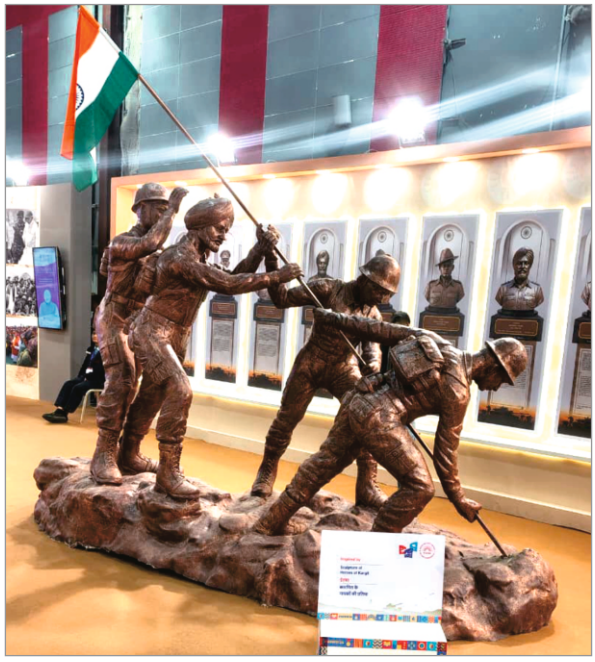

पेंटागन प्रेस द्वारा जनरल सैम मानेकशॉ और जनरल सगत सिंह पर एक परिचर्चा आयोजित की गई, जिसमें लेफ्टिनेंट जनरल अता हसनैन ने सैम मानेकशॉ और सगत सिंह के साथ अपनी पहली मुलाकात के बारे में बताया। इस परिचर्चा में यह भी बताया गया कि 1962 में चीन से मिली हार के बाद सेना का मनोबल टूट-सा गया था। ऐसे वक्त में सैम और सगत की जोड़ी ने सेना में नई ऊर्जा का संचार किया।

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास ने 'पंजाब की सैन्य संस्कृति' विषय पर पंजाबी भाषा में एक पैनल चर्चा कार्यक्रम का आयोजन किया, जो भारत की विविधता को राष्ट्रीय स्तर पर दिखाने का प्रतीक है और पंजाबी संस्कृति से जनता को जोड़ने का प्रयास है। पैनल चर्चा में डॉ. संदीप कुमार ने पंजाब को मात्र एक भू-भाग नहीं, बल्कि संस्कृति और पहचान से जोड़कर बताया।

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास द्वारा आयोजित कार्यक्रम में कवि अपूर्व वर्मा के कविता-संग्रह 'ज़मीं का कर्ज' का लोकार्पण किया गया। इस आयोजन में मुख्य

अतिथि प्रो. वसीम बरेलवी उपस्थित रहे, जबकि विशिष्ट अतिथियों के रूप में श्री फारूख अर्गली और श्री नीतीश भारद्वाज ने कार्यक्रम की शोभा बढ़ाई। राष्ट्रीय पुस्तक न्यास के निदेशक श्री युवराज मलिक ने अतिथियों का पुस्तकें भेंट कर स्वागत किया।

इंडियन नेवी द्वारा आयोजित 'नियम आधारित आदेश-निर्माण में भारतीय नौसेना की भूमिका' विषय पर एक महत्वपूर्ण परिचर्चा आयोजित की गई। इस सत्र में समुद्री सुरक्षा, अंतरराष्ट्रीय व्यवस्था और भारतीय नौसेना की रणनीतिक भूमिका पर विस्तार से विचार-विमर्श हुआ। पैनल में प्रो. (डॉ.) अभिमन्यु सिंह अरहा (चेयर), लेफ्टि. कमांडर अनुपमा टपलियाल और लेफ्टिनेंट जीवितेश सहारन ने बतौर वक्ता सहभागिता की। वक्ताओं ने इंडो-पैसिफिक क्षेत्र में स्थिरता बनाए रखने, समुद्री मार्गों की सुरक्षा और नियम-आधारित वैश्विक व्यवस्था को सुदृढ़ करने में भारतीय नौसेना की बढ़ती भूमिका को रेखांकित किया।

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास द्वारा आयोजित विचारोत्तेजक सत्र 'फ्रॉम सपोर्ट रोल्स टू कमांड : द इवॉल्विंग रोल ऑफ वीमेन इन द मिलिट्री' में लेफ्टिनेंट कर्नल वर्षा राय और मेजर नम्रता धस्माना ने भारतीय सेना में महिलाओं की नेतृत्वकारी भूमिका पर सारगर्भित विचार साझा किए। सत्र का संचालन डॉ. सत्यप्रकाश झा ने किया। चर्चा का केंद्रबिंदु यह रहा कि सेना में महिलाओं के लिए कमान कोई नया अवसर नहीं, बल्कि लंबे समय से निभाई जा रही जिम्मेदारियों की स्वाभाविक स्वीकृति है।

पेंटागन प्रेस द्वारा आयोजित 'ऑपरेशन सिंदूर : डॉक्ट्रिन डिसीजन एंड डिट्रेंस इनसाइड इंडियाज न्यू मिलिट्री रिस्पॉन्स' कार्यक्रम में मेजर जनरल बिपिन बख्शी और अनिल त्रिगुणायत शामिल रहे। संचालन शिवम आर्या ने किया। कार्यक्रम की शुरुआत में प्रेजेंटेशन द्वारा 'रेडलाइंस रीड्रॉन : ऑपरेशन सिंदूर' शीर्षक आगामी पुस्तक के प्रमुख बिंदुओं को सरलता से समझाया गया। इस पुस्तक में राष्ट्रीय सुरक्षा और आतंकवाद से जुड़े महत्वपूर्ण घटनाक्रमों को शामिल किया गया है।

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास द्वारा आयोजित सत्र 'यूनिफॉर्म ऑन स्क्रीन' में फिल्म एवं मीडिया विशेषज्ञ पार्थजीत बरुआ ने भारतीय सिनेमा में सेना के चित्रण पर विस्तार से चर्चा की। संचालन न्यास के संपादक श्री दीप सैकिया ने किया। ऑडियो-वीडियो प्रस्तुति की शुरुआत राष्ट्रगान से हुई, जिसने सभागार को देशभक्ति से ओतप्रोत कर दिया। वक्ता ने बताया कि समय के साथ फिल्मों में सैन्य चरित्रों का चित्रण कैसे यथार्थवादी और भावनात्मक होता गया। सिनेमा ने आम जनमानस तक सेना के साहस, अनुशासन और बलिदान की कहानियाँ पहुँचाई।

'कंट्रीब्यूशन ऑफ वीमेन इन आर्म्ड फोर्सेस' विषय पर आयोजित चर्चा में मेजर मैत्रेयी दांडेकर और मेजर मोहिनी गार्गे कुलकर्णी वक्ता रहीं। न्यास-अध्यक्ष प्रो. मिलिंद सुधाकर मराठे के स्वागत-संबोधन के बाद संचालन आशीष जाधव ने किया। वक्ताओं ने रानी झाँसी रेजिमेंट को महिला सशक्तीकरण का ऐतिहासिक प्रतीक बताते हुए सेना में महिलाओं की यात्रा को रेखांकित किया।

इंटरनेशनल पवेलियन

हॉल संख्या 4 में स्थापित इंटरनेशनल पवेलियन के अंतर्गत, इंटरनेशनल इवेंट्स कॉर्नर ने वैश्विक साहित्यिक संवाद के लिए एक सतत मंच के रूप में अपनी पहचान बनाई। इस मंच पर यूरोप, मध्य एशिया, पश्चिम एशिया, लैटिन अमेरिका, दक्षिण एशिया और अमेरिका से आए लेखक, कवि, शिक्षाविद्, नाटककार, अनुवादक और संस्कृतिकर्मी एक साथ जुड़े। संवाद सत्रों, रचना पाठों, पुस्तक लोकार्पण और अन्य विशेष प्रस्तुतियों की शृंखला के माध्यम से इस मंच ने साहित्य को सांस्कृतिक आदान-प्रदान, ऐतिहासिक आत्मचिंतन और समकालीन विमर्श के एक जीवंत माध्यम के रूप में प्रस्तुत किया। साथ ही, मेले की भूमिका को अंतरराष्ट्रीय विचारों और रचनात्मक परंपराओं के संगम स्थल के रूप में और सुदृढ़ किया। इस मंच पर विश्व के विभिन्न देशों की सांस्कृतिक-साहित्यिक विरासत को एक-दूसरे से साझा करने का अवसर भी मिला। इस बार सम्मानित 'अतिथि देश' के रूप में क़तर की उपस्थिति ने मेले को केवल पुस्तकों का उत्सव ही नहीं, बल्कि सभ्यताओं के संवाद का मंच बना दिया। साथ ही, 'फोकस देश' के रूप में स्पेन ने अपनी जीवंत और आत्मीय प्रस्तुति के साथ पाठकों को आकर्षित किया। इंटरनेशनल पवेलियन को देखते ही यह धारणा टूटने लगती थी कि विश्व के देशों और भारत की संस्कृतियाँ एक-दूसरे से बहुत ज्यादा भिन्न हैं। यहाँ विभिन्न देशों के प्रतिनिधिमंडल द्वारा अनेक सत्र आयोजित किये गए।

इस बार मुख्य आकर्षण का केंद्र रहा जापान फाउंडेशन द्वारा 'वेलकमिंग मंगा टू इंडिया' शीर्षक से आयोजित कार्यक्रम, जिसमें योशितोकी ओइमा के

आने से पहले ही दर्शकों की अपार भीड़ उमड़ पड़ी। ओइमा ने अपनी विश्वप्रसिद्ध मंगा शृंखला 'टू योर इटर्निटी' के पात्र 'फुशी' का लाइव चित्रांकन किया। मंगा कला को पाठकों ने विस्मय के साथ देखा कि कलाकार और उनकी कला मंच को कैसे जीवंत कर देती है।

भारत-जापान के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित 'इंडिया-जापान पब्लिशर्स मीट एंड ग्रीट' कार्यक्रम ने दोनों देशों के बीच साहित्यिक और प्रकाशन सहयोग की संभावनाओं को उजागर किया। नेशनल बुक ट्रस्ट के निदेशक श्री युवराज मलिक ने स्वागत संबोधन में भारत-जापान के सांस्कृतिक और साहित्यिक संबंधों पर प्रकाश डाला और आपसी सहयोग को और मजबूत करने पर जोर दिया। इस कार्यक्रम ने दोनों देशों के साहित्यिक संवाद को नई दिशा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इस अवसर पर जापान से आए प्रतिनिधि कोगा ने भी भारत के प्रति अपना लगाव व्यक्त किया।

क्रॉस-कल्चरल संवाद में एक नए अध्याय की शुरुआत करते हुए किताब इंडस्ट्री पर भारत-फ्रांस एक्सचेंज ने 'फ्यूचर ऑफ बुक्स' का शुभारंभ किया। इस कार्यक्रम में फ्रांस के भारत में राजदूत डॉ. थियरी मैथ्यू और राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत के निदेशक श्री युवराज मलिक मौजूद थे। न्यास-निदेशक ने अपने संबोधन में कहा कि साहित्यिक आदान-प्रदान आज की आवश्यकता है। उन्होंने यह भी कहा कि पुस्तक का भविष्य सभ्यता और संस्कृति से जुड़ा है और यह विद्वानों के वैश्विक समुदाय को जोड़ने का माध्यम है। फ्रांसीसी राजदूत के संबोधन में साझेदारी की भावना का स्पष्ट स्वर था, जो इस बात को पुष्ट कर रहा था कि भारत-फ्रांस साहित्यिक सहयोग राजनयिक संबंधों को मजबूत करने और दोनों देशों की आपसी समझ को गहरा करने का एक महत्वपूर्ण क्षेत्र बना हुआ है।

एंबैसी ऑफ स्पेन द्वारा स्पेन और भारत के कवियों के बीच भाषायी विविधता पर आधारित एक विशेष साहित्यिक सत्र का आयोजन किया गया। इस कार्यक्रम की अध्यक्षता मारिया जोस गॉल्वेज़ ने की। सत्र में स्पेनिश, बास्क, कैटलन, एस्टूरियन, बाँग्ला और हिंदी जैसी विभिन्न भाषाओं पर केंद्रित सार्थक चर्चा हुई। इस चर्चा में वक्ताओं ने कहा कि जिस तरह भारत अनेक भाषाओं और बोलियों का देश है, उसी तरह स्पेन भी भाषायी विविधता से समृद्ध राष्ट्र है।

रूस द्वारा आयोजित 'रूसी लेखकों से मिलिए' कार्यक्रम में रूसी साहित्य की समृद्ध परंपरा, उसकी संवेदनशीलता और समकालीन स्वरूप पर विस्तृत और रोचक चर्चा देखने को मिली। इस साहित्यिक सत्र में रूस के प्रसिद्ध लेखक रोमन सेनचिन, यारोस्लावा पुलिनोविच, इलिया कोचेरजिन और अल्योना करीमोवा मुख्य रूप से उपस्थित रहे। कार्यक्रम का संचालन वरिष्ठ पत्रकार अभय मौर्य ने किया। सत्र के दौरान लेखकों ने अपनी-अपनी रचनात्मक यात्राओं, लेखन-अनुभवों और साहित्यिक दृष्टिकोण को श्रोताओं के साथ साझा किया, जिससे रूसी साहित्य को समझने का एक व्यापक दृष्टिकोण सामने आया। लेखक रोमन सेनचिन ने बताया कि यह उनका भारत का पहला दौरा है। उन्होंने अपनी हाल ही में प्रकाशित पुस्तक 'येलित्सिन' के बारे में जानकारी साझा की।

फ्रेंच इंस्टीट्यूट इन इंडिया द्वारा आयोजित क्लासिक फ्रेंच कृति 'द लिटिल प्रिंस' के भारतीय रूपांतरण 'लिटिल प्रिंस : ऐन अडॉप्टेशन ऑफ द क्लासिक फ्रेंच फेबल टू ए पिक्चर बुक फॉर इंडियन रीडर्स' का लोकार्पण किया गया। कार्यक्रम की शुरुआत फ्रेंच इंस्टीट्यूट के निदेशक ग्रेगर ट्रूमेल ने की। उन्होंने बताया कि यह पुस्तक मूल रूप से 1943 में फ्रांसीसी लेखक एंटोनी डी सेंट-एक्सुपेरी द्वारा लिखी गई थी और इसे विश्व साहित्य की असाधारण कृतियों में गिना जाता है। उन्होंने कहा कि भारतीय रूपांतरण ने इसे स्थानीय संदर्भ में फिर से खोजा है और यह अब 20 भारतीय भाषाओं में उपलब्ध है।

पोलिश इंस्टीट्यूट द्वारा 'ए डायलॉग इन बुक्स एंड लिट्रेचर' विषय पर कार्यक्रम आयोजित किया गया, जहाँ पोलैंड के राजनयिक पियोत्र स्वीटलस्की के साथ कार्यक्रम में अभिनंदन-संबोधन राष्ट्रीय पुस्तक न्यास के निदेशक श्री युवराज मलिक ने किया।

बाल मंडप

नई दिल्ली विश्व पुस्तक मेला 2026 भारत मंडपम के हॉल संख्या 6 में बने Kids Express (बाल मंडप) में बच्चों के लिए अनेक रचनात्मक और कलात्मक कार्यक्रम आयोजित किये गए। बाल मंडप एक प्रदर्शनी स्थल नहीं, बल्कि ज्ञान, रचनात्मकता और आनंद का एक ऐसा मंच बनकर उभरा, जिसने बच्चों के मन को नई दिशा देने के साथ-साथ उनके चेहरे पर मुस्कान बिखेरने में सफलता अर्जित की। एनसीसीएल (एनबीटी का एक अनुभाग) ने स्वयं तथा अन्य संस्थानों के तत्वावधान में बच्चों के लिए अनेक सत्र आयोजित किए।

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास द्वारा आयोजित 'मीट योर सुपरहीरो' कार्यक्रम के दौरान एम्फीथिएटर देशभक्ति, गर्व और प्रेरणा के भाव से गूँज उठा। एस्ट्रोनॉट फाइटर पायलट कैप्टन शुभांशु शुक्ला से न्यास के निदेशक श्री युवराज मलिक ने उनकी सफल अंतरिक्ष यात्रा से संबंधित वार्ता की। इसके बाद, विभिन्न स्कूलों से संवाद करने आए बच्चों ने उनसे अंतरिक्ष यात्रा से जुड़े सवाल पूछे, जिनका उन्होंने स्पष्ट और संतोषजनक उत्तर दिया। अंत में उन्होंने बच्चों को जीवन का मूलमंत्र दिया, "लक्ष्य पर अर्जुन की तरह नजर रखो और कठिनाइयों से घबराने की बजाय डटे रहो।" एक सिपाही का अनुशासन और एक बड़े भाई जैसा स्नेह—शुभांशु शुक्ला के ये दो रूप बच्चों के दिलों में गहरी छाप छोड़ गए। इसके साथ ही, बच्चों की लेखकों से मुलाकात, प्रशिक्षकों का प्रशिक्षण कार्यक्रम के अंतर्गत पारंपरिक गुड़ियों का निर्माण, पोस्टर-मेकिंग प्रतियोगिता, कार्टून डिजाइनिंग वर्कशॉप, राष्ट्रीय ई-पुस्तकालय द्वारा एक रोचक और ज्ञानवर्धक ओरिएंटेशन सत्र शामिल रहे। प्रथम बुक्स द्वारा आयोजित 'कठपुतली कहानी समय', स्कॉलास्टिक द्वारा आयोजित 'मीट द मैस्कॉट' कार्यक्रम, वागेश्वरी नृत्यशाला की भरतनाट्यम प्रस्तुतियाँ, एकलव्य फाउंडेशन द्वारा आयोजित पुस्तक लोकार्पण और कथावाचन कार्यक्रम में जूलिया ट्रौइलौड और एकलव्य फाउंडेशन के शिवनारायण गौर की मुख्य उपस्थिति, इज़रायल द्वारा आयोजित संवादात्मक कार्यशाला में प्रसिद्ध बाल-लेखक आइरिस अर्गमैन द्वारा रचनात्मक गतिविधियाँ, फिनलैंड द्वारा आयोजित कार्यक्रम 'स्टोरीटेलिंग विद द मूमिन्स' में फिनलैंड की प्रसिद्ध किस्सागो लिरिस माट्टा द्वारा कथावाचन; वंडररूम द्वारा आयोजित 'लेखक और कहानीकार बच्चे' कार्यक्रम में बच्चों की रचनात्मक अभिव्यक्ति देखते ही बन रही थी। 'अ हैंडफुल ऑफ स्टोरीज' कार्यक्रम के अंतर्गत 'गोल्पोदीदी' के नाम से मशहूर, डॉ. प्रियंका चटर्जी द्वारा अनोखे अंदाज और हाव-भाव से कहानियाँ सुनाना, 'इनटू द स्टोरीलैंड' कार्यक्रम के अंतर्गत, दक्षिण भारतीय फिल्मों में माँ के चरित्र-अभिनय के लिए प्रसिद्ध जानकी साबेश का बच्चों के बीच एक अलग ढंग में 'गोल्पो अम्मा' बनकर आना; खेल तमाशा थिएटर ग्रुप द्वारा आयोजित 'आओ! अभिनय करें' कार्यक्रम; रूम टू रीड द्वारा आयोजित कार्यक्रम के तहत प्रसिद्ध इलस्ट्रेटर और 'द लिटिल बुक ऑफ इंडियन डॉग्स' के लिए सम्मानित चंद्रिमा चटर्जी द्वारा बच्चों को चित्रकला के गुर सिखाना, बिसलेरी द्वारा आयोजित 'वेस्ट टू वंडर' कार्यक्रम, ब्लू फिश डिजाइंस द्वारा कार्यक्रम में पुस्तक 'पोटली' का लोकार्पण, आईआईटी कानपुर द्वारा अपनी महत्वाकांक्षी परियोजना SATHEE को लेकर एक विशेष ओरिएंटेशन और संवादात्मक प्रश्नोत्तरी का आयोजन, क्यू मैथ्स द्वारा 'मैथ्स मैजिक' कार्यक्रम का आयोजन ने बच्चों के लिए एक नई दुनिया के दरवाले खोले। दिल्ली आर्ट इनोवेटर्स द्वारा 3डी क्वीलिंग पेपर क्राफ्ट वर्कशॉप का आयोजन, रूस द्वारा 'वन डे इन कजान' कार्यक्रम का आयोजन, स्पेन द्वारा आयोजित 'इन दी फॉरेस्ट' कथावाचन सत्र में स्पेन की बाल कहानीकार लौरा एस्क्यूला द्वारा कथावाचन; 'विज्ञान का जादू' कार्यक्रम में मराठी बाल-कथा लेखक राजीव तांबे द्वारा बच्चों को विज्ञान

संबंधी बातें बताना, समवाव फाउंडेशन' द्वारा आयोजित कार्यक्रम में शालिनी वर्मा द्वारा पर्यावरण से संबंधित जागरूकता के बारे में बताना, स्पेन की लौरा एस्क्यूला द्वारा 'द ब्रेव स्क्वॉयरल : कथावाचन सत्र' में वाद्य-यंत्रों का प्रयोग करके, नाटकीय ढंग से बच्चों को 'बहादुर गिलहरी' की कहानी सुनाना, 'वर्ल्ड ऑफ आर्टफुल स्टोरीज' विषयक आयोजन में लेखक और पर्यावरणप्रेमी अनीता सिन्हा द्वारा बच्चों को चित्रों और आकृतियों के माध्यम से कहानी सुनाना, 'चेष्टा केयर फाउंडेशन' द्वारा आयोजित भारतीय शिक्षा की

'जमीनी हकीकत' और बुनियादी साक्षरता पर वक्तव्य इत्यादि कार्यक्रमों ने बच्चों को ज्ञान से समृद्ध किया।

साहित्यिक गतिविधियाँ

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास द्वारा स्वामी विवेकानंद जयंती 12 जनवरी, 2026 (युवा दिवस) के अवसर पर लेखक मंच पर विशेष काव्य-पाठ का आयोजन किया गया। यह कार्यक्रम दो चरणों में संपन्न हुआ, जिसमें देश के प्रतिष्ठित युवा कवियों ने अपनी रचनाओं का सरस पाठ प्रस्तुत किया।

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास द्वारा आयोजित कार्यक्रम के अंतर्गत एनबीटी द्वारा प्रकाशित डॉ. सांत्वना दुबे तिवारी की पुस्तक 'सफल छात्र बनने का रास्ता : आठ तकनीकें एवं रहस्य' पर चर्चा आयोजित की गई। कार्यक्रम में वाणी प्रकाशन की निदेशक अदिति महेश्वरी ने कहा कि एनबीटी कम दरों पर गुणवत्तापूर्ण पुस्तकों को जन-जन तक पहुँचाने का प्रभावी कार्य कर रहा है। न्यास के अध्यक्ष प्रो. मिलिंद सुधाकर मराठे ने कहा कि विभिन्न अध्यक्षों और निदेशकों के योगदान से एनबीटी निरंतर प्रगति कर रहा है तथा वर्तमान में लगभग

70 भाषाओं में कार्य करते हुए, लुप्तप्राय भाषाओं और साहित्य के संरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। उन्होंने संस्था की सफलता का श्रेय एनबीटी की पूरी टीम को दिया।

साहित्य अकादेमी द्वारा 'वंदे मातरम्' के 150 वर्ष पूर्ण होने के स्मरणोत्सव के अवसर पर एक परिचर्चा का आयोजन किया गया। इस सत्र में महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय की कुलपति प्रो. कुमुद शर्मा, लेखक-अनुवादक निर्मलकांति भट्टाचार्य तथा पूर्व आईएएस अधिकारी भाग्येश झा ने सहभागिता की। प्रो. कुमुद शर्मा ने कहा कि 'वंदे मातरम्' स्वाधीनता संग्राम के दौरान प्रेरणात्मक राष्ट्रीय चेतना के लिए लिखा गया गीत है।

नालंदा लिटरेरी फेस्टिवल द्वारा आयोजित कार्यक्रम में मुख्य वक्ता रहीं लेखिका एवं क्यूरेटर वैशाली सेठा ने नालंदा के ऐतिहासिक महत्व, विश्वविद्यालय की प्राचीन परंपरा और आवासीय शिक्षा प्रणाली पर प्रकाश डाला। उन्होंने नालंदा को भारतीय संस्कृति को वैश्विक स्तर पर प्रस्तुत करने का सशक्त माध्यम बताया तथा अपनी पुस्तक 'बुद्धा एंड बिहार' के संदर्भ में अपनी सांस्कृतिक यात्रा साझा की। साथ ही, उन्होंने यह भी कहा कि नालंदा साहित्य महोत्सव का उद्देश्य लोगों को नालंदा की ऐतिहासिक, शैक्षिक और सांस्कृतिक विरासत से जोड़ना तथा नालंदा को वैश्विक साहित्यिक मानचित्र पर स्थापित करना है।

ऊर्जा संस्कृति समिति द्वारा आयोजित 'हरियाणा पुस्तकालय अभियान' कार्यक्रम की शुरुआत रा.पु. न्यास की हिंदी संपादक सुश्री कमलेश कुमारी के स्वागत वक्तव्य से हुआ। उसके बाद आई.पी.एस. श्री शत्रुजीत कपूर ने ऑनलाइन माध्यम से लेखक मंच को संबोधित करते हुए कहा कि लेखक मंच पर 'हरियाणा पुस्तकालय अभियान' पर विमर्श एक रचनात्मक पहल है। इस अवसर पर रा.पु. न्यास के निदेशक श्री युवराज मलिक ने अपने वक्तव्य में हरियाणा पुलिस द्वारा पुस्तकालय निर्माण की पहल को पूरे देश के लिए मार्गदर्शक बताया। इस अवसर पर उपस्थित आई.एफ.एस. श्री शिवपाल ने कहा कि किताबें ही हैं, जो बेहतर मनुष्य का निर्माण करती हैं। कार्यक्रम के अंत में न्यास के उपनिदेशक श्री इमरान उल हक ने धन्यवाद-ज्ञापन किया। कार्यक्रम के अंत में उपस्थित विभिन्न पुस्तकालयों के प्रभारियों को बेहतर पुस्तकालय संचालन के लिए सम्मानित किया गया।

द ग्रेट इंडिया बुक टूर द्वारा 'डिजिटल युग में कविता : पाठक, प्लेटफॉर्म और पहुँच' विषय पर बातचीत के लिए लेखक-पॉडकास्टर तन्वी अग्रवाल, विनोद कु. पहिलजानी, शिव शंकर झा और अर्पित मिश्र शामिल हुए, जहाँ साहित्य पर डिजिटल माध्यम के प्रभाव और 'वायरल' होने की नई प्रवृत्ति पर बातचीत हुई।

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत द्वारा आयोजित कार्यक्रम में न्यास की पुस्तक 'भारत में सड़क दुर्घटनाएँ' का लोकार्पण किया गया। यह पुस्तक सड़क सुरक्षा पर गंभीर मंथन, सड़क दुर्घटनाओं की बढ़ती समस्या और उसके सामाजिक प्रभावों को लेकर लिखी गई है। इस पुस्तक के लेखक डॉ. गौरव संजय पद्मश्री से सम्मानित और ऑर्थोपीडिक एवं स्पाइन सर्जन हैं। कार्यक्रम के मुख्य अतिथि लोकपाल सिंह, सेवानिवृत्त न्यायमूर्ति एवं पूर्व उत्तराखंड उच्च न्यायालय ने कहा कि सड़क दुर्घटनाएँ एक गंभीर समस्या है, जिन्हें पूरी तरह समाप्त करना भले ही कठिन हो, लेकिन सही प्रयासों से इन्हें काफी हद तक कम किया जा सकता है।

सीईओ स्पीक

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास द्वारा 'प्रकाशन के भविष्य को समझना' विषय पर आधारित CEO Speak, नई दिल्ली विश्व पुस्तक मेले के साथ-साथ रणनीतिक संवाद के लिए एक महत्वपूर्ण मंच के रूप में उभरा। 11 जनवरी, 2026 को नई दिल्ली के होटल, 'द अशोक' में आयोजित इस कार्यक्रम में भारत और विदेश से नीति-निर्माता, प्रकाशक और उद्योग जगत के नेतृत्वकर्ता एक साथ आए और प्रकाशन व्यवस्था को आधार प्रदान करने वाले संस्थागत और उद्योगगत संबंधों को सुदृढ़ किया।

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास के अध्यक्ष प्रो. मिलिंद सुधाकर मराठे ने उद्घाटन

सत्र में चिंतनशील चर्चा के लिए पृष्ठभूमि तैयार किया और सीईओ स्पीक को पुस्तक मेलों की व्यावसायिक गतिविधि से अलग एक संरचित मंच के रूप में वर्णित किया। उन्होंने भारतीय प्रकाशन उद्योग के विशाल स्वरूप पर प्रकाश डाला, जिसमें 12 लाख से अधिक नौकरियाँ, 9,000 प्रकाशक और 21,000 खुदरा विक्रेता शामिल हैं।

शिक्षा मंत्रालय के सचिव श्री आनंदराव वी. पाटिल ने वक्तव्य देते हुए नीति और उद्योग के बीच सुनियोजित सहभागिता के बढ़ते महत्व पर बल दिया। भारत के बहुभाषी और विविधतापूर्ण पठन-परिदृश्य पर प्रकाश डालते हुए उन्होंने कहा कि मुद्रित सामग्री, विशेष रूप से शिक्षा के क्षेत्र में, मूलभूत बनी हुई है, भले ही भारत की राष्ट्रीय डिजिटल लाइब्रेरी, दीक्षा और ई-पाठशाला जैसे प्लेटफॉर्म इसकी पहुँच का विस्तार कर रहे हों। नई दिल्ली स्थित इंस्टीट्यूटो सर्वेंतेस की निदेशक सुश्री मारिया गिल बर्मन ने स्पेन-भारत द्विदलीय सहयोग

के ढाँचे के अंतर्गत मेले में फोकस कंट्री के रूप में स्पेन की भागीदारी पर प्रकाश डाला। कतर से, नबजा पब्लिशिंग हाउस की निदेशक सुश्री अस्मा अल-कुवारी ने खाड़ी देश के प्रकाशन क्षेत्र के विकास का विवरण दिया, जिसमें राज्य-प्रेरित सांस्कृतिक संरक्षण से लेकर ज्ञान-आधारित उद्योग तक की यात्रा शामिल है।

स्पेन के प्रकाशक संघ के प्रबंध निदेशक श्री जोस मैनुअल अंता द्वारा प्रस्तुतियों ने अंतरराष्ट्रीय दृष्टिकोणों को आगे बढ़ाया। श्री प्रणव गुप्ता द्वारा संचालित पैनल चर्चा में जापान, इजरायल, स्पेन, कतर और भारत के प्रतिनिधियों ने भाग लिया।

इस कार्यक्रम के समापन पर, एनबीटी के निदेशक श्री युवराज मलिक ने पठन और प्रकाशन के क्षेत्र में भारत के दूरदर्शी दृष्टिकोण को रेखांकित करते हुए पुणे पुस्तक महोत्सव, राष्ट्रीय ई-पुस्तकालय, अनुवाद अनुदान और वैश्विक भारत पवेलियन जैसी पहलों पर प्रकाश डाला। सीईओ स्पीक ने नई दिल्ली विश्व पुस्तक मेला के साथ मिलकर राष्ट्रीय और वैश्विक स्तर पर प्रकाशन के भविष्य को आकार देने के लिए नीति, उद्योग और संस्कृति को जोड़ने वाले एक रणनीतिक मंच के रूप में अपनी भूमिका को पुनः स्थापित किया।

राइट्स टेबल

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत द्वारा नई दिल्ली विश्व पुस्तक मेला 2026 के अंतर्गत 13वें 'नई दिल्ली राइट्स टेबल (एनडीआरटी)' का शुभारंभ 12 जनवरी, 2026 को न्यास के निदेशक श्री युवराज मलिक के वक्तव्य, 'संरचनाएँ नहीं, हम सभ्यताएँ गढ़ते हैं'—के साथ हुआ। इस दो दिवसीय कार्यक्रम का आयोजन 12-13 जनवरी, 2026 तक नई दिल्ली के भारत मंडपम में किया गया।

इस कार्यक्रम के उद्घाटन सत्र का संचालन न्यास के मुख्य संपादक एवं संयुक्त निदेशक श्री कुमार विक्रम ने किया। इस अवसर पर न्यास के अध्यक्ष प्रो. मिलिंद सुधाकर मराठे, निदेशक श्री युवराज मलिक और फ्रैंकफर्ट बुक फेयर की उपाध्यक्ष सुश्री क्लाउडिया कैसर मुख्य रूप से उपस्थित रहीं। भारत से अपने दीर्घकालिक संबंधों को याद करते हुए सुश्री कैसर ने भारत को फ्रैंकफर्ट बुक फेयर का दो बार 'गेस्ट ऑफ ऑनर' बनने वाला पहला देश बताया। इस बातचीत में उन्होंने नई दिल्ली विश्व पुस्तक मेले में आगंतुकों के लिए निःशुल्क प्रवेश व्यवस्था की सराहना भी की। इसके उपरांत, सुश्री कैसर को उनके वैश्विक योगदान के लिए सम्मानित किया गया।

न्यास के अध्यक्ष प्रो. मिलिंद सुधाकर मराठे ने इस आयोजन में वैश्विक-साहित्यिक आदान-प्रदान पर जोर दिया। वहीं न्यास के निदेशक श्री युवराज मलिक ने प्रकाशन को 'लाभ नहीं, बल्कि उत्पाद और सभ्यता-निर्माण' का माध्यम बताया। इस कार्यक्रम में 20 से अधिक देशों के 85 प्रतिभागियों ने हिस्सा लिया और 700 से अधिक बी-टू-बी बैठकें तय की गईं।

कार्यक्रम में राष्ट्रीय पुस्तक न्यास की वित्तीय सहायता योजना की जानकारी न्यास के मुख्य संपादक एवं संयुक्त निदेशक श्री कुमार विक्रम द्वारा दी गई। इस योजना के अंतर्गत विदेशी पुस्तकों के भारतीय भाषाओं में अनुवाद हेतु 10 रुपये प्रति शब्द तक की सहायता प्रदान की जाएगी। इस योजना के लिए आवेदन की अंतिम तिथि 28 फरवरी, 2026 निर्धारित की गई।

कार्यक्रम में चिली, तुर्की, श्रीलंका, जापान और पश्चिम एशिया से साहित्यिक एजेंटों और प्रकाशकों ने भागीदारी की। समग्र रूप से, इन संवादों ने नई दिल्ली राइट्स टेबल को एक सुव्यवस्थित बी2बी मंच के रूप में पुनः स्थापित किया, जो सीमापार सहयोग को प्रभावी रूप से सक्षम बनाता है। निष्कर्षतः, कहा जा सकता है कि नई दिल्ली राइट्स टेबल ने बहुभाषी भारतीय पुस्तकों के लिए नए अवसरों का विस्तार किया और वैश्विक प्रकाशन परिदृश्य में भारत की स्थिति को और सुदृढ़ किया।

प्रथम रीडिंग इंडिया संवाद का आयोजन

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत (एनबीटी) द्वारा एक अभिनव पहल, दो दिवसीय 'रीडिंग इंडिया संवाद' का नई दिल्ली विश्व पुस्तक मेला 2026 में भारत मंडपम के हॉल संख्या 3 के मेजनिन मंच पर शुभारंभ हुआ। उच्च स्तरीय राष्ट्रीय समन्वय मंच के रूप में रीडिंग इंडिया संवाद 2026 का उद्देश्य भारत में पठन, पुस्तकालय और ज्ञान तक पहुँच के हमारे शैक्षिक तंत्र को मजबूत करना है। इस संवाद के उद्घाटन समारोह में शिक्षा मंत्रालय के स्कूली शिक्षा एवं साक्षरता विभाग (DoSE&L) के सचिव श्री संजय कुमार, उत्तराखंड के सेतु आयोग के उपाध्यक्ष श्री राजशेखर जोशी, शिक्षा मंत्रालय के स्कूली शिक्षा एवं साक्षरता विभाग की अपर सचिव सुश्री अर्चना शर्मा अवस्थी (आईआरएस) और राष्ट्रीय पुस्तक न्यास के निदेशक श्री युवराज मलिक तथा न्यास के मुख्य संपादक एवं संयुक्त निदेशक श्री कुमार विक्रम भी सम्मिलित हुए। इस कार्यक्रम में वरिष्ठ नीति-निर्माता, राज्य एवं केंद्रशासित प्रदेशों के प्रतिनिधि, शिक्षा क्षेत्र के नेता, गैर-सरकारी संगठन, सीएसआर और फाउंडेशन, प्रकाशक और यूनिसेफ, यूनेस्को, एनसीईआरटी एवं नीति आयोग सहित अन्य प्रमुख संस्थानों ने भाग लिया।

शिक्षा सचिव श्री संजय कुमार ने अपने उद्बोधन में कहा कि हम जो कुछ भी बोलते हैं, वह वही होता है, जो हमने पढ़ा है। उन्होंने माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी के संदेश "जो राष्ट्र पढ़ता है, वही प्रगति करता है" का उल्लेख करते हुए कहा, "पुस्तकों से भरी दीवार से सुंदर कुछ भी नहीं होता।"

इस संवाद में न्यास-निदेशक श्री युवराज मलिक ने स्पष्ट रूप से रेखांकित किया कि जो समाज पढ़ता नहीं है, वह आगे नहीं बढ़ सकता। पढ़ना व्यक्ति को अकेला जरूर करता है, लेकिन उसी एकांत में सोचने और समझने की प्रक्रिया शुरू होती है। जितना अधिक हम पढ़ते हैं, उतना ही यह बोध होता है कि हमारा ज्ञान कितना सीमित है।

'रीडिंग इंडिया संवाद' कार्यक्रम में 'डिजिटल एक्सेस और हर शिक्षार्थी के लिए राष्ट्रीय ई-पुस्तकालय', 'राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषदों (एससीईआरटी) और समग्र शिक्षा को मजबूत करना', 'पुस्तकालय और डिजिटल इंफ्रास्ट्रक्चर के लिए सार्वजनिक-निजी क्षेत्रों की भागीदारी' जैसे विषयों पर अनेक सत्र आयोजित किये गए। इन सभी सत्रों में वक्ताओं के सारगर्भित संबोधन हुए। समापन सत्र में 'राष्ट्र-निर्माण की दृष्टि, रणनीति और प्रौद्योगिकी मार्ग' विषय पर शिक्षा मंत्रालय के डिजिटल शिक्षा निदेशक श्री हरिकुमार जानकीरामन, न्यास के अध्यक्ष प्रो. मिलिंद सुधाकर मराठे, एमसीडी की अतिरिक्त निदेशक सुश्री सुजाता मलिक और एससीईआरटी तेलंगाना के डॉ. आर. मंगा रेड्डी सम्मिलित हुए। सत्र का संचालन सुश्री आँचल ने किया।

न्यास के अध्यक्ष प्रो. मराठे ने अपने सुझावों में कहा कि सभी प्रयासों को राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 के अनुरूप होना चाहिए। अभिभावकों के साथ संवाद बढ़ाने की जरूरत है और 'जो परीक्षा में आएगा वही पढ़ाया जाएगा' वाली सोच से बाहर निकलना होगा। अंत में, राष्ट्रीय रीडिंग वर्किंग ग्रुप की घोषणा भी की गई।

फेस्टिवल ऑफ फेस्टिवल्स

नई दिल्ली विश्व पुस्तक मेले 2024 में, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत ने एक अनूठी पहल 'फेस्टिवल ऑफ फेस्टिवल्स' की शुरुआत की थी। इस पहल के तीसरे संस्करण 2026 में देशभर के विभिन्न पुस्तक महोत्सव और साहित्यिक मंच नई दिल्ली विश्व पुस्तक मेला-2026 में एक साझा मंच पर एक साथ आए। इसके अंतर्गत भारत लिट्रेचर फेस्टिवल, एपीजे कोलकाता लिटरेरी फेस्टिवल, ऑथर्स इंक एनेकडोट पब्लिशिंग हाउस, एशियन लिटरेरी सोसाइटी और द ग्रेट इंडियन बुक टूर, ये सभी शामिल हुए।

मेले में फेस्टिवल ऑफ फेस्टिवल्स के अंतर्गत लेखकों, वक्ताओं और सेलेब्रिटीज की प्रभावशाली शृंखला देखने को मिली। इनमें स्मृति ईरानी, हेमा मालिनी, कैलाश सत्यार्थी, पीयूष मिश्रा, राहुल भट्टाचार्य, रिकी केज, जया किशोरी, दुरजॉय दत्ता, हंसा योगेंद्र, शुभांशु शुक्ला, शांतनु गुप्ता, ल्यूक कुटिन्हो, दीप हलदर, हर्षिता गुप्ता, नितिन सेठ और शालिनी पासी सहित कई अन्य प्रमुख नाम शामिल हुए।

सांस्कृतिक कार्यक्रम

हर वर्ष की भाँति इस वर्ष भी मेले में प्रसिद्ध कलाकारों एवं सम्मानित अतिथि देश और फोकस देश द्वारा सांस्कृतिक प्रस्तुतियों ने दर्शकों को रससिक्त कर दिया। मेले में तीन बार के ग्रैमी पुरस्कार विजेता, संगीतकार और पर्यावरणविद् रिकी केज की विशेष उपस्थिति रही। उनकी संगीतमय प्रस्तुति ने दर्शकों को मंत्रमुग्ध कर दिया। राष्ट्रीय पुस्तक न्यास द्वारा 'वीर रस कवि सम्मेलन' में कवियों ने ओजस्वी कविता-पाठ किया, तो रेख्ता फाउंडेशन द्वारा आयोजित कविता पाठ ने श्रोताओं को कविता पंक्तियाँ दोहराने पर मजबूर कर दिया।

थीम आधारित कार्यक्रम के अंतर्गत, आर्म्ड फोर्सेज बैंड' द्वारा प्रस्तुत 'वंदे मातरम्' से कार्यक्रम का शुभारंभ हुआ। इसके बाद 'जय हो', 'माँ तुझे सलाम', 'दिल दिया है, जान भी देंगे, ऐ वतन तेरे लिए' और 'ऐसा देश है मेरा' जैसे देशभक्ति गीतों की सुमधुर प्रस्तुतियों ने दर्शकों को रससिक्त कर दिया। एयर फोर्स बैंड की शानदार प्रस्तुति हुई, जिसमें देशभक्ति गानों की प्रस्तुति ने दर्शकों के दिलों में देश की रक्षा के लिए मर-मिटने का जज्बा भर दिया—'हिंदुस्तान हमारा जान से प्यारा है, लहरा दो, लहरा दो, सरजमीं का परचम लहरा दो'। इस प्रस्तुति में दो अग्निवीर वीरांगनाएँ भी सम्मिलित थीं। भारतीय नौसेना बैंड द्वारा शानदार प्रस्तुति दी गई। कलाकारों ने देशभक्ति के गानों से महफिल में ऐसा समाँ बाँध दिया कि दर्शक झूम उठे। गानों के बोल थे—'मजहब नहीं सिखाता आपस में बैर रखना', 'मेरा रंग दे बसंती चोला' आदि। अगली प्रस्तुति थी 'रहस्य म्यूजिकल प्रोजेक्ट' की, जिसमें 'ना छेड़ो हमें हम सताए हुए हैं, बहुत जख्म सीने पर खाए हुए हैं' गाने पर दर्शक झूम उठे।

'भारतीयता के रंग' अंतर्गत विविध प्रदेशों के समूह नृत्य कलाकारों द्वारा प्रस्तुत किया गया। मुख्य रूप से असम, कश्मीर, बंगाल, केरल, राजस्थान, पंजाब, महाराष्ट्र एवं गुजरात आदि प्रदेशों की मनमोहक नृत्य प्रस्तुतियाँ की गईं। कश्मीरी समूह नृत्य में तो कलाकारों ने 'घुमरो, घुमरो, श्याम रंग घुमरो, आये हो किस बगिया से' गाने पर नयनाभिराम नृत्य कर दर्शकों में समाँ बाँध दिया। वहीं केरल का कथकली नृत्य दर्शकों के मन को लुभा गया। पंजाब की सोंधी मिट्टी के गानों की शृंखला में 'मालवा हेक ग्रुप' ने 'कवीसरी शौर्य गाथाएँ' प्रस्तुत कीं। गुजरात के डांग प्रदेश से आए महेंद्र भाई और साथियों के शौर्य गीत एवं समूह नृत्य डांगी की प्रस्तुति अद्भुत रही। डांगी नृत्य मित्र, भाई-बहन और सभी लोग मिलकर खुशियाँ मनाते हुए करते हैं। इस कार्यक्रम का संचालन एनबीटी के संपादक श्री भाग्येंद्रभाई पटेल ने किया। 'रहनुमा लाइव' ने भी शानदार प्रस्तुति दी। कई विद्यालयों के बच्चों ने कई नृत्य प्रस्तुतियाँ दीं, जिन्हें देखकर वहाँ उपस्थित दर्शक मंत्रमुग्ध हो उठे। इसके अंतर्गत, 'एंबिएंस पब्लिक स्कूल' सफदरजंग की बालिकाओं द्वारा समूह नृत्य भी प्रस्तुत किया गया।

10-18 जनवरी, 2026 तक आयोजित हुए नई दिल्ली विश्व पुस्तक मेले में पहली बार सभी के लिए प्रवेश निःशुल्क रखा गया। इस मेले में 35 से अधिक देशों के 1,000 से अधिक प्रकाशक, 600 से अधिक कार्यक्रम, 1,000 से अधिक वक्ता तथा 20 लाख से अधिक पुस्तकप्रेमियों का आगमन पुस्तक पठन संस्कृति प्रसार के प्रति आश्वस्त करता है। विश्व के सबसे बड़े बी2सी के रूप में अपनी पहचान बनाने वाला यह मेला बताता है कि किताबें केवल पढ़ी नहीं जातीं, वे देशों को जोड़ती हैं, संस्कृतियों को एक सूत्र में बाँधती हैं और संसार के देशों के बीच संवाद का रास्ता खोलती हैं। यह मेला 'वसुधैव कुटुंबकम्' और विश्व को 'ग्लोबल विलेज' के रूप में स्थापित करता है।

(नई दिल्ली विश्व पुस्तक मेला 2026 की प्रत्येक दिन की विस्तृत रिपोर्ट राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत की आधिकारिक वेबसाइट www.nbtindia.gov.in पर देख और पढ़ सकते हैं।)

माननीय केंद्रीय शिक्षा मंत्री श्री धर्मेंद्र प्रधान की अंतरराष्ट्रीय पुस्तक मेला निदेशकों के प्रतिनिधिमंडल से मुलाकात

नई दिल्ली विश्व पुस्तक मेला 2026 के समापन के तुरंत बाद, प्रमुख अंतरराष्ट्रीय पुस्तक मेलों के निदेशकों ने माननीय केंद्रीय शिक्षा मंत्री श्री धर्मेंद्र प्रधान से मुलाकात कर वैश्विक प्रकाशन रुझानों और प्रौद्योगिकी-चालित दुनिया में पुस्तकों के भविष्य पर विचारों का आदान-प्रदान किया।

इस बैठक ने अंतरराष्ट्रीय प्रकाशन जगत के प्रतिनिधियों को मेले में अपने अनुभव पर विचार करने और वैश्विक पुस्तक पारिस्थितिकी तंत्र की भविष्य की दिशा पर चर्चा करने का अवसर प्रदान किया।

इस संवाद के दौरान, अतिथि निदेशकों ने अपने-अपने पुस्तक मेलों की विशिष्ट विशेषताओं और सर्वोत्तम कार्यप्रणालियों को साझा किया। उन्होंने प्रकाशन में उभरते वैश्विक रुझानों, पाठकों के रुझान और पुस्तकों के निर्माण, वितरण और पठन को आकार देने में डिजिटल प्रौद्योगिकी और कृत्रिम बुद्धिमत्ता के बढ़ते प्रभाव के बारे में भी बात की। इस चर्चा ने सांस्कृतिक आदान-प्रदान, संवाद और अंतरराष्ट्रीय सहयोग को बढ़ावा देने वाले मंचों के रूप में पुस्तक मेलों के निरंतर महत्व को रेखांकित किया।

प्रतिनिधिमंडल में श्री डेविड उंगर, महासचिव, अंतरराष्ट्रीय पुस्तक मेला निदेशक और मेक्सिको के ग्वाडालाजारा अंतरराष्ट्रीय पुस्तक मेले के प्रतिनिधि; सुश्री एलेना पासोली, निदेशक, बोलोना बाल पुस्तक मेला, इटली; श्री इरू जू, अध्यक्ष, सियोल अंतरराष्ट्रीय पुस्तक मेला, दक्षिण कोरिया; श्री फेथी गुरसोयराक, परियोजना निदेशक, तुयाप मेला और प्रदर्शनी, तुर्की; सुश्री मारिया डे ला फे बोइक्स गार्सिया, उपाध्यक्ष (व्यापार विकास-दक्षिणी यूरोप और लैटिन अमेरिका), फ्रैंकफर्ट बुकमेस्से जीएमबीएच, जर्मनी; श्री राडोवन ऑयर, निदेशक, अंतरराष्ट्रीय पुस्तक मेला और साहित्यिक महोत्सव बुक वर्ल्ड, प्राग, चेक गणराज्य; और श्री ऑस्कर एकस्ट्रॉम, निदेशक, गोथेनबर्ग पुस्तक मेला, स्वीडन शामिल थे।

इस अवसर पर शिक्षा मंत्रालय के सचिव (उच्च शिक्षा) श्री विनीत जोशी; शिक्षा मंत्रालय की संयुक्त सचिव श्रीमती सौम्या गुप्ता; एनबीटी के निदेशक श्री युवराज मलिक; और एनबीटी के मुख्य संपादक एवं संयुक्त निदेशक श्री कुमार विक्रम भी उपस्थित थे।

'सेवा तीर्थ' परिकल्पना के सेवा संकल्प प्रस्ताव पर विचार-विमर्श

माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने 24 फरवरी, 2026 को नए प्रधानमंत्री कार्यालय 'सेवा तीर्थ' भवन में केंद्रीय मंत्रिमंडल की ऐतिहासिक प्रथम बैठक की अध्यक्षता की। सेवा तीर्थ की इस बैठक में यह संकल्प दोहराया गया कि यहाँ लिया हर निर्णय 140 करोड़ देशवासियों के प्रति सेवा-भाव से प्रेरित होगा और राष्ट्र-निर्माण के व्यापक लक्ष्य से जुड़ा होगा। इसी भावना के साथ, 02 मार्च, 2026 को राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत के अधिकारियों ने इस संकल्प प्रस्ताव को पढ़ा और उस पर विचार-विमर्श किया। न्यास ने सेवा, पारदर्शिता और जन-सहभागिता के सिद्धांतों के साथ अपने कार्यक्रमों, पहुँच और संस्थागत प्रथाओं को संरेखित करके 'सेवा तीर्थ' की परिकल्पना को संवेदनशील, जवाबदेह और नागरिक-केंद्रित शासन के वैश्विक उदाहरण में बदलने के प्रति अपनी प्रतिबद्धता की पुष्टि की।

'राइटिंग बियॉन्ड बॉर्डर्स' सत्र का आयोजन

25 फरवरी, 2026 को, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत ने नई दिल्ली में 'राइटिंग बियॉन्ड बॉर्डर्स' सत्र का आयोजन किया, जिसमें रूसी लेखक और अनुवादक इल्या लियोनिदोविच विनोग्रादोव ने डॉ. सोनू सैनी के साथ संवाद किया।

विनोग्रादोव ने रूस में 'महाभारत' और 'रामायण' जैसे भारतीय महाकाव्यों की निरंतर लोकप्रियता पर प्रकाश डाला और उनकी लोकप्रियता को साझा आध्यात्मिक और दार्शनिक परंपराओं से जोड़ा। साथ ही, उन्होंने एनबीटी-इंडिया के द्विभाषी प्रकाशन प्रयासों (30 से अधिक भारतीय कृतियों का रूसी में अनुवाद) की सराहना की और इस बात पर जोर दिया कि कृत्रिम बुद्धिमत्ता के उदय के बावजूद, मानवीय रचनात्मकता कहानी कहने की कला का केंद्र बनी हुई है।

प्रथम गोवा पुस्तक महोत्सव का आयोजन

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत द्वारा गोवा सरकार, समर्थ युवा फाउंडेशन और लोकमान्य सांस्कृतिक फाउंडेशन के सहयोग से 04 फरवरी से 08 फरवरी, 2026 तक पणजी स्थित डीबी बांदोडकर मैदान में पाँच दिवसीय प्रथम गोवा पुस्तक महोत्सव का आयोजन किया गया। पुस्तकों, विचारों और सांस्कृतिक अभिव्यक्तियों के इस समावेशी महोत्सव का उद्घाटन गोवा के माननीय मुख्यमंत्री डॉ. प्रमोद सावंत द्वारा किया गया।

अपने संबोधन में डॉ. प्रमोद सावंत ने गोवा पुस्तक महोत्सव को राज्य के लिए एक अत्यंत आवश्यक साहित्यिक पहल बताया और इसके आयोजन में एनबीटी के प्रयासों की सराहना की। उन्होंने गोवा के लोगों को राज्य के लोकप्रिय भोजन और संगीत समारोहों के समान उत्साह के साथ पुस्तक महोत्सव का स्वागत करने के लिए प्रोत्साहित किया और आशा व्यक्त की कि यह महोत्सव प्रतिवर्ष आयोजित किया जाएगा। पुस्तकों, सांस्कृतिक कार्यक्रमों और बाल-केंद्रित गतिविधियों के समृद्ध मिश्रण पर प्रकाश डालते हुए, डॉ. सावंत ने नागरिकों को सक्रिय रूप से भाग लेने और महोत्सव का अनुभव करने के लिए आमंत्रित किया।

इस अवसर पर, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास के अध्यक्ष प्रो. मिलिंद सुधाकर मराठे ने विचारशील और जागरूक नागरिकों के निर्माण में पुस्तकों के चिरस्थायी महत्व पर जोर दिया। विश्वप्रसिद्ध लेखक जॉर्ज आर.आर. मार्टिन को उद्धृत करते हुए, उन्होंने पढ़ने की परिवर्तनकारी शक्ति पर प्रकाश डाला और कहा कि एक विकसित भारत सुशिक्षित बुद्धिजीवियों पर आधारित है, इसलिए एक विकसित वाचक का विकास आवश्यक है।

गोवा पुस्तक महोत्सव के मुख्य संरक्षक और लोकमान्य सांस्कृतिक फाउंडेशन के अध्यक्ष डॉ. किरण ठाकुर ने कहा कि यह महोत्सव गोवा को एक विशिष्ट साहित्यिक पहचान प्रदान करेगा। उन्होंने 200 से अधिक प्रकाशकों की भागीदारी और अंग्रेजी, हिंदी, मराठी और कोंकणी भाषाओं में विभिन्न प्रकार की पुस्तकों का उल्लेख किया। उन्होंने विश्वास व्यक्त किया कि गोवा पुस्तक महोत्सव बौद्धिक आदान-प्रदान का एक जीवंत केंद्र बनेगा।

एनबीटी के निदेशक श्री युवराज मलिक ने कहा कि यह महोत्सव गोवा के सांस्कृतिक कैलेंडर में लंबे समय से चली आ रही कमी को पूरा करता है और आगंतुकों से आग्रह किया कि वे कम-से-कम एक ऐसी पुस्तक अपने साथ ले जाएँ, जो उनके जीवन को प्रेरित और प्रभावित कर सके।

इस अवसर पर उपस्थित अन्य गणमान्य व्यक्तियों में गोवा सरकार के शिक्षा सचिव श्री प्रसाद लोलायेकर, आईएएस; एनबीटी के न्यासी और पुणे पुस्तक मेले के मुख्य संयोजक श्री राजेश पांडे की गरिमामयी उपस्थिति रही।

उद्घाटन के बाद, डॉ. प्रमोद सावंत ने पुस्तक स्टॉलों का दौरा किया और विशेष प्रदर्शनियों का अवलोकन किया, जिनमें 'गोवा : प्रकाश और आनंद की कहानियाँ', 'वंदे मातरम्' के 150 वर्ष पूरे होने के उपलक्ष्य में आयोजित प्रदर्शनियाँ और सरदार वल्लभभाई पटेल की 150वीं जयंती के उपलक्ष्य में आयोजित प्रदर्शनियाँ शामिल थीं। इस अवसर पर गोवा की भावना, संस्कृति और प्राकृतिक सुंदरता को दर्शाने वाली एक विशेष रूप से तैयार की गई वीडियो प्रस्तुति का भी अनावरण किया गया।

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत ने 07 फरवरी, 2026 को गोवा पुस्तक महोत्सव के हिस्से के रूप में एक रणनीतिक प्रकाशक सम्मेलन का आयोजन किया। इस महत्वपूर्ण सम्मेलन में देशभर के 40 प्रकाशकों का एक समूह भारतीय साहित्यिक परिदृश्य के भीतर वर्तमान चुनौतियों और अवसरों पर चर्चा करने के लिए एक मंच पर आया। सत्र के दौरान, प्रतिभागियों ने मुख्य रूप से ISBN सुविधा और व्यापक प्रकाशक सहायता तंत्र के महत्वपूर्ण पहलुओं पर ध्यान केंद्रित किया। उन्होंने प्रकाशनों की दृश्यता के संबंध में गहन चर्चा की और यह पता लगाया कि प्रकाशक किस प्रकार व्यापक दर्शकों तक विभिन्न प्रकार की पुस्तकों को बढ़ावा देने में बेहतर सहायता कर सकते हैं। इसके अलावा, यह बैठक विभिन्न व्यावसायिक विकास पहलों के लिए एक मंच के रूप में भी कार्य करती है, जिनसे उद्योग मानकों को सुव्यवस्थित करने की उम्मीद है।

गोवा पुस्तक महोत्सव ने 100 से अधिक प्रकाशकों के 250 से अधिक पुस्तक स्टॉलों के साथ, अंग्रेजी, कोंकणी, मराठी और अन्य भारतीय भाषाओं में पुस्तकों का प्रदर्शन करते हुए, देशभर के प्रकाशकों, लेखकों, पाठकों, कलाकारों और संस्कृतिप्रेमियों को ऐसा मंच प्रदान किया, जिसने गोवा में एक स्थायी साहित्यिक परंपरा की नींव रखी।

अंडमान निकोबार पुस्तक मेले के दूसरे संस्करण का आयोजन

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत द्वारा अंडमान निकोबार प्रशासन के कला और संस्कृति विभाग के सहयोग से आईटीएफ ग्राउंड, श्री विजयपुरम में अंडमान निकोबार पुस्तक मेले के दूसरे संस्करण का आयोजन किया गया। 14 फरवरी से 22 फरवरी, 2026 तक चलने वाले इस साहित्यिक सम्मेलन का दक्षिण अंडमान जिले की उपायुक्त सुश्री पूर्वा गर्ग (आईएएस), कला एवं संस्कृति विभाग की सचिव सुश्री ज्योति कुमारी (आईएएस) और कला एवं संस्कृति विभाग की निदेशक सुश्री प्रियंका कुमारी; राष्ट्रीय पुस्तक न्यास के अध्यक्ष प्रो. मिलिंद सुधाकर मराठे की विशेष उपस्थिति में अंडमान निकोबार प्रशासन के मुख्य सचिव, डॉ. चंद्र भूषण कुमार, आईएएस द्वारा उद्घाटन किया गया। 40 से अधिक स्टॉलों में 30 से अधिक प्रकाशकों की भागीदारी, आदिवासी समुदायों की पुस्तकों सहित विविध प्रकाशनों का प्रदर्शन, साहित्यिक और बच्चों की गतिविधियों के साथ, यह आयोजन सभी उम्र के पाठकों को पुस्तकों और उनके पसंदीदा लेखकों से जुड़ने का सुअवसर प्रदान किया।

RNI NO. DELHIN / 2016 / 68219

मनोरंजन, ज्ञान और जिज्ञासा की अनूठी दुनिया!

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत के कला विषय पर कुछ उत्कृष्ट प्रकाशन

भारत की समकालीन कला : एक परिप्रेक्ष्य

प्राण नाथ मागो

अनु. : **सौमित्र मोहन**

प्रस्तुत पुस्तक में उस इतिहास को खोजने का प्रयास किया गया है, जिसके फलस्वरूप हमारे देश की कला में समसामयिकता अथवा आधुनिकता की चेतना फलीभूत हुई। साथ ही 19वीं शताब्दी के मध्य से वर्तमान काल तक की विभिन्न प्रवृत्तियों व दिशाओं के विकास का संक्षेप में वर्णन किया गया है।

पृ. 236; रु. 690.00

भारतीय कला और अंतरानुशासन

नर्मदा प्रसाद उपाध्याय

प्रस्तुत पुस्तक में संकलित विभिन्न आलेखों में भारतीय कला की मूल अवधारणा और उसके उस उदात्त स्वरूप को सामने लाने का प्रयास किया गया है, जिसकी आत्मा अन्य अनुशासनों से अंतरावलंबन की है, परस्पर संवाद और अंतर्संबंध की है।

पृ. 146; रु. 165.00

कलाओं की अंतर्दृष्टि

राजेश कुमार व्यास

कलाओं की हमारी दृष्टि पर विदेशी प्रभाव इस कदर है कि हम अपने मूल में प्रायः झाँक ही नहीं पाते हैं। ब्रिटिश काल के बाद कलाओं में पश्चिम के सिद्धांतों, अवधारणाओं में ही कलाएँ समझी और परखी जाती रही हैं। यह पुस्तक इस दृष्टि से महत्वपूर्ण है कि इसमें कलाओं की भारतीय अंतर्दृष्टि पर मौलिक चिंतन और मनन है।

पृ. 176; रु. 230.00

भारतीय चित्रकला

सी. शिवराममूर्ति

अनु. : **रश्मिकला अग्रवाल**

प्रस्तुत पुस्तक में प्रागैतिहासिक काल से लेकर आज तक की विभिन्न भारतीय चित्र शैलियों की प्रमुख विशेषताओं पर संक्षेप में प्रकाश डाला गया है।

पृ. 118; रु. 165.00

मिथिला लोकचित्र

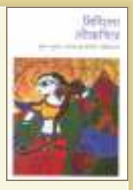

कृष्ण कुमार कश्यप, शशिबाला

विश्व भर में मिथिला या मधुबनी पेंटिंग के रूप में विख्यात उत्तर भारत की लोक चित्रकला तेजी से कला के क्षेत्र में अपना स्थान बनाती जा रही है। इस लोकचित्र शैली की अपनी खास विशिष्टता है। इस पुस्तक में मिथिला लोकचित्र के विविध आयामों पर प्रकाश डाला गया है।

पृ. 170; रु. 180.00

कुमाउनी लोककला : चौक पुराऊँ व देहरी सजाऊँ

करुणा पांडे

प्रस्तुत पुस्तक में लेखिका ने कुमाऊँ अंचल में होने वाले धार्मिक पर्वों एवं तीज-त्योहार के अवसर पर घर में चौक पूरना व एपण बनाने आदि लोक कलाओं का बड़ा ही जीवंत वर्णन किया है। ये कलाएँ भारतीय जनमानस में किस तरह से रस-बस गईं और इन कलाओं की क्या परंपरा और उपयोगिता रही आदि पर लेखिका ने बहुत ही बारीकी से प्रकाश डाला है।

पृ. 236; रु. 350.00

हिमाचल की लोककलाएँ और आस्थाएँ

मौलू राम ठाकुर

प्रस्तुत पुस्तक हिमाचल की लोककला और आस्थाओं से जहाँ परिचय कराती है, वहीं हमें हमारी परंपराओं से जुड़े रहने का बोध भी कराती है। इस कड़ी की एक महत्वपूर्ण पुस्तक।

पृ. 220; रु. 185.00

nbt.india
एकः सूते सकलम्

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत

शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार

5 इंस्टीट्यूशनल एरिया, वसंत कुंज, नई दिल्ली-110070

फोन : 011-35464713, 011-35464766 ● **ई-मेल :** nro.nbt@nic.in

वेबसाइट : www.nbtindia.gov.in